DOI:https://doi.org/10.30847/nilambara

शैलपुत्री

नीलाम्बरा

(संवेदना) जुलाई 2024

वर्ष : 4, अंक : 8

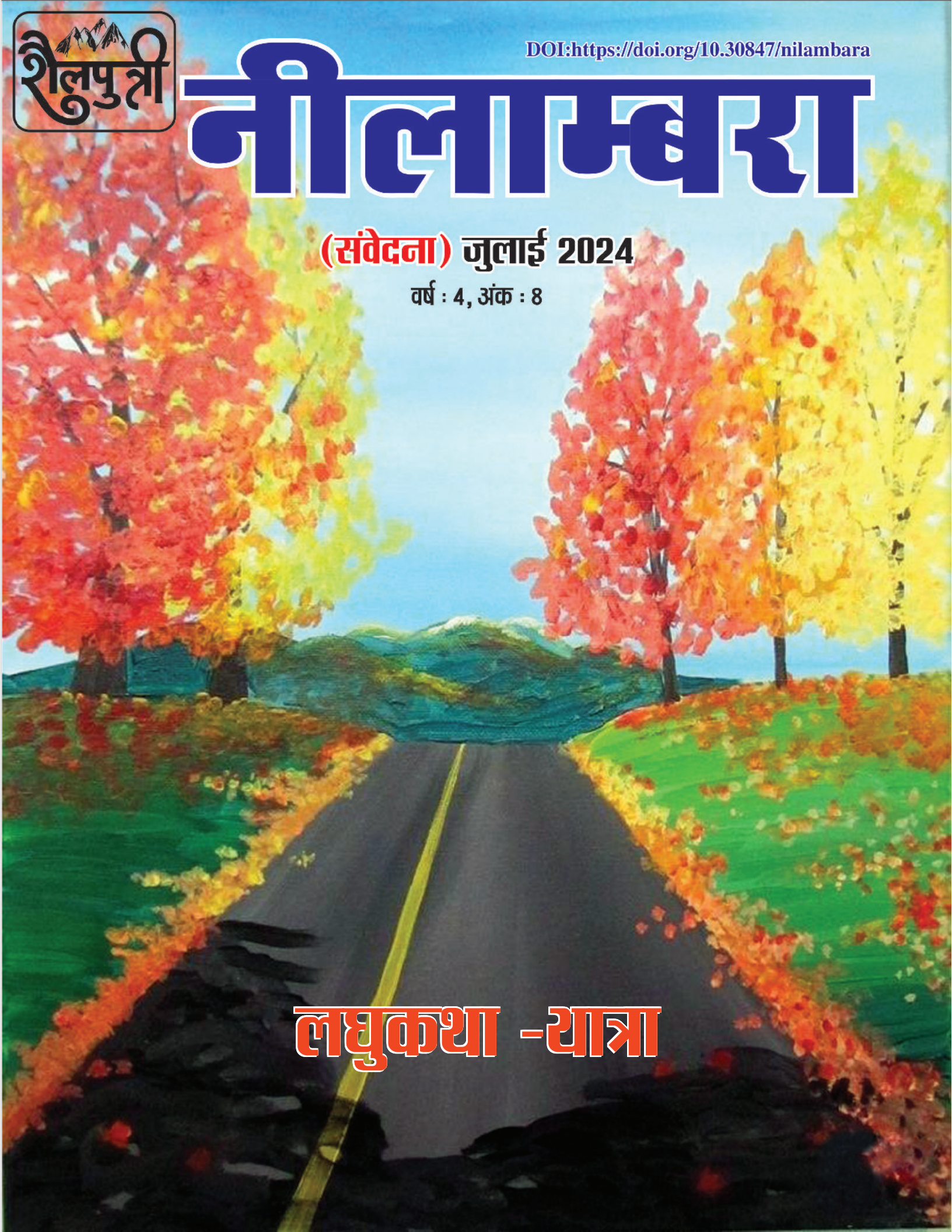

लघुकथा -यात्रा

राष्ट्रीय प्रार्थना

ओम् आ ब्रह्मन् ब्राह्मणो ब्रह्मवर्चसी जायतामा
राष्ट्रे राजन्यः शूरऽइषव्योऽतिव्याधी महारथो जायतां
दोग्ध्री धेनुर्वोढावानड्वानाशुः सप्तिः पुरन्धिर्योषा
जिष्णू रथेष्ठाः सभेयो युवास्य यजमानस्य वीरो जायतां
निकामे-निकामे नः पर्जन्यो वर्षतु
फलवत्यो नऽओषधयः पच्यन्तां योगक्षेमो नः कल्पताम् ॥
- यजुः 22।22

अर्थ- हे ब्रह्मन् ! इस राष्ट्र में ब्रह्मवर्चस से सम्पन्न ब्राह्मण तथा पराक्रमी, धनुर्विद्या में निपुण, शत्रुओं को जीतने वाले महारथी (महायोद्धा) क्षत्रिय उत्पन्न हों। शीघ्रगामी घोड़े, भारवाही बैल, दुग्ध देने वाली गौएँ नागरिकों को प्राप्त हों। यहाँ की स्त्रियाँ सर्वगुण सम्पन्न और शीलवती हों। रथी वीर पुरुष विजयशील हों। सभा में साधु स्वभाव वाले श्रेष्ठ वक्ता एवं वीर युवा हों। हम जब चाहें, तब (आवश्यकता के अनुरूप) जलवृष्टि हो। हमारा राष्ट्र फल, ओषधी एवं अन्न से समृद्ध हो और सदैव सकुशल-सुरक्षित रहे।

DOI:https://doi.org/10.30847/nilambara

नीलाम्बरा

(संवेदना) जुलाई-2024
वर्ष : 4, अंक : 8

नीलाम्बरा- मण्डल

परामर्श : रामेश्वर काम्बोज 'हिमांशु'
सम्पादक : डॉ. कविता भट्ट 'शैलपुत्री'
कला सम्पादक : डॉ. रत्ना वर्मा
विशेष सहयोगी : कृष्णा वर्मा

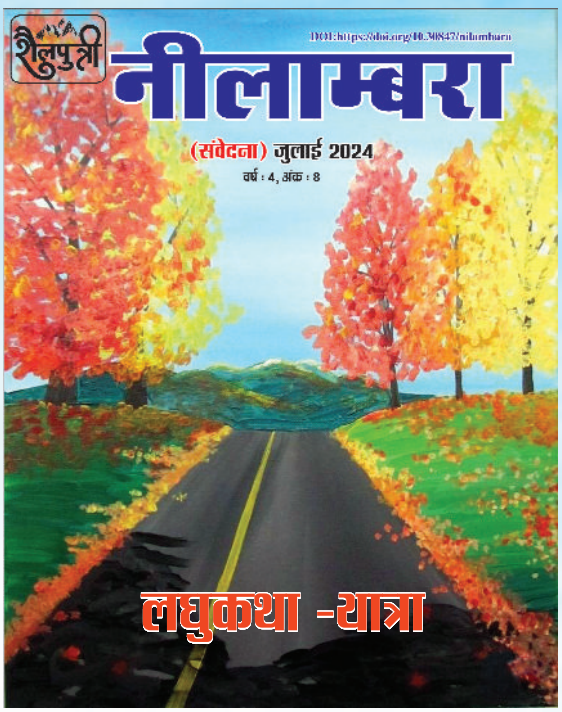

:- विशेष सूचना :-

1- किसी भी रचनाकार की रचना से संपादक / नीलाम्बरा-मंडल का सहमत होना आवश्यक नहीं है। रचनाओं की मौलिकता का पूर्णदायित्व रचनाकार का ही होगा।

2- लोकप्रिय वैश्विक पत्रिका नीलाम्बरा में देश- विदेश के रचनाकारों की रोचक साहित्यिक तथा सामयिक रचनाओं को निम्नलिखित लिंक को क्लिक करके ऑनलाइन पढ़ा जा सकता है-

http://nilambara.shailputri.in

3- नीलाम्बरा के अगले अंक के लिए रचनाएँ निम्न ई-मेल पर भेजी जा सकती हैं-

kavaypriya@gmail.com

प्रकाशक : शैलपुत्री फाउंडेशन
ग्लोबल सिनर्जेटिक फ़ाउण्डेशन, नई दिल्ली
E Mail: shailputrifoundation@gmail.com
वेबसाइट : www.shailputri.in

संवेदना : साहित्य की आत्मा

वन्दे मातरम् मित्रो!

आपको यह जानकर अतीव आनन्द होगा कि आपकी प्रिय 'नीलाम्बरा' का यह 'लघुकथा-यात्रा' अंक संवेदनापरक लघुकथाओं पर केन्द्रित है। उल्लेखनीय है कि आधुनिकता और भौतिक संसाधनों की प्रतिस्पर्धा ने मानव समाज को दिग्भ्रमित कर दिया है। आज हममें संवेदनशीलता बहुत ही कम हो गई है। दूसरों की संवेदनाओं को समझते हुए, मन से निर्णय और व्यवहार करने वाले व्यक्ति अनेकशः अपने को ठगा हुआ-सा अनुभव करते हैं; यह भी कटुसत्य है। आज की गलाकाट प्रतिस्पर्धा में क्षणिक स्वार्थ मानव मन पर आधिपत्य कर चुका है। उपर्युक्त तथ्यों के साथ ही यह भी उतना ही सच है कि संवेदनाएँ समाज की रीढ़ हैं। यदि संवेदनशीलता न हो, तो जीवन नीरस, अराजक, यान्त्रिक और निज स्वार्थ इत्यादि नकारात्मक अभिवृत्तियों की भेंट चढ़कर विनाश को ही आमन्त्रण होगा। ये संवेदनाएँ ही हैं; जो मानव में मानवीय गुणों का सवंर्धन करती हैं। इसीलिए भौतिकता के चरम पर स्थापित समाज में आज भी ऐसे व्यक्ति अपने पारिस्थितिकीय ताने-बाने को स्वस्थ बनाए रखने में समर्थ हैं।

साहित्य, संगीत और कला में भावविहीन व्यक्ति की कोई भूमिका हो ही नहीं सकती। संवेदना इन सभी की आत्मा है और यही चैतन्य की संवाहक भी है। साहित्य की विविध विधाओं में संवेदना का अपना स्थान है; किन्तु लघुकथा यदि संवेदना से उद्गमित और प्रवाहित हो, तो वह पुण्यसलिला के समान तारणहार हो जाती है। लघुकथा का आकार इतना छोटा होता है कि पाठक इसे कम से कम समय में पढ़कर आनन्दित तो होता ही है; साथ ही इस पाठशाला से कुछ नैतिक और भावनात्मक शिक्षा भी ग्रहण करता है। इससे समाज में रचनाधर्मिता, सक्रियता और सकारात्मक विचारों का प्रसार होता है। यह परोपकार, सहिष्णुता, उदारता और लोकसंग्रह इत्यादि का हेतु बनकर पथ प्रशस्त करती है।

संवेदना और मनोभावों से परिपूर्ण यह लघुकथा विशेषांक एक ऐसे पुष्पगुच्छ के समान है; जिसमें प्रत्येक रंग-रूप, सुगन्ध और औषधीय गुणों से परिपूर्ण पौधों के पुष्प और छोटी-छोटी शाखाओं का सम्मिलन है। मुझे आशा ही नहीं पूर्ण विश्वास है कि आप सभी पाठकगण इन रंगों और सुगन्धों का आनन्द तो लेंगे ही साथ ही इनसे मिलने वाली संवेगात्मक शिक्षाओं को ग्रहण करके समाज के सकारात्मक और मूल्यपरक उत्थान में सहयोग देंगे। यह उपक्रम चलता रहेगा; ऐसा 'नीलाम्बरा' का प्रयास है। आदरणीय श्री रामेश्वर काम्बोज 'हिमांशु' जी के स्वेदकणों से अभिसिंचित इस अंक में नीलाम्बरा मंडल के अन्य सभी साथियों का जो सहयोग प्राप्त हुआ, उनके प्रति कृतज्ञता का भाव है। साथ ही जिन ख्यातिलब्ध लघुकथाकारों की लघुकथाओं से यह अंक सुसज्जित है; वे सभी साधुवाद के पात्र हैं।

इस अंक को भी आप सभी आत्मीय पाठकों और स्नेहीजन का स्नेह और आशीर्वाद पूर्व की भाँति प्राप्त होगा; ऐसा पूर्ण विश्वास है। हमारे समाज में संवेदनशीलता के साथ मानवीय मूल्यों और मनोभावों के प्रति सम्मान का भाव परिपुष्ट होगा; ऐसा भी प्रगाढ़ विश्वास है।

डॉ .कविता भट्ट 'शैलपुत्री'

इस अंक के रचनाकार

4. डॉ. कविता भट्ट 'शैलपुत्री'
6. सुभाष नीरव
8. प्रेमचन्द, विष्णु प्रभाकर
   अंजू खरबन्दा
9. अंजु त्रिपाठी, अंजू निगम
10. अनिता मण्डा, अनिता ललित
11. अनिल मकरिया
12. अन्तरा करवडे
13. अरुण कुमार गौड़, अर्चना तिवारी
14. अर्चना राय, अशोक लव,
    अश्विनी कुमार आलोक
15. आचार्य जानकीवल्लभ शास्त्री,
    आनन्द हर्षुल, आरती झा
16. डॉ. उपमा शर्मा, डॉ. उमेश महादोषी
17. ऋता शेखर 'मधु'
18. उर्मिल कुमार थपलियाल, कमल चोपड़ा
19. कमला निखुर्पा, डॉ. कविता भट्ट
20. कस्तूरलाल तागरा, कुणाल शर्मा,
    कृष्णा वर्मा
21. ज्ञानदेव मुकेश, छवि निगम
22. ज्योति जैन, दीपाली ठाकुर
23. पवन शर्मा, प्रियंका गुप्ता
26. प्रेम गुप्ता मानी, बीना जोशी हर्षिता,
    भावना सक्सेना
27. मनोज सेवलकर, यशोधरा भटनागर,
    योगेन्द्र शर्मा
28. रत्नकुमार साँभरिया, रश्मि विभा त्रिपाठी
29. राधेश्याम भारतीय, डॉ. रामकुमार घोटड़,
    रामेश्वर काम्बोज 'हिमांशु'
32. विभा रश्मि
33. शशि पाधा, शिवचरण सरोहा
34. डॉ. शिवजी श्रीवास्तव, श्याम सुन्दर अग्रवाल
35. श्याम सुन्दर दीप्ति
36. श्याम सुन्दर व्यास, सतीशराज
    पुष्करणा, सत्या शर्मा, सविता मिश्रा
37. सारिका भूषण, सीमा वर्मा
38. सीमा सिंह
39. सुकेश साहनी
42. सुदर्शन रत्नाकर, सुधीर द्विवेदी
43. सुरेश सौरभ, डॉ. सुषमा गुप्ता, हबीब कैफ़ी
44. डॉ. हरदीप कौर सन्धु, हरभगवान
    चावला, हरनाम शर्मा
45. हरि जोशी, हरि मृदुल
46. डॉ .कविता भट्ट
47. रमेश गौतम
50. डॉ .कविता भट्ट
52. डॉ.कविता भट्ट
53. डॉ. उमेश महादोषी
55. सुभाष नीरव
56. डॉ. उपमा शर्मा
57. डॉ. सुरंगमा यादव
59. रामेश्वर काम्बोज 'हिमांशु'
62. डॉ. सुषमा गुप्ता
64. सुभाष नीरव, रामेश्वर काम्बोज 'हिमांशु',
    शिवचरण सरोहा, पवन जैन, सतीश राठी
65. समाचार

मेरी रचना-प्रक्रिया

(लघुकथा के संदर्भ में)

सुभाष नीरव

पिछली सदी के अस्सी के दशक के पूर्वार्द्ध में जब मैं रमेश बत्तरा के आग्रह पर लघुकथा लेखन में उतरा, तब तक मेरी कुछ कहानियाँ अखबारों के रविवारीय परिशिष्टों और पत्रिकाओं में छप चुकी थीं। पहली लघकुथा 'कमरा' जब सारिका के लघुकथा विशेषांक (1984) में छपी तो उसके बाद एक के बाद एक लघुकथाएँ मैं लिखता चला गया। न मैं लघुकथा का शास्त्र जानता था, न ही मुझे इसकी रचना-प्रक्रिया का कुछ पता था। बस एक जोश था, लिखने से पूर्व एक तीव्र दबाव महसूस करता और एक झोंक में मैं लघुकथा लिख डालता। लिखने के बाद भी उस पर कोई काम नहीं करता था। जो लिख दिया, बस लिख दिया। लिखने के बाद कई कई दिन तक उस रचना का नशा सिर चढ़कर बोलता। मन खुश रहता। सृजन का सुख महसूस करता। लिखी रचना को छपने के लिए भेजने की जल्दी भी रहती। लिखे जाने के दो-चार दिन के अंदर मैं उसे कहीं न कहीं छपने के लिए भेज ही देता। 'कमरा', 'दिहाड़ी', 'अपने क्षेत्र का दर्द', 'रंग-परिवर्तन', 'वॉकर', 'अपना अपना नशा', 'कड़वा अपवाद' आदि इसी शुरुआती दौर की लघुकथाएँ हैं जिन्हें मैंने एक झोंक में लिखा अर्थात एक खयाल, एक विचार या एक बात दिमाग में कौंधी नहीं कि बिना कोई अतिरिक्त चिंतन-मनन किए कागज पर उतार दीं। और उसी को फाइनल मानकर छपने भी भेज दिया और वे छपीं भी। 'लिखने' और 'भेजने' के बीच का अंतराल बहुत कम होता था। मजे की बात यह कि वे सब छप भी जाती थीं।

लेकिन जल्द ही यह 'तुरत-फुरत' का दौर ख़त्म हो गया। अब रचना लिखने से पहले और लिख लेने के बाद के समय में वृद्धि होने लगी। कागज पर रचना उतरने से पहले मुझे खूब छकाती। कई कई दिन मेरे अंदर चिंतन-मनन होता। उठते-बैठते, चलते-घूमते यह चिंतन प्रक्रिया चलती रहती। रचना लिख लेने के बाद भी उसको तराशने में, सही करने में, उसे अपनी पहली लघुकथाओं से अलग दिखाने की मशक्कत में हफ्ते और महीने लग जाते। कारण यह था कि हिन्दी के बड़े नाटककार और उपन्यासकार डॉ. लक्ष्मीनारायण लाल की कही एक बात मेरा पीछा न छोड़ती थी। उनका कहना था कि हर लेखक को अपने भीतर एक पाठक और एक संपादक भी बिठा लेना चाहिए। इन

दोनों की संतुष्टि से पहले रचना को छपने के लिए नहीं भेजना चाहिए। ऐसा करने के लिए रचना लिख लेने के बाद उसे इधर-उधर रख देना चाहिए और कुछ दिन के लिए बिलकुल भूल जाना चाहिए। ये कुछ दिन सप्ताह, दो सप्ताह और कई महीने भी हो सकते हैं। कुछ अंतराल के बाद जब लेखक उस रचना को पढ़ता है तो उसके ऊपर से तब तक लेखकीय नशा उतर चुका होता है, तब वह अपनी रचना को एक पाठक/संपादक के तौर पर पढ़ता है। तभी रचना की कमियों-खामियों, खूबियों का पता चलता है। यदि रचना भीतर बैठे संपादक-पाठक को संतुष्ट करती है तो ठीक, नहीं तो लेखक को उस पर दुबारा काम करना चाहिए।

और सच जानिए, इसके बाद मैंने आज तक जो भी लघुकथाएँ लिखीं, वह इसी रचना-प्रक्रिया की भट्टी में तपकर, पककर सामने आईं। कम से कम मेरे अंदर का लेखक, संपादक और पाठक संतुष्ट हुआ, बेशक कई लघुकथा लेखकों ने उस लघुकथा को लेकर किन्तु-परन्तु किए और आलोचना की। 'वाह मिट्टी' और 'वेश्या नहीं' ऐसी ही मेरी लघुकथाएँ हैं जिन्हें तमाम आलोचनाओं के बावजूद मैंने उनमें आज तक कोई हल्का-सा भी परिवर्तन नहीं किया।

हिन्दी के वरिष्ठ लेखक सुकेश साहनी कहते हैं कि लेखक के भीतर किसी रचना के कच्चे माल के पकने की प्रक्रिया ही लेखक की रचना-प्रक्रिया है। पंजाबी के वरिष्ठ लेखक डॉ. श्याम सुंदर दीप्ति अक्सर कहते हैं कि मैं नई लघुकथा पर काम कर रहा हूँ, यह नहीं कहते कि मैं नई लघुकथा लिखने जा रहा हूँ। यह 'काम करना' लेखक की वह रचना-प्रक्रिया ही है जिसमें से होकर रचना कागज पर अपना परिपक्व आकार लेती है।

2000 के दशक में इंटरनेट और ई-कॉमर्स प्लेटफार्म के आगमन ने क्रेडिट कार्ड के उपयोग के तरीके में एक क्रांति ला दी थी। क्रेडिट कार्ड हमारे वित्तीय जीवन का एक अभिन्न अंग बनने की एक तेज प्रक्रिया में था। मैं भारत सरकार के एक मंत्रालय में कार्यरत था। तब आज जैसी सख्त सिक्युरिटी सरकारी दफ्तरों में न थी। आए दिन खूबसूरत युवतियाँ और युवक बिल्डिंग में घुस जाते और रूम-टू-रूम अपने अपने बैंक के क्रेडिट कार्ड का प्रचार करते और क्रेडिट कार्ड बनवाने के लिए आग्रह करते। वे आकर्षक और लुभावने प्लैन बताते। बहुत सारे कर्मचारी, अधिकारी इस प्लास्टिक कार्ड की जादुई गिरफ्त में आ जाते। ये खूबसूरत युवतियाँ दफ्तरों में ही नहीं, डोर-टू-डोर घरों में भी जाती थीं और सुखद भविष्य के सपने बेचती थीं। हुआ यह कि एक बहुत बड़ा मध्यम और निम्न मध्यम

वर्ग इसके चंगुल में आ गया। वह एक नहीं, कई कई बैंकों के क्रेडिट कार्ड रखने लगा और घर-परिवार की अनाप-शनाप जरूरतों को इन्हीं के जरिये पूरा करने लगा। और जब कुछ वर्ष बाद इनकी कड़वी सच्चाई का उन्हें पता चला, तो बहुत देर हो चुकी थी। बहुत से लोग डिप्रेशन में चले गए। वे चादर से बाहर पैर फैलाने के अपने फ़ैसले पर पछता रहे थे। वे अपने आप को एक ऐसे मकड़जाल में फँसा हुआ महसूस करने लगे, जिसमें से निकल पाना अब उनके लिए असंभव-सा हो गया था।

यह विषय मुझे एक-डेढ़ वर्ष लगातार हांट करता रहा। सोचता और लिखता, लिखता और फाड़कर फेंक देता। एक-दो मित्रों से जिक्र किया तो उन्होंने कहा कि यह विषय बहुत भारी भरकम है और लघुकथा इसका बोझ वहन नहीं कर पाएगी। इस पर कुछ और लिखो। लेकिन मैं बजिद था। सोचता था, एक प्रयोग ही सही। सफल न हुआ, तो न सही। पर मुझे इस पर कुछ लिखना है, जो लघुकथा के आस पास हो। और मैंने बहुत चिंतन-मनन करके इसे 'मकड़ी' शीर्षक से लिखा। कुछ मित्रों को पढ़वाया। नया विषय था और वह भी लघुकथा में। उन्हें इसमें संशय था कि पाठक इसे स्वीकार कर पाएँगे। मित्र अशोक भाटिया ने कहा, 'ये क्रेडिट कार्ड क्या है? जब आपके बैंक खाते में पैसे नहीं होंगे तो आप कैसे खर्च करेंगे।' मुझे हैरानी हुई कि अशोक भाटिया जैसा लेखक 'क्रेडिट कार्ड' और 'डेबिट कार्ड' के कंसेप्ट को नहीं समझ पा रहा। मुझे उसे समझाना पड़ा, लथुकथा में 'डेबिट कार्ड' की नहीं, क्रेडिट कार्ड की बात की गई है। 'क्रेडिट कार्ड' एक ऐसा महाजन है जो प्लास्टिक कार्ड के रूप में आपकी जेब में पड़ा रहता है और आपको उकसाता रहता है कि पैसे की चिंता न करना। बाज़ार से कोई सामान लेना हो, या नकदी निकालनी हो, तुम्हें कहीं जाने की ज़रूरत नहीं। मैं हूँ न!

शुरुआत में कोशिश की गई कि 'मकड़ी' को नकारा जाए। लेकिन मेरा यह मानना रहा है कि यदि आपकी रचना में लेखकीय ईमानदारी है और आपके भीतर का लेखक, संपादक और पाठक संतुष्ट है तो एक दिन पाठक भी उसको स्वीकार करेगा। 'मकड़ी' के साथ ऐसा ही हुआ। बाद में लघुकथा जैसी छोटे कलेवर की विधा में मेरे इस प्रयोग को पाठकों ने सराहा। इस लघुकथा को लिखने के पीछे मेरी रचना-प्रक्रिया के जो पड़ाव रहे, उन्होंने इसे आकार देने और तराशने में बड़ा योगदान दिया। ये रचना-प्रक्रिया ही रही है जो मेरी दृष्टि को धुँधला होने से बचाती रही है और मुझे मेरे मंतव्य तक पहुँचाने में मेरी मदद करती रही है।

मकड़ी

अधिक बरस नहीं बीते जब बाज़ार ने खुद चलकर उसके द्वार पर दस्तक दी थी। चकाचौंध से भरपूर लुभावने बाज़ार को देखकर वह दंग रह गया था। अवश्य बाज़ार को कोई ग़लतफ़हमी हुई होगी, जो वह ग़लत जगह पर आ गया - उसने सोचा था। उसने बाज़ार को समझाने की कोशिश की थी कि यह कोई रुपये-पैसे वाले अमीर व्यक्ति का घर नहीं, बल्कि एक गरीब बाबू का घर है, जहाँ हर महीने बँधी-बँधाई तनख़्वाह आती है और बमुश्किल पूरा महीना खींच पाती है। इस पर बाज़ार ने हँसकर कहा था, ''आप अपने आप को इतना हीन क्यों समझते हैं? इस बाज़ार पर जितना रुपये-पैसों वाले अमीर लोगों का हक है, उतना ही आपका भी? हम जो आपके लिए लाए हैं, उससे अमीर-ग़रीब का फ़र्क ही ख़त्म हो जाएगा।'' बाज़ार ने जिस मोहित कर देने वाली मुस्कान में बात की थी, उसका असर इतनी तेज़ी से हुआ था कि वह बाज़ार की गिरफ़्त में आने से स्वयं को बचा न सका था।

अब उसकी जेब में सुनहरा कार्ड रहने लगा था। अकेले में उसे देख-देखकर वह मुग्ध होता रहता। धीरे-धीरे उसमें आत्म-विश्वास पैदा हुआ। जिन वातानुकूलित चमचमाती दुकानों में घुसने का उसके अन्दर साहस नहीं होता था, वह उनमें गर्दन ऊँची करके जाने लगा।

धीरे-धीरे घर का नक्शा बदलने लगा। सोफ़ा, फ्रिज़, रंगीन टी.वी., वाशिंग-मशीन आदि घर की शोभा बढ़ाने लगे। आस-पड़ोस और रिश्तेदारों में रुतबा बढ़ गया। घर में फ़ोन की घंटियाँ बजने लगीं। हाथ में मोबाइल आ गया। कुछ ही समय बाद बाज़ार फिर उसके द्वार पर था। इस बार बाज़ार पहले से अधिक लुभावने रूप में था। मुफ्त कार्ड, अधिक लिमिट, साथ में बीमा दो लाख का। जब चाहे वक़्त-बेवक़्त ज़रूरत पड़ने पर ए.टी.एम. से कैश। किसी महाजन, दोस्त-यार, रिश्तेदार के आगे हाथ फैलाने की ज़रूरत नहीं।

इसी बीच पत्नी भंयकर रूप से बीमार पड़ गई थी। डॉक्टर ने आपरेशन की सलाह दी थी और दस हज़ार का ख़र्चा बता दिया था। इतने रुपये कहाँ थे उसके पास? बँधे-बँधाए वेतन में से बमुश्किल गुज़ारा होता था। और अब तो बिलों का भुगतान भी हर माह करना पड़ता था। पर इलाज तो करवाना था। उसे चिंता सताने लगी थी। कैसे होगा? तभी, जेब में रखे कार्ड उछलने लगे थे, जैसे कह रहे हों- ''हम हैं न!'' धन्य हो इस बाज़ार का! न किसी के पीछे मारे-मारे घूमने की ज़रूरत, न गिड़गिड़ाने की। ए.टी.एम.से रुपया निकलवाकर उसने पत्नी का आपरेशन कराया था।

लेकिन, कुछ बरस पहले बहुत लुभावना लगने वाला बाज़ार अब उसे भयभीत करने लगा था। हर माह आने वाले बिलों का न्यूनतम चुकाने में ही उसकी आधी तनख़्वाह ख़त्म हो जाती थी। इधर बच्चे बड़े हो रहे थे, उनकी पढाई का खर्च बढ़ रहा था। हारी-बीमारी अलग थी। कोई चारा न देख, ऑफिस के बाद वह दो घंटे पार्ट टाइम करने लगा। पर इससे अधिक राहत न मिली। बिलों का न्यूनतम ही वह अदा कर पाता था। बकाया रकम और उस पर लगने वाले ब्याज ने उसका मानसिक चैन छीन लिया था। उसकी नींद गायब कर दी थी। रात में, बमुश्किल आँख लगती, तो सपने में जाले-ही-जाले दिखाई देते, जिनमें वह खुद को बुरी तरह फँसा हुआ पाता।

छुट्टी का दिन था और वह घर पर था। डोर-बेल बजी तो उसने उठकर दरवाज़ा खोला। एक सुन्दर-सी बाला फिर उसके सामने खड़ी थी, मोहक मुस्कान बिखेरती। उसने फटाक-से दरवाज़ा बन्द कर दिया। उसकी साँसें तेज़ हो गई थीं, जैसे बाहर कोई भयानक चीज़ देख ली हो। पत्नी ने पूछा, ''क्या बात है? इतना घबरा क्यों गए? बाहर कौन है?''

''मकड़ी!'' कहकर वह माथे का पसीना पोंछने लगा।●

धरोहर

प्रेमचन्द

राष्ट्र का सेवक

राष्ट्र के सेवक ने कहा, ''देश की मुक्ति का एक ही उपाय है और है: नीचों के साथ भाईचारे का सलूक, पतितों के साथ बराबरी का बर्ताव। दुनिया में सभी भाई हैं, कोई नीच नहीं, कोई ऊँच नहीं।''

दुनिया ने जय-जयकार की, ''कितनी विशाल दृष्टि है, कितना भावुक हदय।''

उसकी सुन्दर लड़की इन्दिरा ने सुना और चिन्ता के सागर में डूब गई।

राष्ट्र के सेवक ने नीची जाति के नौजवान को गले लगाया।

दुनिया ने कहा, ''यह फरिश्ता है, पैगम्बर है, राष्ट्र की नैया का खिवैया है।''

इन्दिरा ने देखा और उसका चेहरा चमकने लगा।

राष्ट्र का सेवक नीची जाति के नौजवान को मन्दिर में ले गया, देवता के दर्शन कराए और कहा, ''हमारा देवता गरीबी में है, जिल्लत में है, पस्ती में है! ''

दुनिया ने कहा, ''कैसे शुद्ध अन्त:करण का आदमी है! कैसा ज्ञानी!''

इन्दिरा राष्ट्र के सेवक के पास जाकर बोली, ''श्रद्धेय पिताजी, मैं मोहन से ब्याह करना चाहती हूँ।''

राष्ट्र के सेवक ने प्यार की नजरों से देखकर पूछा, ''मोहन कौन है?''

इन्दिरा ने उत्साह भरे स्वर में कहा, ''मोहन वही नौजवान है, जिसे आपने गले लगाया, जिसे आप मन्दिर में ले गए, जो सच्चा, बहादुर और नेक है।'' राष्ट्र के सेवक ने प्रलय की आँखों से उसकी ओर देखा और मुँह फेर लिया।●

विष्णु प्रभाकर

फर्क

उस दिन उसके मन में इच्छा हुई कि भारत और पाक के बीच की सीमा- रेखा को देखा जाए; जो कभी एक देश था, वह अब दो होकर कैसा लगता है? दो थे तो दोनों एक-दूसरे के प्रति शंकालु थे। दोनों ओर पहरा था। बीच में कुछ भूमि होती है जिस पर किसी का अधिकार नहीं होता। दोनों उस पर खड़े हो सकते हैं। वह वहीं खड़ा था, लेकिन अकेला नहीं था-पत्नी थी और थे अठारह सशस्त्र सैनिक और उनका कमाण्डर भी। दूसरे देश के सैनिकों के सामने वे उसे अकेला कैसे छोड़ सकते थे! इतना ही नहीं,कमाण्डर ने उसके कान में कहा, ''उधर के सैनिक आपको चाय के लिए बुला सकते हैं, जाइएगा नहीं। पता नहीं क्या हो जाए? आपकी पत्नी साथ में है और फिर कल हमने उनके छह तस्कर मार डाले थे।''

उसने उत्तर दिया, ''जी नहीं, मैं उधर कैसे जा सकता हूँ?'' और मन ही मन कहा-मुझे आप इतना मूर्ख कैसे समझते हैं? मैं इंसान हूँ, अपने-पराए में भेद करना जानता हूँ। इतना विवेक मुझमें है।

वह यह सब सोच ही रहा था कि सचमुच उधर के सैनिक वहाँ आ पहुँचे। रौबीले पठान थे। बड़े तपाक से हाथ मिलाया। उस दिन ईद थी। उसने उन्हें 'मुबारकबाद' कहा। बड़ी गरमजोशी के साथ एक बार फिर हाथ मिलाकर वे बोले, ''इधर तशरीफ लाइए। हम लोगों के साथ एक प्याला चाय पीजिए।''

इसका उत्तर उसके पास तैयार था। अत्यन्त विनम्रता से मुस्कराकर उसने कहा, ''बहुत-बहुत शुक्रिया। बड़ी खुशी होती आपके साथ बैठकर, लेकिन मुझे आज ही लौटना है और वक्त बहुत कम है। आज तो माफी चाहता हूँ।''

इसी प्रकार शिष्टाचार की कुछ बातें हुईं कि पाकिस्तान की ओर से कुलाँचें भरता हुआ बकरियों का एक दल, उनके पास से गुजरा और भारत की सीमा में दाखिल हो गया। एक-साथ सबने उनकी ओर देखा। एक क्षण बाद उसने पूछा, ''ये आपकी हैं?''

उनमें से एक सैनिक ने गहरी मुस्कराहट के साथ उत्तर दिया, ''जी हाँ, हमारी हैं! जानवर हैं, फ़र्क करना नहीं जानते।''●

लघुकथा-संवेदना

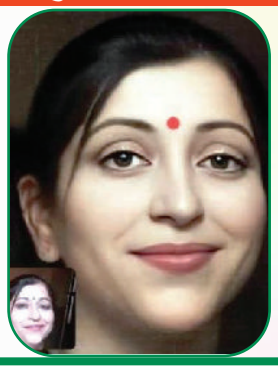

अंजू खरबन्दा

1. खिड़की

होशियारपुर से शादी का बुलावा आया था। शान-ए-पंजाब से जाना तय हुआ। सर्दी हल्की-हल्की दस्तक देने लगी थी, इसलिए सोचा-चलो इस बार एसी की बजाय जनरल कोच से सफ़र का आनन्द लिया जाए।

पहले बीवी बच्चे जनरल से जाने पर कुछ नाराज हुए पर, फिर थोड़ी ना-नुकुर के बाद मान गए। दिल्ली से लगभग आठ घंटे का सफ़र। सीट बुक थी, तो ज़्यादा परेशानी नहीं हुई। बच्चों ने झट खिड़की वाली सीट पर कब्जा कर लिया। सारा सामान सेट कर मैं और पत्नी बातों में मशगूल हो गए।

''दीदी! जम्मू की शॉल ले लो! बहुत बढ़िया है!''

रंग बिरंगी शॉलों का भारी गट्ठर उठाए एक साँवली-सलोनी कजरारी आँखों वाली युवती पत्नी से इसरार करने लगी।

''कितने की है?''

''अढाई सौ की!''

''इत्ती महँगी!''

''ज्यादा पीस लोगी, तो कम कर दूँगी!''

''मुझे दुकान खोलनी है क्या?''

''ले लो न! दोनों दीदियों के लिए और अपनी भाभियों के लिए!''

मैंने पत्नी को इशारा किया, तो उसने आँखें तरेरकर मुझे चुप रहने का संकेत दिया।

''अच्छा 5 पीस लूँ तो कितने के दोगी?''

''दो सौ रुपये पर पीस ले लेना दीदी!''

''न! सौ रुपये पर पीस!''

''दीदी! सौ तो बहुत कम है!''-कहते हुए उसका गला रुँध गया और उसकी कजरारी आँखें भर आईं।

''चल, न तेरी, न मेरी, डेढ़ सौ पर पीस!''

''अच्छा दीदी! ठीक है! लो, रंग पसंद कर लो!''

कुछ सोचते हुए उसने कहा और गट्ठर पत्नी के सामने सरका दिया।

पत्नी ने पाँच शॉलें अलग कर लीं तथा मेरी ओर देख रुपये देने का इशारा किया।

मैंने झट 750 रुपये निकालकर दे दिए।

उसके जाने के बाद रास्ते भर पत्नी की सुई इसी बात पर अटकी रही- ''वो एक बार में ही डेढ़ सौ में मान गई, गलती की थोड़ा तोल-मोल और करना था!''

और मेरी सुई... अतीत में जा अटकी थी।

बेटी को गोद में बिठा रेलगाड़ी की खिड़की से झाँकता मैं सोच रहा था-मेरे पिता भी रेलगाड़ी में सामान बेच जब थके हारे घर आते, तो उनकी आँखों में भी वही नमी होती थी, जो आज उस लड़की की आँखों में थी।

2- खाली पलंग

''क्या हुआ बहू? उदास क्यों हो?''

''माँजी, थोड़ी देर पहले माँ का फ़ोन आया था, वह बहुत परेशान लग रही थी।''

''सब ठीक तो है न!''

''भैया भाभी की रोज़ रोज की... कलह क्लेश से... वह ... व्यथित रहती हैं।'' अटकते हुए बहू ने बताया।

''तुम अपने भाई भाभी को समझाती क्यों नहीं! रोज-रोज़ के क्लेश से घर परिवार बच्चों पर भी बहुत बुरा असर पड़ता है।''

''मैंने कई बार भैया-भाभी को समझाया, दो चार दिन सब ठीक रहता है, उसके बाद वही सब! बूढ़ी माँ ये सब बर्दाश्त नहीं कर पाती, इसलिए बहुत परेशान रहती हैं।''

''तो तुम माँ को यहाँ लिवा लाओ!''

''यहाँ!''

''हाँ देखो न! तुम्हारे ससुर जी के जाने के बाद ये खाली पलंग मुझे खाने को दौड़ता है, वह आ जाएँगी तो हम दोनों समधिन बहनों का साथ हो जाएगा और समय भी अच्छा कट जाएगा।''

बहू ने सजल आँखों से सासू माँ की ओर देखा, उनकी आँखों में रिश्तों को जोड़ता सुकून का मज़बूत पुल दिखलाई पड़ा। ●

अंजु त्रिपाठी

इक्वैलिटी

ओय! गुनगुन ''अंदर जा मेरे दोस्त आने वाले हैं'' भाई ने डपटकर बहन से कहा

क्यूँय्य्य्यूँ, मैं कोई देखमुई हूँ क्या?

देखमुई क्या होता है?

जैसे छुईमुई वैसे देखमुई जो देखते ही मर जाए

अभी बहस मत कर तू जितना बोला है उतना कर।

दोस्तों ने खूब गपशप की। गुनगुन ने भाई को उसकी क्लास में पढ़ने वाली लड़की के बारे में कहते हुए सुना।

''यार! मानवी भी क्या धाँसू लड़की है। देखना तुम सब एक दिन मैं ही लेकर भागूँगा उसको''

दो दिन बाद...

दादा अंदर चले जाओ आप, मेरी सहेलियाँ आने वाली हैं।

''ओ! ओ! मैडम विक्टोरिया मैं तुम्हारी तरह कोई लड़की नहीं हूँ, जो डर के मारे अंदर छिपकर बैठ जाऊँ।अभी तो मैं यहीं रहूँगा, जब मेरा दिल करेगा तब बेशक चला जाऊँगा''

सहेलियों को मस्ती करते देख भाई भीतर चला गया। गुनगुन अपनी सहेलियों से कह रही थी-''सौरभ कितना कूल डूड है न देखना, उसको लेकर एक दिन मैं ही भागूँगी।''

यह बात भाई के कानों तक पहुँचाने के लिए वह और ज़ोर जोर से बोलने लगी।

सहेलियों के जाते ही भाई ने गुनगुन को गले लगाते हुए बहुत प्यार से कहा-''सुन! वह सौरभ वाली बात, क्या कह रही थी तू। तू ऐसा कुछ नहीं करेगी न? प्रॉमिस कर मुझसे। हाँ और मैं भी तुझसे प्रॉमिस करता हूँ, कभी किसी के लिए न ही ऐसा सोचूँगा और न ही बोलूँगा। ●

अंजू निगम

1.सबक ज़रूरी है

अवनी को सेक्टर-45 से द्वारका जाना था। उसने शेयर टैक्सी बुक करवाई। अवनी को इसमें दो फायदे नज़र आए। एक तो पैसे कम लगते और दूसरे उसे द्वारका जैसी जगह जो उसके लिये नई थी, शेयर टैक्सी ज़्यादा सुरक्षित लगी।

बस, समय की थोड़ी ज़्यादा खपत थी; क्योंकि और तीन सवारियों को पिक करना और उन्हें छोड़ने में समय लगना था। अवनी के पास खासा समय था। सो, उसे कोई दिक्कत नहीं हुई।

दो सवारी तो रास्ते में पड़ने वाले ऑफिस

एरिया में उतर गई। तीसरी सवारी को द्वारका एयरपोर्ट पर उतारकर वह अवनी को द्वारका छोड़ने वाला था।

यह तीसरी सवारी एक कमउम्र लड़की थी। उसकी फ़ोन पर लगातार हो रही बातचीत से अवनी को इतना अंदाज़ तो हो गया कि वह लापरवाह क़िस्म की है।

द्वारका एयरपोर्ट आ गया था। उस लड़की ने मोबाइल निकाला और यू.पी.आई स्कैन करके पेमेंट करने को बोला।

''मैडम, हम कैश पेमेंट लेते हैं। किसी भी टैक्सी में आपको कैश पेमेंट ही करना पड़ेगा।''

''भैया, प्लीज आप अपना गूगल पर नंबर बता दो। मैं उसमें पैसे भेज देती हूँ। मेरे पास अभी कैश बिल्कुल नहीं है और मेरी अभी फ्लाइट है। वैसे ही मुझे पंद्रह मिनट लेट हो गया है'' वह परेशान थी।

टैक्सी वाला नहीं माना। उल्टे अवनी से ही बोला, ''मैडम सॉरी, इनकी वज़ह से आपको देर हो रही है।''

वह लड़की भी अवनी की ओर मुड़ी, ''मैम, आप प्लीज इन्हें कैश दे देंगी। मैं आपके अकाउंट में पैसे ट्रांसफर कर दूँगी।''

''कर देती हूँ'' और ''कर दूँगी'' के अंतर को भाँपते हुए अवनी ने भी मदद के लिए मना कर दिया।

लड़की समझ गई और एयरपोर्ट के ए.टी.एम कांउटर पर कैश लेने के लिए भागी। उसने कैश लाकर ड्राइवर को दिया और अपना सामान लेकर एयरपोर्ट की ओर फिर दौड़ लगा दी।

वह अपनी फ्लाइट ले पाई या नहीं, अवनी को नहीं मालूम लेकिन उसे थोड़ा कैश हमेशा अपने पास रखने का कठोर सबक तो मिल ही गया होगा।

2-जीत

वह किताबें लेकर तो बैठी थी; पर दिमाग़ सुन्न था। माँ सख्त बीमार थी। किडनी में संक्रमण फैल रहा था। डॉक्टर ने डाइलिसिस के लिये कह दिया था। आज तक ऐसे ही कठिन वक़्त पर माँ ही सर पर हाथ फेरती थी मगर आज वह हाथ बेजान से बिस्तर पर पड़े थे।

अगले दिन ही तो प्री-बोर्ड शुरू थे। माँ कितना हौसला बढ़ाती थी! उसके पेपर ठीक नहीं हो रहे थे। उस दिन पापा ही स्कूल से उसे लेने आए थे। उसका उतरा चेहरा देख पापा सब समझ रहे थे।

''तुम्हें पता है जब मैं आठवीं में था, तुम्हारे बाबा गुजर गए थे। मैं बिल्कुल टूट गया था। पर फिर माँ ने एक दिन कठोर हो कहा - ''मर गए लोगों के साथ मरा नहीं जाता। अगर तुमने ही हिम्मत खो दी तो उनका सपना कौन पूरा करेगा। और फिर मैं दिमाग़ से जी उठा। मन वहीं बाबा के पास रखकर। आज बाबा जहाँ कहीं भी होंगे, गर्व कर रहे होंगे।''

उसने सुना और शांत रही।

''तुम्हारी माँ जब ठीक हो जाएगी, तो तुम उन्हें ये नहीं बताना चाहोगी कि उनकी बेटी उनके ऊपर ही गई है और उनकी तरह ही हर परिस्थिति से लड़कर जीत सकती है।''●

अनिता मण्डा

भगवान की पहचान

नीता जबसे मायके आई है, उसकी बेटी प्रज्ञा नानी से ही बतियाती जा रही है। उसकी तोतली बोली सुन नानी शहद-शहद हुई जा रही है। नानी-नातिन दोनों सहेलियाँ बनी एक-दूजे में ही खोई हुई हैं। नीता से बात करने की फ़ुरसत न बेटी को है, न माँ को।

उन दोनों को गलबहियाँ डाले बातें करते सुन नीता को बीते पाँच साल कैमरे की रील जैसे दिखने लगे हैं। जात-समुदाय से बाहर जैन समाज के लड़के से प्रेम-विवाह क्या किया कि नीता के माँ और मायका सब छूट गए। समाज के दबाव में माँ अजनबी और पत्थर दिल बन गई। उसे नई-नई गृहस्थी में माँ से मिलने वाले सहारे की कितनी अधिक ज़रूरत थी। साल भर में ही प्रज्ञा गोद में आ गई। प्यार-प्रेम के बीच जिम्मेदारियाँ भी अपनी जड़ें पसार रही थीं। छोटी बच्ची, ऑफ़िस, पति का ऑफ़िस सबके बीच वह कितनी उलझकर रह गई थी।

लेकिन समय की चोट से माँ की नाराज़गी की चट्टान धीरे-धीरे टूट ही गई।

आज प्रज्ञा का जन्मदिन है। सही अवसर देख नीता बेटी को लेकर आ गई। नानी ने प्रज्ञा को पूरे घर की सैर करवा दी। जन्मदिन की खुशी में नानी हलवा बनाकर पूजाघर में भगवान को भोग लगा रही थी। पीछे-पीछे प्रज्ञा भी पहुँच गई। आश्चर्यचकित होकर कहने लगी ''नानी आपके भगवान कपड़े पहनते हैं? हमारे भगवान तो ऐसे ही रहते हैं।''

नानी की हँसी का झरना अब रुकने का नाम नहीं ले रहा था। हँसते-हँसते नानी की आँखें भर आईं। नातिन को गले लगाते हुए बोली ''अब तुमसे कभी दूर नहीं रहूँगी, भगवान कपड़े पहनें या ऐसे ही रहें, मेरी भगवान तो तुम हो'' कोमल हथेलियों से प्रज्ञा ने नानी की आँखें पोंछ दी।●

अनिता ललित

राजा-बेटा

''क्या माँ! तुम सुबह से रात तक अकेली काम में लगी रहती हो। विकी को बोलो तुम्हारी मदद किया करे।'' सिमरन माँ से कहने लगी।

''अरे! क्यों तू उसके पीछे पड़ी है...मदद करे! मदद करे! क्या हो गया है तुझे? पढ़ाई कर

रहा है वह बेचारा। मैं कर रही हूँ न।'' सदा की तरह, माँ का अपना रटा-रटाया जवाब था।'' अच्छा ये बता! तू इस बार इतनी खीझी हुई क्यों है? जबसे ससुराल से आई है, बात-बात पर विकी से गुस्सा हो रही है। लगता है, लॉकडाउन का कुछ ज़्यादा ही असर हुआ है तुझपर। पहले तो कभी नहीं टोकती थी इतना। किसी बात पर झगड़ा हुआ है क्या उससे?'' मुस्कुराते हुए माँ ने पूछा।

''नहीं माँ! ऐसा कुछ नहीं है ...'' अनमनी-सी होकर सिमरन बोली, ''उसे भी काम करने की आदत होनी चाहिए न, तुम्हारा हाथ बँटाना चाहिए। अब इतना छोटा भी नहीं रहा।'' कहते हुए सिमरन कपड़े उठाने चली गई।

थोड़ी ही देर बाद विकी के कमरे से कुछ शोर की आवाज़ सुनाई दी। सिमरन विकी को डाँट रही थी कि वह जाकर चाय बनाए और विकी था कि चादर ताने पड़ा था। माँ ने बीच-बचाव करते हुए कहा, ''अरे क्या सिमु! सोने दे उसे! क्यों तू उसके साथ ज़बरदस्ती कर रही है? कुछ सालों में अपने आप समझ आ जाएगी। तेरी भाभी आएगी तो देखना, सब करेगा...'' माँ हँसते हुए बोली।

''नहीं करेगा! तब भी कुछ नहीं करेगा! राजा-बेटा है न तुम्हारा! बल्कि तब तो और भी नहीं करेगा! वह इसलिए, क्योंकि तुमने तो उससे कभी कुछ कराया नहीं! और अगर करेगा ... तो भी तुम्हें ही बुरा लगेगा कि देखो! पत्नी के लिए कैसे चाय बनाने पहुँच गया, कभी मुझे तो एक गिलास पानी तक नहीं पिलाया! तब तुम... हाँ माँ! तुम! तुम इसके और इसकी पत्नी के बीच में दीवार बनकर खड़ी हो जाओगी, उनके गले में एक काँटे की तरह फँस जाओगी और फिर... दोनों का जीना दूभर हो जाएगा; इसलिए बहुत ज़रूरी है कि इन लाटसाहब से अभी से काम कराओ। ...चलो! उठो विकी! ...'' विकी की चादर खींचते हुए सिमरन चीखती जा रही थी, मानों उसे कोई दौरा पड़ गया हो। उसकी साँस फूलने लगी थी।

और अवाक् खड़ी माँ, सिमरन के इस रूप में छिपे उसके गुस्से और दर्द को शिद्दत से महसूस कर पा रही थी। उसने हौले से सिमरन का हाथ थामा और गंभीर आवाज़ में बेटे से बोली, ''विकी! बहुत देर हो चुकी है! सूरज सिर पर चढ़ आया है। दस मिनट में उठकर बाहर आ जाना।''●

अनिल मकरिया

1. ऑनर किलिंग

भालचंद्र मिश्रा और सैयद शब्बीर ने आज वे दोनों वृक्ष कटवा दिए; क्योंकि वे पेड़ अब सरहदें तोड़ने लगे थे।

मिश्राजी और सैयद साहब के आँगन में लगे वृक्षों की डालियाँ जब भी दीवार रूपी साझा सरहद को पार करने लगतीं, तो दोनों घरों में से किसी एक घर से ज़ोर की आवाज़ आती।

''अपने झाड़ को सँभालो! उसके पत्ते हमारे आँगन में नहीं गिरने चाहिए।''

उस आवाज़ के तत्काल प्रभाव से वृक्ष का मालिक अपने पेड़ की दोषी डालियाँ छाँट डालता।

दोनों वृक्षों में से किसी का भी फल दीवार के उस तरफ़ न गिरा, न गिरने दिया गया, फिर भी गाहे-बगाहे दोनों वृक्षों की डालियाँ गलबहियाँ करने को तैयार हो ही जातीं, लेकिन अब तो प्यार की पींगे बढ़ाने वाले वे दोनों वृक्ष रहे ही नहीं!

रह गयी है, तो बस ज़मीन के नीचे न दिखने वाली आपस में गुँथी हुई उनकी जड़ें।

2-सोपान

याद है मुझे!

मैं अपने घर के आँगन में कंचे खेल रहा था और माँ हरबार की तरह घूँघट ओढ़े गुनगुनाते हुए बाजरा साफ़ कर रही थी और तभी पहलीबार मैंने उनकी गुनगुनाहट को ध्यान से सुनने की कोशिश की थी।

'' अरे... संसार संसार
जैसे तवा चूल्हे पर,
लगते हाथ को चटके
तब मिलती भाकर ...''

यक़ीनन यह मेरे गाँव का कोई लोकगीत तो नहीं है और न ही गाँव के किसी स्कूल की किताब की कोई कविता जिसे बच्चे अमूमन गाते रहते हैं!

किसी कविता की किताब से पढ़े होने का भी कोई सवाल ही नहीं था; क्योंकि मेरे परिवार में उस समय तक मेरे अलावा सभी अनपढ़ ही थे और ...और मैं भी तो सातवीं कक्षा में था-मतलब तभी ढंग से लिखना-पढ़ना सीखा भर ही था। अब मैं हरबार अपनी माँ के घूँघट से आती गुनगुनाहट या महिलाओं के बीच बोली गई माँ की कविताओं को एक बही में दर्ज करने लगा। अपनी उम्र के पचास साल पार करने के चंद महीने पहले ही जब मैंने वह कविताएँ अपने गुरु को दिखाईं, तो उनकी प्रतिक्रिया सुनकर मैं अवाक रह गया।

''सोपान... यह कविताएँ नहीं, बल्कि ख़ालिस सोना है और तुमने इन्हें सालों तक लोगों से छिपाकर एक गुनाह ही किया है।''

वाकई! लोगों का ही नहीं बल्कि अपनी माँ का भी गुनाहगार ही था मैं... मृत्यु शय्या पर थी मेरी माँ, जब मैं उन्हें उनकी कविताओं के राज्यभर में प्रसिद्ध होने की ख़बर सुना रहा था और उनकी आँखों से ख़ुशी के आँसू झर-झर बहे जा रहे थे।

''माँ! काश कि तुम पढ़ी-लिखी होती ... तो ...तो बड़ी होकर तुम क्या बनती?'' मुझे नहीं सूझ रहा था कि माँ की उपलब्धि पर हुए गर्व का बखान कैसे करूँ?

''एक कवयित्री!... जैसी अभी मैं हूँ, तुम्हारी वज़ह से... तुम्हारे शिक्षित होने की वज़ह से!''

अंतिम समय में मेरी माँ के चेहरे पर दर्द की लकीरें नहीं, बल्कि आत्मसम्मान का तेज था।●

अन्तरा करवडे

प्रेम

वह प्रेम दिवस का आयोजन था। लाल रंग के गुलाबों दिल के आकारों की विभिन्न वस्तुएँ। रंग बिरंगे और अपेक्षाकृत स्मार्ट परिधानों में युवक युवतियाँ अपने तईं इकरार-इजहार आदि कर रहे थे। कोई झगड़ रहा था तो किसी का दिल टूट रहा था। कोई बदले की भावना से गुस्सा हुआ जा रहा था, तो किसी के क़दम ज़मीन पर नहीं पड़ रहे थे।

मोनिका भी एक प्लांड़ इवेंट प्लेस पर अपने परफॉर्मेंस की बारी का इंतज़ार कर रही थी। उन्हीं के फ्रेंड्स क्लब ने ये आयोजन किया था। इसमें थी मौज मस्ती और नाच गाना। फूल कार्ड़ गिफ्ट्स चॉकलेट सभी कुछ उपलब्ध थे। उसे इंतज़ार था देव का। जिसने पिछले वैलेंटाइन पर ही उससे अपने प्रेम का इज़हार किया था। उसके बाद से साल भर दोनों यूँ ही मिलते आ रहे थे। उसे विश्वास था कि उसकी परफॉर्मेंस तक देव ज़रूर आ जाएगा।

अचानक बाहर कुछ शोर सुनाई दिया। सभी ने बाहर जाकर देखा। दो गुटों में झगड़ा हो रहा था। कारण जो भी कुछ रहा हो लेकिन पुलिस पहुँच चुकी थी। आतंक और तनाव का माहौल था। समझदार लड़कियों ने घर की राह पकड़ने में ही खैर समझी। लेकिन मोनिका वहाँ पहुँचती, तब तक देर हो चुकी थी। वह रास्ता बंद कर दिया गया था। सारा यातायात दूसरी ओर मोड़ दिया गया था।

मोनिका जहाँ देव का इंतज़ार कर रही थी, वहीं एक पकी उम्र की माँजी भी खड़ी थी। उसे देखते ही हठात् बोल पड़ी-''इतनी गड़बड़ में क्यों रात गए घर से निकली हो बेटी ?'' मोनिका ने उपेक्षापूर्ण दृष्टि से उन्हें देखा। उसे लगा कि इन माँजी को वह क्या समझाए कि आज प्रेम दिवस है। आज नहीं तो कब बाहर निकलना चाहिए। आपके ज़माने में नहीं थे ये वैलेंटाइन डे वगैरह। आप तो अपने पति की चाकरी करते हुए ही ज़िन्दगी गुजारिए। उसे वैसे भी इस दादी टाइप की औरत की बातों में कोई रुचि नहीं थी।

लेकिन वह स्वयं इस हादसे के कारण घबराई हुई-सी दूर बस देव को ही ढूँढ रही थी। उसे विश्वास था कि वह उसे इस मुसीबत से निकालने के लिये ज़रूर आएगा। सारे वाहन वहाँ से हटवा दिए गए थे। काफ़ी देर तक जोर-जोर से आवाजें आती रही। लाठी चार्ज होने लगा था।

पुलिस किसी को भी उस घेरे के अंदर से जाने देने को तैयार नहीं थी। तभी मोनिका ने देखा देव किसी पुलिसकर्मी से उलझ पड़ा था। वह उसे अंदर नहीं आने दे रहा था।'' ओह देव प्लीज मुझे निकालो यहाँ से।'' मोनिका चीख पड़ी थी, लेकिन देव कुछ भी नहीं कर पा रहा था। बार-बार अपने मोबाइल से किसी को फ़ोन करता जा रहा था। शायद उसने मोनिका के भाई को फ़ोन कर सारी स्थिति बता दी थी और स्वयं वहाँ से निकल गया था। मोनिका अविश्वास से उसे जाते हुए देखती रही। क्या यही उसका विश्वास था ?

तभी पास खड़ी माँजी खुशी से बोल पड़ी ''आ गए आप!'' मोनिका ने उनकी दृष्टि का पीछा किया। एक बूढ़े से सत्तर के लगभग के बुजुर्ग काफ़ी ऊँची रेलिंग को बड़ी मुश्किल से पार करते हुए माँजी तक पहुँचे।

दोनों घबराए हुए-से पहले तो एक दूसरे का हाथ पकड़े हाल चाल पूछते रहे।

''मुझे तो सामने के वर्माजी ने ख़बर की। उन्होंने कहा कि जल्दी से तुम्हें घर ले आऊँ। यहाँ कोई फसाद हो गया है। तुम्हें अकेले नहीं आने देंगे।'' वे काफ़ी घबराए हुए थे।

''लेकिन अब घबराने की ज़रूरत नहीं है। मैं आ गया हूँ ना। वह पुलिसवाले को देखा किसी को भी अंदर आने नहीं दे रहा था। सबसे झगड़ने पर ही तुला हुआ है। इसीलिए मैं उस रेलिंग को पार कर आ गया। यहाँ से बाहर जाने के लिए कोई पाबंदी नहीं है। चलो अब जल्दी से निकलते हैं।'' उनकी साँस फूलने लगी थी।

मोनिका कुछ कहती इससे पहले ही माँजी ने उसे भी अपने साथ लिया और बाहर निकलकर उसके भाई के हाथों में सुरक्षित सौंप दिया। मोनिका को लगा कि देव खुद भी तो यही कर सकता था!

वह सोचती रही। उन दोनों का वैलेंटाइन डे के बगैर का पका हुआ प्रेम विश्वास और आपसी समझ। ये सब उन थके चेहरों की आँखों में चमक रहा था जिसके आगे सारे युवा जोड़े फीके नज़र आ रहे थे।

उसे समझ आ गया था। यही सच्चा प्रेम था।

2-त्याग

माँ की मृत्यु के बाद तीसरा दिन था। घर की परंपरा के अनुसार, मृतक के वंशज उनकी स्मृति में अपनी प्रिय वस्तु का त्याग किया करते थे।

''मैं आज के बाद बैंगनी रंग नहीं पहनूँगा।'' बड़ा बेटा बोला।

वैसे भी जिस ऊँचे ओहदे पर वह था, उसे बैंगनी रंग शायद ही कभी पहनना पड़ता। फिर भी सभी ने तारीफें की।

मँझला कहाँ पीछे रहता, ''मैं ज़िंदगी भर गुड़ नहीं खाऊँगा।''

ये जानते हुए भी कि उसे गुड़ की एलर्जी है, पिता ने सांत्वना की साँस छोड़ी।

अब सबकी निगाहें छोटे पर थीं। वह स्तब्ध—सा माँ के चित्र को तके जा रहा था। तीनों बेटों की व्यस्तता और अपने काम के प्रति प्रतिबद्धता के चलते, माँ के अंतिम समय कोई नहीं पहुँच पाया था। सब कुछ जब पिता कर चुके, तब बेटों के चरण घर से लगे।

''मेरे तीन बेटे और एक पति, चारों के कंधों पर चढ़कर श्मशान जाऊँगी मैं।'' माँ की ये लाड़ भरी गर्वोक्ति कितनी ही बार सुनी थी उसने और आज उसका खोखलापन भी देख लिया।

''बोलिये समीर जी,'' पंडितजी की आवाज़ से उसकी तंद्रा भंग हुई।

''आप किस वस्तु का त्याग करेंगे अपनी माता की स्मृति में ?''

बिना सोचे वह बोल ही तो पड़ा था, ''पंडितजी, मैं अपने थोड़े से काम का त्याग करूँगा, थोड़ा समय बचाऊँगा और अपने पिताजी को अपने साथ ले जाऊँगा।''

और पिता ने लोक लाज त्यागकर बेटे की गोद में सिर दे दिया था।●

करवाचौथ का कड़वा सच

अरुण कुमार गौड़

अगले दिन की छुट्टी का आवेदन पत्र बॉस के सामने रखते हुए महिला कर्मचारी ने कारण स्पष्ट किया कि कल करवा चौथ है, वर्ष में एक ही ऐसा दिन है जब पति के साथ पूरे दिन रहने की इच्छा रहती है। बॉस ने मुस्कुराकर छुट्टी स्वीकृत कर दी।

महिला ने घर में बड़बड़ाते हुए प्रवेश किया- '' अगर बॉस करवा चौथ की छुट्टी भी नहीं दें तो ऐसी नौकरी किस काम की? इससे अच्छा मैं नौकरी ही ना करूँ।

पति ने हँसते हुए कहा- ''यह कोई गम्भीर मुद्दा नहीं है। शाम को चन्द्रमा देखने के बाद दोनों साथ ही खाना खाएँगे और फिर सारी रात्रि साथ ही तो हैं।''

करवा चौथ के दिन महिला नौकरी के लिये घर से निकली। पुरुष मित्र दो चौराहे छोड़कर आगे वाली गली में चार पहिया वाहन लिये हुए खड़ा मिल गया। दोनों किसी अनजान राह पर निकल पड़े। दिन-भर घूमते रहे, नाश्ता-खाना वगैरह चलता रहा और प्रीत की किश्ती में सवार दोनों को समय का भान ही नहीं रहा।

''अरे यार, मुझे घर जाना पड़ेगा। वह बेचारा मेरा मुँह देखकर खाना खाएगा'' अचानक महिला मित्र ने कहा।

पुरुष मित्र को भी उसके विवाहित होने का ख़्याल आया। वह बोला- यार

मेरी धर्मपत्नी भी मेरा मुँह देखकर ही खाना खाएगी।

और दोनों करवाचौथ का कड़वा सच प्रकट कर एक-दूसरे से विदा हो गए।●

अर्चना तिवारी

शोर

शोर से नमिता की नींद टूट गई। नमिता ने मोबाइल उठाकर देखा। डेढ़ बज रहा था।

सामने वाली बिल्डिंग में सुदूर देश-प्रदेश से आए कुछ लड़के रहते हैं। कुछ पढ़ने वाले हैं और कुछ नौकरीपेशा। ज़ोर की ऊँची आवाज़ से यह जाहिर था कि यह शोर उन्हीं का है।

''ओफ्फो ओह!-लोग सही कहते हैं कि ये निरे जंगली हैं-अपनी मौज-मस्ती में यह भी भूल जाते हैं कि इतनी रात गए दिनभर के थके-हारे कुछ लोग सो भी रहे होंगे-'' भुनभुनाते हुए नमिता ने करवट बदली।

''क्या हुआ निम्मो-नींद नहीं आ रही क्या?'' आकाश ने उनींदी आवाज़ में पूछा।

''इस शोर में भला कोई कैसे सो सकता है?''

''ऐसा करो-कान में रुई लगाओ और सो जाओ,'' नमिता ने अपना तकिया उठाकर बगल में सोए आकाश पर दे मारा। फिर उसी तकिए को कान पर रखकर सोने की कोशिश करने लगी।

शोर और तेज हो गया था। वह उठकर बालकनी में आ गई। उसने लाइट जलाई और नीचे देखने लगी।

वहाँ एक टैक्सी खड़ी थी, जिसमें लड़के बैठ रहे थे। दो लड़के मोटरसाइकिल पर थे। वे ही जोर-जोर से कुछ बोल रहे थे। पर वह नमिता को बिलकुल समझ नहीं आ रहा था, क्योंकि उनकी भाषा ही अलग थी। बालकनी की लाइट जलने पर उन्होंने एक उड़ती नज़र नमिता की ओर डाली और फिर अगले मिनट भर में टैक्सी तेजी से चल पड़ी। पीछे-पीछे मोटरसाइकिल भी।

गली में फिर रात की नीरवता पसर गई।

नमिता ने खुली हवा में चैन की साँस ली और आकर बिस्तर पर लेट गई।

करवट बदलते हुए उसे याद आया कि आकाश ने कहा था कि किसी-'' अच्छी-सी कॉलोनी'' में मकान ले लेते हैं, पर उसने ही तो कहा था कि वहाँ हम इंसानों की आवाज़ सुनने को तरस जाएँगे। पर यह भी कहाँ पता था कि यहाँ इन जंगलियों से पाला पड़ेगा।

सुबह उसकी नींद फिर हल्के शोर से ही खुली। उसने पर्दे की ओट से झाँका। दो लड़के आकाश से मुख़ातिब थे। वे टूटी-फूटी हिन्दी में बोल रहे थे, ''थोड़ा पैसा और चाहिए-आपका हेल्प मिल जाता, तो हम-,''

''हाँ-हाँ-मैं अभी आया-'' कहते हुए आकाश कमरे में आया।

''क्या हुआ-ये लड़के यहाँ- ?''

आकाश ने टी-शर्ट डाली और गाड़ी की चाभी लेकर कमरे से बाहर निकल गया। पीछे-पीछे नमिता भी कमरे से बाहर आ गई।

''आकाश-ये तुम सुबह-सुबह कहाँ जा रहे हो?''

''निम्मो-सामने वाले खन्ना जी को रात हार्ट अटैक आया था-ये लड़के उनको हॉस्पिटल ले गए थे, जहाँ उनकी बाइपास सर्जरी हो रही है-इनके सारे पैसे ख़त्म हो गए हैं-बाकी आकर बताता हूँ!''

आकाश एक साँस में बोलते हुए खटा-खट सीढ़ियाँ उतरने लगा।

दोनों लड़के भी उसके आगे सीढ़ियाँ उतर रहे थे।

तभी उनमें से एक सीढ़ियाँ उतरते हुए ठिठका और पलटकर नमिता को देखते हुए बोला, ''सॉरी-वो रात में शोर का आपको डिस्टर्ब हुआ!''●

अर्चना राय

अंकुरण

जैसे- तैसे करके, नाश्ता बनाकर पति और बेटे को खिलाकर, लंच पैक देकर विदा किया और वे निढाल सी कुर्सी पर बैठ गई। सुबह से ही उन्हें कमजोरी के साथ चक्कर महसूस हो रहे थे। शायद बी पी बढ़ा हुआ था। , किचन से लेकर बेडरूम तक बिखरे घर को व्यवस्थित करने की सोच उठी ही थीं कि शरीर ने साथ न देकर, उनके विचार पर विराम लगा दिया। दवा खाकर थोड़ी देर आराम करने की सोच, वे वहीं सोफे पर लेट गई।

दीवार पर टँगी महीने भर पहले शादी होकर विदा हुई, बेटी की बचपन की फोटो को देखकर, बरबस आँखें नम हो गईं। बेटी ने शादी के पहले, पूरे घर की जिम्मेदारी को कितनी अच्छी तरह से सँभाल रखा था। सोचते हुए उनकी आँख कब लग गई उन्हें पता ही नहीं चला।

''मॉम.. उठिए''- बेटे की आवाज सुन उनकी नींद टूटी और वे हड़बड़ाकर उठ बैठी।

''अरे! चार बज गए? तुम स्कूल से आ भी गए, मुझे तो पता ही नहीं चला।''

'' रिलेक्स. .. कोई बात नहीं मॉम।''

''अभी कुछ बनाकर देती हूँ, तुम्हें भूख लगी होगी।''- कहकर वे जल्दी से किचन में चली आई, और उन्होंने वहाँ जो देखा, वो हैरत से देखती रह गई। सिंक में पड़े गंदे बर्तन, धुले हुए, करीने से अपनी जगह पर रखे होने के साथ, पूरा साफ सुथरा किचन, खाने की खुशबू से महक रहा था। उन्होंने नोटिस किया कि किचन के साथ पूरा घर ही पूरी तरह व्यवस्थित था, साथ ही उन्होंने देखा कि बेटे के स्कूल से आने के बाद, हमेशा इधर- उधर बिखरे, रहने वाले जूते, कपड़े आदि अपनी सही जगह पर रखे थे। यह सब देखकर उन्हें सुखद आश्चर्य हुआ।

''मॉम ,...आज मैंने पहली बार मैगी बनाई है, चलो मिलकर खाते हैं, मेरी तरह आपको भी बहुत भूख लगी होगी।''- पीछे से आकर बेटे ने कहते हुए प्यार से उनके गले में बाहें डाल दीं।●

अशोक लव

अविश्वास

उस दिन सूरज बहुत थका-थका-सा उगा था। रमेश की तरह वह भी मानो रातभर सोया न था। रमेश पूछ-पूछकर हार गया था। पत्नी घूम-फिरकर एक ही उत्तर देती ''मुझे नहीं पता अस्पताल कैसे पहुँची, किसने पहुँचाया। होश आते ही तुम्हें फ़ोन करवा दिया था।''

वह बार-बार पूछता-

''तुम सच-सच क्यों नहीं बता देती? जो हो गया सो हो गया।''

''कुछ हुआ तो बताऊँ।''

''देखो! इसमें तुम्हारा कोई दोष नहीं है। अस्पताल ले जाने से पहले वे तुम्हें और कहाँ ले गए थे?''

''मैंने बताया न कि अँधेरे के कारण सामने पड़े पत्थर से ठोकर लगते ही मैं बेहोश हो गई थी। होश आया तो अस्पताल में थी।''

''डॉक्टर ने बताया था कि तीन युवक तुम्हें दाखिल करा गए थे। तुम सच-सच क्यों नहीं बता देती? मैं उस क़िस्म का आदमी नहीं हूँ, जैसा तुम सोच रही हो। आखिर तुम्हारा पति हूँ।''

''जब कुछ हुआ ही नहीं तो क्या बताऊँ? तुम मुझपर विश्वास क्यों नहीं करते?''

रात भर पति-पत्नी के मध्य अविश्वास तैरता रहा था।●

अश्विनी कुमार आलोक

भूकंपः उत्तरकथा

यह मज़ाक वैसा ही था, जैसे किसी सबसे छोटे बच्चे के साथ घर का कोई बड़ा आदमी करता है। बच्चे को अपनी गोद से उठाकर हवा में उछालता है। बच्चा जब ज़मीन पर गिरने के भय से चीखता है, तो हवा से लपककर अपनी गोद में स्नेहवश छुपा लेता है। सोचिए, कहीं बच्चा भूलवश आदमी की लपक में नहीं आए, तब?

धरती बीते तीन दिनों से उस इलाके के लोगों को ऐसे ही उछालने में लगी हुई थी। रात के ठीक बारह बजे, एक मिनट न पहले, न बाद में; लेकिन, कोई देख आया है! धरती का मन खुद डोलने को होता है, या उसे कोई डोलाता है, कौन जाने! वैज्ञानिकों का मत था कि भूकंप की तीव्रता रिएक्टर पैमाने पर बेहद न्यून रहती है; लेकिन मैं जिस गाँव का क़िस्सा कहने बैठा हूँ, उसका डर किसी भी चेहरे पर न्यून नहीं था।

चौथे दिन शाम ढलने के साथ ही लोग घरों में ताले लगाकर समूचे परिवार के साथ खेत में आ बैठे। न नींद, न संयत देह। घर के बाहर ही भोजन बना और लोगों ने खा भी लिया। ज़मीन पर बिछी चटाइयों पर बच्चों को नींद आ गई, लेकिन बड़ों की निगाहें अपने घरों की पहरेदारी में खड़ी रहीं। घरों से लोग भले निकल आए , सारा सामान तो घरों में ही पड़ा था। चोर ऐसे अवसरों को निकलने नहीं देते। सावधानी ज़रूरी थी। पंडितजी घर में बूढ़ी माँ को छोड़ आए थे, पुत्रवधू की राय थी कि क़रीब नब्बे बरस की दादी एकाध बार खाँस देंगी, तो चोर हिम्मत न करेंगे। अब वैसे भी दादी को कौन—सा सुख देखना शेष रहा।

रात बीत रही थी, पंडितजी को माँ का ख़्याल बेचैन करने लगा। बूढ़ी माँ अकेले उठकर शौचादि को नहीं जा सकतीं, भूखी-प्यासी किस हाल में होंगी! पंडितजी अचानक कटोरे में दूध-रोटी लेकर बढ़ चले, किसी के रोके न रुके। माँ बेसुध पड़ी थीं, कपड़ों से गंदी बास आ रही थी। पंडितजी ने कटोरा एक ओर रखा और माँ के कपड़े बदलने लगे। माँ कलेजे से अवश होकर चिपकी हुई थीं। फिर पंडितजी ने माँ के मुँह में दूध-रोटी बढ़ाई ही थी कि अपनी कलाई घड़ी देखी, बारह बजने को थे। पर माँ को निवाले चबाने की जल्दबाजी नहीं थी। पंडितजी ने महसूस किया कि तलवे के पास कोई गड्ढा पड़ गया, लेकिन वे न हिले। माँ ने सिर उठाया: ''ज़मीन तो हमेशा डोलती है, घूमती है बेटा! उसे तो ऊपर का भार सँभाले रहता है। तुम्हारे हाथ को जैसे कटोरे ने डोलने से बचाया, तुम्हारी देह कहाँ डोली!''

माँ कैसे बोल गई, पता नहीं। लेकिन पंडितजी को अपने हाथों के कटोरे की स्थिरता ने चौंका दिया। पंडितजी स्तंभित खड़े रहे। ठीक बारह बजे धरती फिर डोली थी।●

आचार्य जानकीवल्लभ शास्त्री

करमजली

राधेश्याम शुक्ल पाँच बेटियों के पिता हैं। पंडिताई का धन्धा करते हैं। किसी तरह घर का गुज़ारा चलता है। राधे जी की पत्नी बेटियों की शादी हेतु जब-जब टोकती तो कहते, पंडिताइन देखती रहो बेटियों की शादी अच्छे-अच्छे घरों में, वह धूम-धाम से करूँगा कि लोग देखते रह जाएँगे।

'ये सुनते-सुनते तो बड़ी बेटी पैंतीस पूरे कर रही है।'

'चिन्ता न करो। सब काम अपने समय पर होता है, इनकी शादियाँ भी होंगी।'

पंडिताइन मन-मसोस कर रह जाती। जब दिल ज़्यादा दुखता तो सिसक पड़ती।

बेटियों की शादी न हो पाने से एक दिन घर के कोने में पंडिताइन दुखी-उदास पड़ी थी कि पड़ोस की चौधराइन ने कहा, सुना पंडिताइन! श्रीवास्तव की बेटी दुसाध फौजदार के बेटे के साथ मंदिर में शादी करके ससुराल चली गई।

राधे के कान में जब यह बात पड़ी, 'करमजली थी वह लड़की, जो किसी ग़ैर जात के लड़के से शादी करके चली गई। देखना मैं क्या शान से अपनी बेटियों की शादी करूँगा।'

यह सुनकर लड़की की माँ कहती है, 'करमजली वह नहीं, यह हैं। यह भी किसी को पसंद कर-कराकर शादी कर लेती, तो बाकी चार का रास्ता भी खुल जाता। तुम सपने देखते रहो। दिन में खुली आँखों देखे सपने भी कभी पूरे होते हैं? अपनी औक़ात भी देखनी चाहिए।'

पत्नी के मुँह सच सुनकर आज पहली बार राधे भी रो पड़े और निकल पड़े अपनी औक़ात के अनुसार लड़का देखने।

(हुंकार, जनवरी 1945)●

आनन्द हर्षुल

बेटी का क़द

माँ की बगल में खड़ी होकर बेटी ने कहा-देखो मैं तुमसे बड़ी हूँ, पिता देख रहा था-पहली बार, अपनी बेटी का, माँ से बड़ी हो जाना-कद में माँ मुस्करा रही थी, माँ की मुस्कुराहट ने, हल्के से अपनी एड़ी उठाई-इस तरह कि किसी को न दिखे-एड़ी का उठना, बेटी ने कहा-ये, ऐसा नहीं चलेगा, माँ फिर अपनी बेटी से छोटी हो गई-कद में मुस्कुराहट ने दबा ली थी-अपनी एड़ी।

बेटी, पिता के पास आई देखूँ आपसे कितनी छोटी हूँ...पिता ने अपने घुटने मोड़े, बेटी का कद पिता से बड़ा हो गया। बेटी हँसी और उसने घुटने मोड़े पिता और पुत्री दोनों एक दूसरे से छोटा होना चाह रहे थे। वे जब छोटा होते-होते थक गए तो ज़मीन पर बैठे हँसते दिखे। उनकी हँसी में माँ की हँसी भी घुली-मिली थी।

घर के उस कोने में, जहाँ वे थे एक दूसरे से कद का खेल खेलते-खेलते वहीं फ़र्श पर ढेर से फूल खिल आए थे अचानक, बिना मिट्टी और पानी के-सुंदर फूल।●

प्यार

आरती झा

झील के शान्त नीले जल को एकटक देखना अच्छा लग रहा था। चप्पू की आवाज़ सुरीली थी। बोटवाला लड़का इक्कीस-बाईस साल का होगा। गहरी भूरी आँखें ढूँढती हुई-सी।

''क्या करते हो बोट चलाने के अलावा?'' मैंने पूछा।

''पढ़ाई! कामर्स पढ़ रहा हूँ। यह पार्ट टाइम जॉब है मेरा। अभी पीक सीजन है न! टूरिस्टों की भीड़ रहती है, सो अपनी अच्छी कमाई हो जाती है।''

''बोट क्या तुम्हारी अपनी है?''

''नहीं! मलिक की है। अपनी कहाँ से।?'' थोड़ी देर चुप वह कुछ सोचता रहा फिर बोला, ''लकड़ी महँगी है बोट...तीस-चालीस हज़ार रुपये पड़ जाते हैं एक अच्छी और मजबूत बोट बनाने में।''

''आप वह पहाड़ी देख रही हैं न...वह स्यूसाइडल प्वाइंट है।''

उसकी बात सुन मेरा सर चकरा गया।

''क्या? क्या कहा?'' मैंने घोर आश्चर्य के साथ उसे गहरी नजरों से देखा।

''हाँ सच! वहाँ से लोग कूदकर जान दे देते हैं। अभी कल ही की बात है...एक लड़की वहाँ से कूदकर मर गई। साथ में लड़का भी कूदनेवाला था, मगर कूद नहीं पाया...अब वह जेल में बन्द है।'' उसके चेहरे पर उदासी छा गई। किसी दूसरी दुनिया में वह खो-सा गया। मैं कुछ कहना चाहती थी कि तभी जैसे किसी स्वप्न से जागकर वह बोलने लगा, ''बड़ा प्यार करता था लड़की से...साथ-साथ जीने-मरने की कसमें खाया करता था। मगर जाने क्यों हिम्मत नहीं कर पाया कूदने की।''

मैंने कुरेदा, ''क्या कहना चाहते हो, प्यार में कमी थी उसके? प्यार क्या है तुम्हारी नज़र में?''

''उसकी गहरी भूरी आँखें बिल्कुल स्थिर थीं, झील की तरह। कुछ दिखाता हूँ आपको मैं।''

झील के उस तरफ़ मंदिर था। पूरा तो नहीं, बस एक हिस्सा दिखाई दे रहा था।

''कैसे देखूँ? हलचल हो रही है चप्पू से...पानी बिखर रहा है।।''

''ठहरिए! चप्पू चलाना बन्द करता हूँ अब देखिए...दिखा?''

''हाँ! कुछ हिस्सा दिख तो रहा है, धुँधला-सा।'' मैंने कहा।

वह बोला, ''ऐसा ही है प्यार भी। हलचलों के बीच स्थिर-सी कोई चीज...कुछ देखा और बहुत कुछ अनदेखा।''●

डॉ. उपमा शर्मा

खूबसूरती

ऑपरेशन थियेटर में चिकित्सक की आवाज़ कानों में पड़ने पर काजल ने धीरे से आँखें खोलीं। चिकित्सक का हाथ उसके पेट पर था। वह टाँके लगा रही थी। साथ ही परिचारिका को कुछ हिदायत देती जा रही थी।

दर्द की तीव्र लहर से काजल की आँखों में आँसू आ रहे थे। उसे समझ नहीं आ रहा था कौन—सा दर्द ज़्यादा है? शरीर पर लगे कट का या अपनी खूबसूरती ख़त्म होने का। सहेलियों की बातें रह-रहकर याद आ रहीं थीं।

''अब तेरे पेट पर बर्थ मार्क बन जाएँगे।''

''तू अब सुंदर नहीं रही।''

''देख तो मोटापे से सारी खूबसूरती का सत्यानाश कर लिया।''

'' यामिनी तेरे सामने कहीं नहीं ठहरती थी। अब तेरे सारे प्रपोजल उसके पास हैं। तूने खुद ही अपने पैरों पर कुल्हाड़ी मारी है।''

''बेडोल शरीर, बढ़े हुए पेट के साथ कौन तुझसे मॉडलिंग कराएगा। अरी मूर्ख! बच्चा ही चाहिए था, सरोगेसी से कर लेती।''

''शीर्ष पर आ सब कुछ छूटने का दर्द तुझे बाद में समझ आएगा काजल।''

''देखना, सुंदर मॉडल देखकर एक दिन राज भी तुझे भूल जाएगा।''

काजल की आँखों के आँसू कुछ दर्द की शिद्दत और कुछ सहेलियों के आने वाले दिनों के खाके से और तेज़ हो गए। बच्चा तेज़ आवाज़ में रो रहा था।

''क्या हुआ काजल? दर्द बहुत ज़्यादा हो रहा है? अभी तुझे पेन किलर के इंजेक्शन लगवाती हूँ।''

''डॉक्टर! क्या मैं अब सुंदर नहीं रही।'' काजल के आँसू रुक ही नहीं रहे थे।

''किसने कहा?''

काजल के आँसुओं में और तेजी आ गई। डॉक्टर ने स्टिच लगाना छोड़ उस नर्स को इशारा किया, जो बच्चे को चुप कराने की कोशिश में थी। नर्स ने मुस्कराकर बच्चे को काजल के सीने पर लिटा दिया।

बच्चा पहचानी हुई धड़कनों को सुन चुप हो गया।

अपने बच्चे को अपने सीने से लगाए वह खुद को दुनिया की अब सबसे खूबसूरत औरत लगी।●

डॉ. उमेश महादोषी

चौपाल

''दादा जी, आप तीन दिन पहले ही तो आए थे और आज गाँव वापस भी जाने लगे। आप हमेशा हमारे पास क्यों नहीं रहते?'' गाँव वापस जाने की तैयारी करते दादाजी के सामने सोनू मचल गया था।

''बेटा, यहाँ पूरे दिन मुझे अकेले रहना पड़ता है... तेरे मम्मी-पापा दोनों दफ्तर चले जाते हैं, तू भी स्कूल चला जाता है... इसलिए मैं बोर हो जाता हूँ।''

''अकेले तो आप गाँव में भी रहते हैं। वहाँ भी तो चाचू अपने काम पर चले जाते हैं, चीनू भी स्कूल जाती है; चाची घर के काम में लगी रहती हैं, दादी जी भी अब नहीं रहीं। दिन में तो

वहाँ भी आपसे बातें करने को कोई नहीं है...!''

''हाँ, ये बात तो बेटा बिल्कुल सही है। पर गाँव में चौपाल पर मेरा दिन खूब मजे से कटता है।''

''ये चौपाल क्या है, दादा जी?''

''चौपाल... चौपाल... गाँव वाले घर के बाहरी हिस्से में बना चबूतरा और बरामदा तो तुमने देखा ही है, वहाँ मेरे बहुत सारे अपनी उम्र के लोग, जो खाली होते हैं, आकर बैठते और गपशप करते हैं। कुछ लोग हमसे अपनी समस्याओं पर सलाह-मशविरा करने भी आते हैं। उसी को चौपाल कहते हैं।''

''पर ऐसी चौपाल तो इन्टरनेट पर भी होती है, इसके लिए आपको गाँव जाने की क्या ज़रूरत है? आप मेरे कम्प्यूटर की हेल्प से फ़ेसबुक ज्वाइन कर सकते हो... आइए, मैं आपको दिखाता हूँ।'' दादा जी का हाथ पकड़कर प्यार से सोनू उन्हें अपने कमरे में खींच ले गया। वहाँ उसने कंप्यूटर ऑन किया और ब्राडबैंड कनेक्ट करके फ़ेसबुक खोल उन्हें दिखाते हुए बताने लगा-कैसे उसके दोस्त फ़ेसबुक पर उसे ज्वाइन करते हैं, फिर आपसी बातें, गपशप आदि फ़ेसबुक पर डालते हैं और एक-दूसरे को रिप्लाई करते हैं। जो ऑन लाइन होते हैं, वे हाथ के हाथ कमेण्ट देते हैं, जो ऑफ लाइन होते हैं, वे बाद में अपने कमेन्ट भेजते हैं। दादा जी इतने पढ़े-लिखे तो थे ही कि थोड़ा-बहुत समझ सकें। सोनू ने उन्हें चैट के बारे में भी बताया।

उन्हें आनन्द आता देख सोनू कहने लगा, ''दादाजी मैं आपका एकाउन्ट भी फ़ेसबुक पर बना देता हूँ, आप दिन में मेरे स्कूल से आने तक और जब भी आप अकेले हों, इस पर बिजी रह सकते हो।''

''लेकिन मेरे सारे दोस्त तो गाँव में हैं और उनके पास न तो कम्प्यूटर है, न इन्टरनेट। फिर मैं कैसे और किससे बतियाऊँगा?''

''आप बहुत सारे नए-नए दोस्त बना सकते हो दादा जी। आप तो टीचर रहे हो, नेट पर बहुत सारे टीचर्स भी मिल जाएँगे, उनसे अपने विषय पर बातें कर सकोगे। रही बात गाँव के दोस्तों की, सो उनसे मिलने तो महीने में एक-दो बार गाँव हो आया करो और जो कम्प्यूटर खरीद सकते हों, उनसे कहना वे भी आपकी तरह फ़ेसबुक ज्वाइन कर लें। वैसे अब तो स्मार्ट मोबाइल फ़ोन भी आ गए हैं, उन पर भी फ़ेसबुक चलती है।''

''पर मुझे तो ठीक से कम्प्यूटर और स्मार्ट फ़ोन चलाना भी नहीं आता?''

''वो तो दादा जी, दो-तीन दिन में मैं सिखा दूँगा।''

''लगता है पापा जी, सोनू आपको परमानेन्टली रहने के लिए तैयार करके ही रहेगा।'' ये सोनू की मम्मी रश्मि थी, जो पीछे से पूरा प्रकरण देख रही थी।

''लगता तो यही है, बहू!''

'' इसका मतलब, आप मान गए दादा जी? कहते हुए सोनू दादा जी के गले में बाँहें डालकर लटक गया और उसने दादा जी के चेहरे पर चुम्बनों की बौछार कर दी।●

ऋता शेखर 'मधु'

1- पहल

दसवीं कक्षा की क्लास लेते हुए अचानक सुधा मैम ने पूछा, ''बच्चो, यह बताओ कि आज सुबह का नाश्ता किए बगैर कौन-कौन आया है।''

एक छात्रा ने हाथ उठाया।

''क्या घर में कुछ बन नहीं पाया था?''

''बना था, पर उसे छोटी बहन के लंच बॉक्स में मम्मी ने देकर भेजा।''

''ऐसा क्यों, तुम्हें क्यों न मिला।''

''वह अंग्रेज़ी स्कूल में पढ़ती है न। मम्मी उसे अच्छा लंच देती है और उसकी ड्रेस भी कड़क होती है।''

सुधा मैम ने ध्यान दिया कि उसने स्कूल शूज़ न पहन कर चप्पल पहन रखी थी।

''सुनो, मम्मी को कहना कि वह तुम्हें भी साफ़ कपड़े दे और टिफिन भी।''

''पर वह हमेशा कहती हैं कि सरकारी स्कूल में सब चलता है।''

सुधा मैम ने उस दिन स्कूल की समापन सभा के समय कड़ाई से कहा, ''कल से सबको पूरे स्कूल ड्रेस में आना है और सभी के साथ लंच बॉक्स और पानी की बोतल होनी चाहिए।''

सभा विसर्जित होने के बाद सुधा मैम की कुलीग ने पूछा, ''यह अचानक इतनी कड़ाई क्यों?''

''इसी कड़ाई की कमी है, तभी तो सरकारी स्कूल उपेक्षित है। इसके लिए सरकार क्या करेगी, जब मानसिकता ही सरकारी बनी रहेगी।''

सुधा मैम की चाल में बदलाव लाने की दृढ़ता झलक रही थी।

2-संस्कार

'बीना, आज आशु ने मुझे अपने शहर बुलाया है। मैं तो उस क्षण का इन्तज़ार कर रही हूँ जब मेरी नन्ही पोती मेरी बाँहों में होगी। आज मुझे अहसास हो गया कि कोई बेटा अपने माँ-बाप से दूर नहीं रह सकता। भले ही उसने पहले न बुलाया हो, अब तो उसे माँ की याद आ ही गई' खुशी से चहकते हुए शीला अपनी सहेली से बात कर रही थी।

'तू भी कितनी भोली है शीला। उसे माँ की नहीं आया की याद आई है। मैंने भी दुनिया देखी है।'

'इस तरह से तो मैंने सोचा ही नहीं था। मैं आशु को जाने से मना कर दूँगी', शीला ने मन बना लिया।

तभी मोबाइल बज उठा।

''माँ, किस दिन का टिकट ले लूँ?'' आशु पूछ रहा था।

''बेटा, अभी कुछ दिन के लिए रहने दे। कुछ काम आ गया है,'' शीला ने थोड़े मद्धिम स्वर में कहा।

''किन्तु कल तक तो आप तैयार थीं, आज अचानक क्या हो गया,'' आशु पूछ रहा था।

शीला कुछ बोल नहीं पाई।

''माँ, यदि आप यह समझ रही हैं कि मैं आपको काम के लिए बुला रहा हूँ, तो आप ग़लत हैं। मेरे घर में बाई, कुक और आया, सभी हैं। फिर भी कुछ कमी है।''

''क्या,'' शीला असमंजस भरी आवाज़ में बोली।

''माँ, इंसान जब जन्म लेता है, तो अपने कर्मों के सहारे आगे बढ़ता है। वह परम पिता ही होते हैं जिनकी देखरेख में हम सुरक्षित रहते हैं, क्योंकि वह हर वक़्त यह ख़्याल रखते हैं कि बुरी बलाएँ हम तक पहुँच न सकें। वही परमात्मा वाली नज़र गुड़िया के लिए चाहिए माँ,'' कहते हुए आशु भावुक हो गया।

''कल की टिकट ले-ले बेटा,'' शीला की गलतफहमी दूर हो चुकी थी।●

उर्मिल कुमार थपलियाल

मुझमें मंटो

मैं मंटो मियाँ। उस खूंखार दरिंदे दहशतगर्द ने सड़क पार कर रहे एक छोटे बच्चे पर निशाना साधा और दन्न से गोली मार दी। गोली बच्चे के करीब से निकल गई। ऐसा कैसे हुआ?

मंटो-इसलिए कि गोली को पता था।

मैं-क्या पता था?

मंटो-कि वो बच्चा है।

कमल चोपड़ा

1-खेलने दो

नितिन के शॉट के साथ ही गेंद नाले में जा पड़ी थी। नाले से गेंद को निकाले कौन? बदबू-गंदगी से भरा गहरा गंदा नाला!

चरणू बड़ी हसरत से उनका खेल देख रहा था। उसे कोई अपने साथ खेला नहीं रहा था। नितिन ने उससे कहा, ''ओए, नाले से गेंद निकाल दे....हम तुझे एक रुपया देंगे....और अपने साथ खिलाएँगे भी....।''

चरणू लालच में आ गया। नाले में उतरने के लिए लटक गया....अचानक हाथ फिसल गया और वह तड़ाक से कीचड़ में सिर के बल जा गिरा....वह छटपटाने लगा, हाथ-पाँव मारने लगा....उसने तो जैसे जान की बाजी ही लगा दी थी....।

बबुआ लोग ऊपर खड़े हुए हँसते-खिलखिलाते रहे....वे इंतजार कर रहे थे कि वह जल्दी से बॉल बाहर निकाल लाए...।

''साला नीच....देखो तो एक रुपए के लिए गंदगी में घुसकर....।''

''ये साला नीच....ये गरीब लोग इतने लालची और गिरे हुए होते हैं कि....पैसे के लिए तो ये जान भी दे दें....।''

तभी चरणू बाहर निकल आया था। सिर से पाँव तक गंदे नाले की गंदगी से लिथड़ा हुआ...मुँह ....हाथ....कपड़े...सब पर कीचड़ लिथड़ा हुआ था....।

''ये ले एक रुपया.....और बॉल इधर दे हमारी...।''

चरणू फेंके गए इस रुपये पर पैर रखकर खड़ा हो गया और गंभीर होकर बोला, ''मैंने इस एक रुपये के पीछे इतना बड़ा खतरा मोल नहीं लिया था....।''

''तो क्या सौ रुपये लेगा....?''

''नहीं....मैं भी तुम्हारे साथ खेलना चाहता हूँ.....।''

बबुआ लोग खिलखिलाने लगे, जैसे उसने कोई अनोखी और अजीब बात कह दी हो....।

''...तू हमारे साथ खेलेगा...अपनी हालत तो देख....जैसे कोई....सूअर कीचड़ में लोट-पोट होकर आ रहा हो....।'' हँसते-हँसते दोहरे हो गए सब।

''मैं खेलना चाहता हूँ....खेलो और खेलने दो। खिलाओगे या नहीं....?'' जोर देकर पूछा उसने। जवाब में झुँझलाकर बोला नितिन।

''कह दिया ना एक बार, बॉल इधर दे और भाग यहाँ से, वरना....।''

चरणू ने गुस्से से उस बॉल को, जिसे उसने गहरे गंदे नाले से अपनी जान की बाजी लगाकर निकाला था, फिर से नाले में फेंक दिया और गंभीर कदमों से वहाँ से चल पड़ा, ''देखता हूँ, तुम भी कैसे खेलते हो....?''

2- वेल्यू

गोबर इकट्ठा करती माँ की नजर अजय पर पड़ी तो बोली - स्कूल तै आ गया? आज तै टैम का बेराई ना पाट्या? सारा काम पड्या है? चारा काटना है। आटा गूँथना है? मैं ऐकली सूँ न? तारी चाची की तै काम करन वाली हालत ना है! तेरा बापू तै शहर गया होया है अर चाचा खेत पै ट्यूबवैल धोरे पड्या होगा... तने बेरा है आपणीं भूरी भैंस ने कटड़ा दिया है?

खुशी से उछल पड़ा - कट्ड़ा? चाचे ने बता के आऊँ सूँ!

माँ उसे रोकती पुकारती रह गई लेकिन वह खेत की ओर भाग खड़ा हुआ। रास्ते में दो-एक जनों ने उसे रोककर टोका - रै तूफान की ढाल कड़े भाज्या जा सै?

किसी की परवाह किए बिना अजय ने खेत पर पहुँचकर ही साँस लिया। चाचा पेड़ की छाँह में चारपाई पर गहरी नींद में सो रहा था।

- चाचा.... चाचा.....

हड़बड़ाकर उठा चाचा - रै के चाला पाट ग्या?

– चाचा – अपणी भूरी भैंस ने कटड़ा दिया सै।

– कटड़ा ?.... अच्छा ठीक सै....

– चाचा कटड़ा होया है कटड़ा होया कटड़ा....

– कोय बात ना ?

हैरान था वह – चाचा तन्नै खुशी ना होई। उस दिन हफ्ता पहले जद चाची के छोरा होया तब तै तन्ने मेरे तांई खुश होके बीस का नोट दिया था। लड् डू खा लिये। अर आज.... ?

– बावले, इन्न में कटड़ा नई कटड़ी आच्छी होवे है। कटड़ी बड़ी होके दूध देवेगी – अर कटड़ा साला के करेगा??? झोटा बुग्गी भी चलने बन्द हो गए आज कल ते। अर कटड़ी तो भैंस बनके घास-तिनके खा के दूध जैसा अमृत देवे है। उनका तो गोबर भी काम आवे है। बाजार में ईब झोट्टों की कोई वैल्यू ही ना है.... ।●

कमला निखुर्पा

जल संरक्षण

सीमा आज बहुत खुश थी। उसने प्रार्थना सभा में जल संरक्षण पर भाषण दिया था। भाषण सुनकर सभी ने जोरदार तालियाँ बजाईं। साथी अध्यापकों ने उसकी भाषण- कला की तारीफ की।

दुबेजी बोले ''वाह सीमा मैडम! क्या जबरदस्त भाषण था आपका, भई हम तो कायल हो गए हैं आपके, अरे भई शर्माजी! सबसे ज्यादा पानी तो आप ही बरबाद करते हैं पूरी कालोनी में, बारिश के मौसम में भी बगीचे में रोज पाइप से सिंचाई हो रही है, सीमा मैडम! जरा समझाइए इन्हें भी, आज सारा पानी ये बगीचे में गिराते रहे तो कल इनके पोते पोतियाँ प्यासे रह जाएँगे।''

कक्षा में सीमा मैडम ने विद्यार्थियों को जल-संरक्षण पर प्रोजेक्ट दिया। उनको निर्देश दिया कि वे अपने मुहल्ले में वर्षा-जल संरक्षण के बारे में लोगों को जागरूक करें।

जल संरक्षण पर विद्यार्थियों को जागरूक करने के लिए प्राचार्य ने सीमा के प्रयासों की सराहना की। सीमा स्कूल से गुनगुनाते हुए घर आई। घर आकर उसने पानी का मोटर ऑन किया, शॉवर खोला और आँखें बंदकर ठंडे पानी से थकान मिटाने लगी। तभी दरवाजे पर दस्तक हुई। जल्दी-जल्दी गाउन पहनकर उसने दरवाजा खोला, देखा तो सामने पड़ोसिन परेशान -सी खड़ी थी।

''मैडम आप अपना मोटर बंद कर दीजिए, मेरे यहाँ बिलकुल पानी नहीं आ रहा है।''

''पानी नहीं आ रहा है तो मैं क्या करूँ? आप अपनी कोई और व्यवस्था कर लीजिए।''

''मैडम आपकी और हमारी पाइपलाइन एक है ; जब आप मोटर चलाती हैं तो मेरे यहाँ पानी बंद हो जाता है।''

''ये आपकी प्रॉब्लम है मैं क्या कर सकती हूँ?

सीधी -सादी पड़ोसन अपना- सा मुँह लेकर वापस चली गई।

स्कूल का आखिरी कार्य- दिवस, कल से दो महीने की छुट्टियाँ हैं। जल-संरक्षण पर जन - जागरूकता अभियान चलाने के लिए सीमा को आज जिलाधिकारी महोदय के हाथों प्रशस्ति पत्र मिला है। सीमा खुशी से फूली न समाई। तुरंत मिठाई खरीदी, घर आकर अपने पति और बच्चों को मिठाई खिलाकर खुशखबरी सुनाई। बच्चे छुट्टियों में नानी के घर जाने की खुशी में शोर मचाने लगे। जल्दी-जल्दी सामान पैक होने लगा। सीमा के पतिदेव टैक्सी लेकर आ गए। सीमा और उसका परिवार छुट्टी मनाने चला गया।

ठीक पाँच बजे सीमा के रसोईघर के नल से आवाज आई...सूँ सूँ

फिर बाथरूम के नल ने भी सिसकारी भरी। सभी नलों से पानी बहने लगा झर- झर- झर-झर।

नलों का स्वच्छ पानी गंदी नाली में मिलकर बहने लगा और पूरे दो महीने तक बहता रहा।●

डॉ. कविता भट्ट

कुलच्छन

आचार्य सुरेशानंद लगभग पाँच घंटे की कथा करने के बाद भक्तों को प्रसाद बाँटकर अपने घर लौट आए। मुँह-हाथ धोया और कपड़े बदलकर डायनिंग टेबल पर भोजन की प्रतीक्षा करने लगे। पत्नी भोजन लगाने लगी। आचार्य जी बोले, ''आज बहुत थक गया हूँ।कुछ अच्छा खाना हो, तो मज़ा आ जाए। अरे कमला! ज़रा फ़्रिज से व्हिस्की की बोतल निकाल ला और चिकेन थोड़ी देर से सर्व करना गरम-गरम।''

कमला बोली- ''आज तो मैंने खाने में आलू बनवाए हैंबिना प्याज लहसुन के; कथा सुनने गई थी; तो शांता को फोन करके कह दिया था।''

इससे पहले कि कमला की बात पूरी होती, आचार्यजी जोर-जोर से चिल्लाने लगे- ''दिमाग खराब हो गया है तुम्हारा, किसने कहा था काम-धाम छोड़कर कथा सुनने जाओ और हाँ कान खोलकर सुन लो; कथा सिर्फ दूसरों को सुनाने के लिए होती है, इसीलिए वह उपदेश कहलाता है। सत्यानाश कर दिया सारे मूड का! कलमुँही कहीं की...कुलटा...!'' गालियों की बौछार से उद्विग्न होकर कमला के होंठ काँपने लगे। दु:ख और अपमान के कारण मानो वह धरती में समा जाना चाहती हो!

नौकरानी शांताबाई, साहब का राक्षसी रूप देखा, तो घबराकर बाहर चली गई।

कमला के कानों में आचार्य सुरेशानंद के ये बोल पिघले सीसे की तरह पड़ रहे थे- ''बोलो सत्यनारायण भगवान की जय!'' यह जयकारा

बुलवाकर उन्होंने श्रीमद्भागवत कथा के अंतर्गत शाकाहारी भोजन पर उपदेश प्रारम्भ करते हुए कहा था,'' भक्तो! हम जैसा खाएँगें अन्न, वैसा ही होगा मन। प्याज, लहसुन एवं मांस-मदिरा आदि बुद्धि को भ्रष्ट कर देते हैं। इनका सेवन व्यक्ति को राक्षस बना देता है। इसलिए इनका सेवन किसी भी परिस्थिति में वर्जित है...भूमि पर बैठकर शुद्ध सात्त्विक भोजन ही करना चाहिए।''

''लाज नहीं आती, कुछ देर पहले कथा में क्या-क्या उपदेश झाड़ रहे थे!'' कमला के नथुने फड़क उठे!

''तुम्हारी इतनी हिम्मत, कुलच्छिनी!'' , आचार्य फट पड़े।

थोड़ी देर बाद बर्तन फेंकने और मार-पीट की आवाज से घर गूँजने लगा।

पुरुष-मन

कस्तूरलाल तागरा

उनका विवाह हुए अभी कुछ ही सप्ताह बीते थे कि एक दिन पति ने पत्नी को अंतरंग क्षणों में अपनी पूर्व गर्लफ्रैंड के बारे में चटकारे लेते हुए विस्तार से बताया।

पत्नी कुछ दिन आक्रोश से भरी रही। लंबा अबोला चला। और उसके बाद मान मनुव्वल का दौर शुरू हुआ। अन्ततः इस शर्त के साथ समझौता हो गया कि पति आईन्दा ऐसी गलती नहीं दोहराएगा। पत्नी के प्रति सदैव वफादार रहेगा।

दोनों की जिन्दगी एक बार फिर ठीक से चलने लगी थी कि एक दिन पत्नी ने यूँ ही लाड़ जताते हुए पति से कहा-''आपने मुझसे तो कभी पूछा ही नहीं कि मेरा भी कभी किसी से प्रेम-प्रसंग रहा है कि नहीं।''

पति ने तुरंत पत्नी के मुँह पर अँगुली रख दी-''हो भी तो कभी मुझे बताना नहीं। हम मर्दों के पास तुम औरतों जितना बड़ा दिल नहीं होता।''

पति के ऐसे बड़प्पन भरे व्यवहार से पत्नी के मन में पति के प्रति आदर बढ़ गया। लेकिन उस दिन के बाद से पति एक जासूस में तब्दील हो गया।●

उसका जिक्र क्यों नहीं करते

कुणाल शर्मा

पार्क में एक बैंच पर चार आदमी बैठे बतिया रहे थे।

पहला : सुना है...करियाने वाले रामकिशोर की लड़की मंगल ठेकेदार के लड़के के साथ भाग गई।

दूसरा : ठीक सुना है, बेशर्म ने सारे मोहल्ले में बाप की थू-थू करा दी।

तीसरा : बस पूछो मत...उसके तो चाल-चलन और पहनावे से ही दिखता था कि एक ना एक दिन जरूर गुल खिलाएगी।

चौथा खामोश रहा।

पहला : लड़कियों के तो पंख लग गए हैं आजकल।

दूसरा : भई , लड़की जात...फिर भी कोई शर्म-हया नहीं।

तीसरा : खबर तो यह भी है कि शादी भी रचा ली है।

चौथा फिर खामोश रहा।

पहला : शादी भी रचाई तो गैर-बिरादरी लड़के के साथ!

दूसरा : कम से कम जात-बिरादरी का तो ख्याल कर लेती!

तीसरा : भई , मैं तो कहूँ लड़कियों को इतनी आजादी देना भी ठीक नहीं।

चौथा अभी भी खामोश था।

पहला : अरे भाई , तू क्यों खामोश बैठा है? कुछ तो बोल।

चौथा : अकेली भागी है क्या लड़की?

दूसरा : अरे , कैसी बात करते हो! अकेली क्यों...लड़के के साथ भागी है...

चौथा : तो भाई लड़के के बारे में भी कुछ बोलो, उसका जिक्र क्यों नहीं करते... ?

अब शेष तीनों खामोश थे।●

कृष्णा वर्मा

हैप्पी मदर्स डे

फोन की घंटी बजी देखा तो रमाजी का फोन था, ''नमस्कार रमाजी! कहिए कैसी हैं?''

''मैं ठीक हूँ तुम सुनाओ निशा सब कुशल-मंगल?''

''जी बिल्कुल।''

''काफी समय हो गया मिले हुए। बात करने को मन हो रहा था; इसीलिए फोन कर दिया। कहीं तुम खास काम में व्यस्त तो नहीं थीं?''

''नहीं-नहीं ऐसा कुछ विशेष नहीं कर रही थी। आपने फोन किया बहुत अच्छा लग रहा है। पहले तो कभी-कभी आप मिल लेती थीं; लेकिन आजकल तो बिलकुल ही घर पर रहने लगीं।''

''बस जब से अनु ने नौकरी के लिए जाना शुरू किया है ,मैं गुड़िया के साथ इतना व्यस्त हो गई हूँ कि फुर्सत ही नहीं मिलती। क्यों नहीं तुम ही आ जातीं। आज साथ बैठकर चाय भी पिएँगे और बातचीत भी हो जाएगी।''

''चलिए ठीक है, दोपहर के खाने के बाद आती हूँ।''

करीब चार बजे निशा ने घंटी बजाई, दरवाज़ा खोलते ही रमाजी के मुखमंडल पर खुशी झलक गई, ''आओ-आओ निशा बहुत अच्छा लग रहा है मिलकर।''

निशा और रमाजी बैठकर बातचीत करती रहीं बीच में उठकर रमाजी चाय-नाश्ता ले आईं। चाय पीते-पीते बताती रहीं कि गुड़िया के साथ कैसे समय निकल जाता है, दिन का पता ही नहीं चलता।

''आज गुड़िया घर पर नहीं है क्या?''

''घर पर ही है बस अभी थोड़ी देर पहले ही सोई है। आजकल उसके दाँत आ रहे हैं तो चिड़-चिड़ी- सी हो गई है।''

निशा ने पूछ ही लिया, ''आज आप भी कुछ उखड़ी-उखड़ी सी लग रही हैं। सब ठीक तो है? तबियत तो ठीक है ना?''

''हाँ सब ठीक है थोड़ा थक गई हूँ, उम्र भी तो हो रही है। इतना काम अब कहाँ हो पाता है। ऊपर से गुड़िया को दिन भर सम्भालना। आज तो अनु ने हद ही कर दी। घर का काम यूँ ही फैला छोड़कर इतनी जल्दी चली गई कि मेरे उठने का इंतज़ार भी नहीं किया। ऐसा तो पहले कभी हुआ नहीं। इतना भी नहीं कि एक फोन ही कर दे। बस यही सोच मन खिन्न -सा हो गया था। सोचा तुम से ही बातचीत करके मन हलका कर लूँ। अनु को क्या चिंता, मैं हूँ ना सब काम देखने के लिए।''

बातों का सिलसिला अभी ज़ारी ही था कि दरवाज़े की घंटी बजी और उधर से गुड़िया के रोने की आवाज़ आई।

''काफी देर से सो रही थी शायद उठ गई है, रमाजी आप गुड़िया को देखो, दरवाज़ा मैं खोल देती हूँ।''

निशा ने दरवाज़ा खोला सामने अनु खड़ी थी।

''नमस्ते आंटी जी! आप कब आईं?''

''बस थोड़ी देर पहले ही।''

इतने में रमाजी गुड़िया को लेकर आ गईं। और बोलीं -

''अरे अनु- आज इतनी जल्दी घर?''

''मम्मी जी, आज से मैंने सोमवार के व्रत शुरू किए हैं। सुबह जल्दी निकल गई थी कि मंदिर दर्शन करके समय से दफ्तर पहुँच जाऊँ। आपकी नींद खराब न हो सो आपको सुबह उठाना उचित नहीं समझा। इसलिए नवीन से कह गई थी कि आपको बता दें।''

हाथ में पकड़ा लिफाफा सासू माँ के आगे बढ़ाती हुई बोली, ''हैप्पी मदर्स डे मम्मी जी''! आज शाम आपको खाने के लिए बाहर ले जा सकूँ; इसलिए ही जल्दी आई हूँ।

''मन ही मन स्वयं को धिक्कारते हुए रमाजी ने उपहार स्वीकार कर बहू को गले से लगा लिया।●

ज्ञानदेव मुकेश

मुक्ति

बूढ़े पिता मृत्यु शय्या पर थे। डाक्टरों ने जवाब दे दिया था। पर ऐसा लगता था, उनके प्राण किसी उधेड़बुन में अटके हुए थे। वे जमींदार थे। उन्होंने अपने जीवनकाल में कई गरीबों को कर्ज दिया था। उन्होंने उन कर्जदारों से छोटे-छोटे पुर्जे बनवाकर रख लिये थे। उन्होंने एक दिन बेटे से पूछा, ''बेटा, कर्ज के वे पुर्जे कहाँ हैं?''

बेटा समझ गया कि पिता के प्राण इन्हीं कर्जों में उलझे हुए हैं। उसने कहा, ''पापा, आप निश्चित रहें। मैं उन पुर्जों के बल पर सारा कर्जा वसूल लूँगा। किसी को नहीं छोड़ूँगा।''

पिता ने कहा, ''बेटा, वे पुर्जे ले आओ। मैं उन्हें देखना चाहता हूँ।''

बेटे ने कर्ज के वे सारे पुर्जे पिता को लाकर दे दिए। पिता ने वे पुर्जे सिरहाने के नीचे रख लिये। बेटे ने सोचा, 'मोह आदमी से क्या न करा ले।'

थोड़ी देर बाद पिता ने बेटे से बीड़ी पीने की इच्छा जताई। बेटे ने यह इच्छा भी पूरी की। वह पिता को माचिस और कुछ बीड़ी थमाकर चला गया।

अगली सुबह सबने देखा, पिता ने नश्वर शरीर का परित्याग कर दिया था। बेटे ने सबसे पहले वे पुर्जे खोजे मगर वे सिरहाने के नीचे नहीं मिले। तभी घर के कोने में कुछ धुआँ और राख दिखे। बेटा सबकुछ समझ गया। उसने सर पीट लिया। सबने देखा, पिता के चेहरे पर दोष-मुक्ति के भाव थे। वे सभी गरीबों को कर्ज से मुक्त कर खुद भी मुक्त हो गए थे।●

छवि निगम

खिड़की

शाम की खिड़की खुली। ट्रे सजाकर कमरे के अंदर लेकर आती विभा के हाथ अचानक काँप गए। ऑफिस से लौटकर सोफे पर पसरे अजय के हाथों में इस वक्त विभा का ही फ़ोन था , जिसकी स्क्रीन पर नज़रें गड़ाए उसकी त्यौरियाँ चढ़ती चली जा रही थीं। हाथों पर महसूस होती गर्म चाय की छीटों की जलन के बावजूद विभा ने अपनी चिंता छिपाने को एक झूठी मुस्कुराहट ओढ़ ली, जो अगले ही पल अजय की तेज चिल्लाहट से गायब भी हो गई।

''ये क्या ऊटपटाँग लिखकर पोस्ट करती रहती हो तुम!! हैं? और ये लोग कौन हैं ,जो वाह! वाह! लिखे डाल रहे हैं? बन्द करो ये सब फौरन! समझीं?''

विभा ने कुछ हिम्मत बटोरी- ''वो...कविता...लिखी थी...बस।''

''अच्छा!!'' अजय की आवाज़ ज्यादा तेज

थी या फर्श पर पटक दिए गए कप के टूटने की खनक... बताना मुश्किल था। फिर भी झुककर टुकड़े बीनती विभा की कराह उसे सुनाई पड़ ही गई , ''खुद तो अपने फ़ोन को खोलने का...पासवर्ड तक नहीं...बताते...और...हमें... !''

सोफे से उठते अजय के चेहरे पर सोशल मीडिया का आभासी सभ्यता का मुखौटा चटखने लगा था।

खिड़की बन्द हो चुकी थी।●

ज्योति जैन

पानी के पेड़

बारिश का पानी छत से पाइप के जरिए पूरे चौक में फैला था।

नन्ही शालू बगीचे में छोटे-छोटे गड्ढे खोदती जा रही थी। हाथ में एक छोटी लकड़ी व खुरपी थी। फ्राक, पायजामा सब कीचड़- पानी में लथड़-पथड़ हो गए थे, तभी अन्दर से माँ आती दिखी। शालू उत्साहित हो उन्हें बताने लगी, ''देखो, देखो मैंने...''

तभी तड़ाक...माँ का एक थप्पड़ अचानक से उसके गालों पर पड़ा। उसके शब्द मुँह के अन्दर व आँसू आँखों से बाहर निकल आए।

''सारे कपड़े गंदे कर दिए। समझ में नहीं आता, अन्दर नहीं खेल सकती ? ...'' और भी सारे उलाहने देती माँ ने उसकी बाँह खींची।

रूआँसी शालू ने सफ़ाई दी, ''मैं तो आपके लिए पानी बो रही थी। माली भैया कह रहे थे- गड्ढा खोदकर जो डालो, वही उग आता है। आप गर्मी में कितने परेशान होते हो ना पानी के लिए, इसीलिए मैं पानी बो रही थी। अब पानी का झाड़ उगेगा। फिर आप परेशान नहीं होओगी न ?''

माँ की आँखें अपराधबोध से नम हो गईं। शालू अनजाने ही उन्हें गर्मी के अलावा भी पानी बचाने का सबक सिखा गई। उन्होंने गंदे कपड़ों की चिंता किए बिना शालू को गोदी में भींच लिया।●

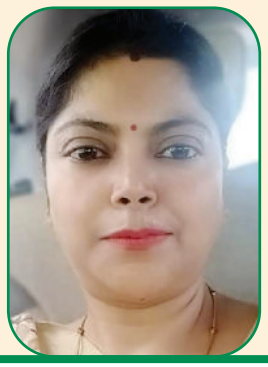

दीपाली ठाकुर

प्रेम

''मॉम , क्या आपको किसी से प्यार हुआ था ?''

अठारह साल की अपूर्वा का सवाल सुन मैं चौंक सी गई।

''बताओ ना !'' उसने बड़े प्यार से फिर पूछा।

मैंने हाँ में सर हिलाया।

''सच ! कब ? किससे ?'' अपूर्वा उछल पड़ी।

''बताओ न प्लीज़ !'' उसने मेरी दोनों हथेलियाँ अपने हाथों में लेकर मेरी आँखों में झाँकते हुए कहा।

''था कोई'' मैंने लजाते हुए कहा।

'' क्लासमेट ?''

मेरा सर 'ना' में देख- ''पड़ोसी ?'' उसने फिर अंदाज़ लगाया।

मैंने फिर से वही दोहराया।

''अब इतना सस्पेंस भी मत क्रिएट करो'' - अबकी वह खीझती हुई बोली।

''वो सीनियर थे।'' -मैंने सस्पेंस खत्म किया

'' फिर''- उसने अपनी आँखें उत्सुकता और जिज्ञासा से बड़ी करते हुए कहा

''फिर क्या''- मैंने कंधे उचकाते हुए कहा।

''अच्छा आप लोग कब मिले ?'' अब वो आलथी- पालथी मार दीवान पर मेरे सामने बैठ गई, जैसे कोई श्रोता कथा श्रवण के लिए तैयार हो।

''मुझे प्रेमचंद की कर्मभूमि नहीं मिल पाई थी, तब उन्होंने ही तो अपनी किताब मुझे दी थी और कहा था मुन्नी और सकीना का चरित्र-चित्रण जरूर देख लेना।''

मैंने अपनी आवाज़ ज़रा भारी कर उसी गंभीरता से कहा।

''जाने कैसे पता चल गया था।'' मुझे फिर वही आश्चर्य हुआ।

''अच्छा तो ऐसे मिले पहली बार''- वह खीखियाई।

''अच्छा प्रपोज़ किसने किया, उसने न!'' उसने फिर अटकल लगाई।

उसका ''उसने'' मुझे चुभ- सा गया।

''प्रपोज़-व्रपोज़ हमारे टाइम में कोई नहीं करता था''- मैं अतीत में खोती हुई बोली।

''अरे ! तो किसी को पता कैसे चलता था कि फलाँ ,फलाँ से प्यार करता है'' उसने बड़ी हैरानी जताई।

''वह तो आँखें कह जाती हैं''- मैंने मन में कहा।

''सच आप दोनों में से किसी ने भी किसी से कुछ नहीं कहा ?''- जैसे उसे विश्वास ही न हो रहा हो।

''हाँ बाबा, किसी ने ऐसा कुछ किसी से नहीं कहा''-मैंने उसे यकीन दिलाते हुए कहा।

''फिर ?'' उसने मन की गीली मिट्टी को कुछ और कुरेदते हुए कहा।

''फिर तीन साल बाद उनकी शादी हो गई, उनकी ही जात वाली लड़की से''- मैंने बात पूरी की।

''और सब खतम, है न!''- उसने भी बात खतम करते हुए कहा।

''क्यों सब ख़त्म'' -मैं छटपटाहट से भरकर बोली।

''पता है, जब उन्हें अपनी बीवी की पहली सालगिरह पर कुछ देना था और उन्हें सूझ नहीं

रहा था, तब उन्होंने मुझे रुपये देते हुए कहा था कि अपनी पसंद से कोई चीज़ खरीदकर दे दूँ।''

''और आपने खरीदी?'' -अब उसके आश्चर्य का कोई ठिकाना नहीं था।

''हाँ, सोने की अँगूठी ली थी मैंने स्मिता जी के लिए''- मैंने आँखों में प्यार भरकर कहा।

''मम्मा, आपको जेलेसी नहीं हुई?'' -वह अब भी हैरान थी।

''क्यों हो जलन?''- मैंने कहा।

''क्यों न हो?''- वह अड़ती हुई बोली।

''आप तो प्यार करती थी न उससे, फिर आप...वो आपका प्यार वन साइडेड होगा''- उसने मुझे समझाइश देते हुए कहा।

''प्यार में कोई जलन नहीं होती ,और न कोई शर्त, दूसरा हमें चाहे ही, यह भी नहीं''- मैंने झुँझलाहट में कहा।

''मैं जानती हूँ वे मुझसे प्यार करते थे और अब भी करते हैं; तभी तो अभी दो साल पहले एक परिचित की शादी में मिले, तो मैंने उनकी आँखों में देखा था।''

मैं आश्वस्त , मगर चुप।

''ओ.., अनकंडीशनल लव'' -उसने मुझपर हँसते हुए कहा।

'' प्यार तो अनकंडीशनल ही होता है'' -मैंने यकीन से कहा।

'' वैसे भी तूने पूछा था कि आपने किसी से प्यार किया था क्या ,ये थोड़ी पूछा था कि किसी ने आपसे प्यार किया था या नहीं।''

मैंने उसके सर पर चपत लगाई।

''मैं उनसे प्यार करती थी, करती हूँ और करती रहूँगी।''

मैंने मन ही मन में बाँहें फैला खुले आसमान तले जोर से चिल्लाते हुए अपने प्यार का ऐलान किया

''कितने इनोसेन्ट हो आप मम्मा, इसे क्रश कहते हैं।''

उसने मुझे इस तरह से बाहों में भर लिया, जैसे मैं उसे भरा करती थी।

''मन कह रहा था-''यही तो प्यार है पगली, कैसे समझाऊँ तुझे।''

मेरी आँखों में राधा, मीरा, ,सुधा, ललिता जैसे अनगिनत चेहरे घूम रहे थे।●

पवन शर्मा

ऐसा नहीं देखना

बैग को मेज पर रखकर वह सोफे पर निढाल बैठ गया। दिमाग़ अभी भी भन्ना रहा है।

पत्नी भीतर से गिलास में पानी लेकर आ गई।

''रख दो।'' मेज की तरफ़ इशारा कर वह बोला।

पत्नी ने पानी का गिलास मेज पर रखा, ''क्या हुआ?''

वह कुछ नहीं बोला। उसे लगा कि दिमाग़ की नसें फट पड़ेंगी।

''बताओ ना... क्या हुआ?- पत्नी ने फिर पूछा।''

''आजकल के लड़कों में कोई मैनर्स नहीं रहा।''

''मतलब?''

वह चुप रहा। कुछ नहीं बोला। बताएगा तो नाहक ही पत्नी चिंता करने लगेगी। वैसे ही शुगर की पेशेंट है।

''चाय पिला दो।'' उसने कहा।

''बनाकर लाती हूँ।'' कहकर पत्नी किचन में चली गई।

सोफे पर बैठे-बैठे उसने अपनी दोनों आँखें बंद कर लीं। अपने घर से चालीस किलोमीटर दूर ऑफिस अप-डाउन करते समय ऐसे किस्से अमूमन देखने को मिलते हैं। फिर से आज हुई घटना चलचित्र की तरह चलने लगी। सामने वाली सीट पर बैठे दो लड़के... सुमित की उम्र के... मोबाइल पर कुछ देख रहे हैं... ईयर फ़ोन लगाकर... कुछ अश्लील-सा... उसकी बगल में बैठी हुई लड़की को भद्दे-भद्दे कमेंट करते हुए... लड़की विचलित है... अपनी आँखों में आँसू दबाए... उसने मना किया... बात बढ़ी... दोनों लड़कों ने उसकी कॉलर पकड़ ली... बैठी हुई सवारियों ने बीच-बचाव किया... बस उसके मुँह से 'शट-अप! ... शट-अप! ... लीव मी! ... लीव मी!' ... की घरघराती आवाज़ निकली... अगले स्टॉप पर लड़की उतर गई... पर लड़कों के कमेंट बंद नहीं हुए।

''चाय लो... बिस्कुट लाऊँ... खाओगे?'' पत्नी ने पूछा।

''नहीं-नहीं... बस।''

''कुछ परेशान लग रहे हो?''

''नहीं तो।'' कहते हुए चाय का कप उठाकर वह चाय पीने लगा।

''ऑफिस में कुछ हो गया है क्या?'' पत्नी को चिंता होने लगी। बस में हुई घटना पर उसने चुप्पी साध ली।

चाय पीते-पीते उसने देखा कि सुमित कान में ईयर फ़ोन लगाए और हाथ में मोबाइल पकड़े अपने कमरे से निकला। उसने सोचा-शायद कोचिंग जा रहा है। अचानक उसके जेहन में सुमित के चेहरे पर बस के उन लड़कों के चेहरे दिखाई देने लगे... ''नहीं-नहीं...! सुमित ऐसा नहीं हो सकता!'' ... वह सुमित को उन दोनों लड़कों जैसा नहीं देखना चाहता। उसके मुँह से 'शट-अप! ... शट-अप! ... लीव मी! ... लीव मी! ...' की घरघराती आवाज़ निकल रही है- ऐसा उसे लगने लगा!●

प्रियंका गुप्ता

1-समानता

वह शुरू से स्त्री पुरुष की समानता का समर्थक था। इसी वजह से शादी की बात के लिए जब वह पहली बार लड़की से मिला, तभी

उसको बोल दिया था, ''हाँ बोलिएगा तो अपनी खुशी से, किसी मजबूरी या दबाव के तहत नहीं...। मुझे आप पसंद हैं, मैं तो अपनी खुशी से आपसे शादी करना चाह रहा।''

उसने सहमति में सिर हिला दिया था।

शादी के बाद पहली रात ही उसने फिर बोला था, ''ये घर जितना मेरा, उतना ही तुम्हारा है। मुझे अपना पति नहीं, अपना बेस्ट फ्रेंड समझना...। तुम्हारी इच्छाओं का भी पूरा सम्मान करूँगा मैं...''

उसने फिर सहमति में सिर हिला दिया था।

शादी के शुरुआती दिन से लेकर आज तीन चार महीने बीत चुके थे, पर जाने क्यों उसे पत्नी की ओर से एक अजीब सी दूरी महसूस होती थी। न कभी अपनी मर्ज़ी से पास बैठना, न हँसी ठट्ठा करना...। मानो उस घर में रहकर वह कोई बंधुआ मजदूरी कर रही हो। ऐसे माहौल में न चाहते हुए उसे घुटन महसूस होने लगी थी। कितनी तो कोशिश करता था वह उसे खुश रखने की...। शॉपिंग, मूवी, घूमना, उसके मनपसंद का खाना-वाना... सब करके देख लिया, पर एक अजीब तरह की दूरी अब भी थी उन दोनों के बीच...। वह नहीं समझ पा रहा था आखिर उसे कमी थी तो किस बात की...? हारकर उसने अपने ससुर को फोन कर दिया। शायद माता-पिता को ही उसके दु:ख का कारण पता हो। जो कुछ भी उन्होंने बताया, सुनकर वह हैरान रह गया था। ऐसा तो उसने स्वप्न में भी नहीं सोचा था...।

ससुर बोले थे, ''दामाद जी, हमारी बेटी सच में बहुत दु:खी रहती है। आपने शुरू से उसे अपनी पत्नी का दर्ज़ा नहीं दिया। आप हमेशा मन से उससे दूर रहे...। न किसी बात पर उससे नाराज़ हुए, न उसको बोला कि कब उसे क्या और कैसे करना है। ऐसे भी होता है क्या? अगर आपको दोस्त ही बनाके रखना था, तो शादी ही क्यों की...?''

ससुर की बात ने उसे हल्का तिलमिला दिया था। इसी तिलमिलाहट में उस दिन घर में घुसते ही वह बेवजह उस पर चिल्ला दिया। पत्नी चुपचाप रसोई में घुस गई, तो उसे अपराधबोध हो गया। पिता की नासमझ बातों का गुस्सा इस बेचारी पर क्यों निकाला?

उधर रसोई में पत्नी काम करते हुए उस घर में पहली बार प्रफुल्लित महसूस कर रही थी। अब जाकर ये थोड़ा सामान्य हुए हैं, जैसे उसके पापा, दादा और भैया रहते हैं, घर के मालिक की तरह...।

उसे आश्चर्य हुआ था जब पहली बार पत्नी ने चाय के साथ पकौड़ी लाकर उसके सामने रखते हुए बड़े प्यार से पास बैठकर उसका हाथ थामके पूछा, ''आज बहुत थक गए हैं न...?''

चाय -पकौड़ी खाते उसने देखा, समानता दूर खड़ी हँस रही थी...।

2- गुप्त-धन

कल रात ही बुड्ढा मर गया...बस पता आज दोपहर चला, जब काँखता-कराहता बुड्ढा अपनी कोठरी से इतना दिन चढ़ने के बाद भी नहीं निकला...।

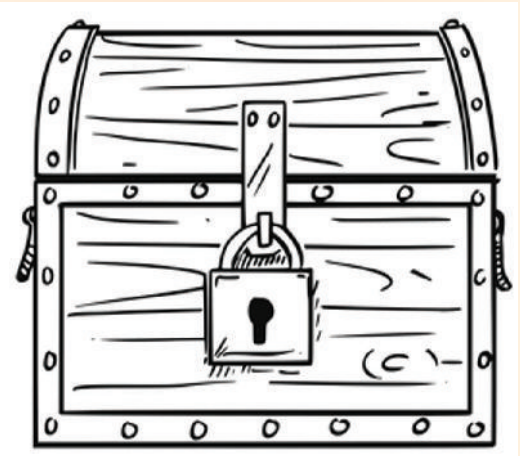

सबसे पहले अहसास बड़की बहू को ही हुआ, काहे की आदतन बुड्ढा रोज उसको ही हर बात के लिए आवाज लगाता था। उसकी कोठरी में बाबा आदम के ज़माने की जो घड़ी लगी थी, वह चलती नहीं थी... और अगर चलती भी, तो कौन- सा उसको दिखाई ही पड़ता? उसके साथ तो, जब जागे, तब सवेरा वाला हाल था...। जब पेट कुलबुलाया, तब ही अपनी कोठरी से रेंगते-रेंगते वाली चाल से बाहर निकलकर आँगन में रसोई के पास खड़े होकर बड़की बहू को अपनी कँपकँपाती स्वर-लहरी से आवाज लगाता... बदले में बड़की बहू अपने कमरे से ही सप्तम् सुर में चिल्लाकर उसे बता देती, ''रोज ही पता रहता है कि कोठरी के बाहर स्टूल पर खाना ढका रहता है, पर नहीं...जब तक दुनियावालों को पता ना चले कि वह अभी तक भूखे हैं, तब तक करेजा कैसे ठंडा हो इनका...? राम जाने बुड्ढे ने शादी क्यों नहीं की...? शादी कर लेता तो कम से कम उसकी औलादें भुगततीं...हमारी छाती पर मूँग तो न दलता...''

इस भुनभुनाहट में छोटकी बहू पर भी गुस्सा निकलता, पर धीमे-धीमे...। घर का आधा से अधिक खर्चा छुटके की कमाई से ही चलता था, इसलिए बड़की बहू छोटी बहू से खुलकर पंगा नहीं लेती थी।

बड़की बहू और भी जाने क्या-क्या भुनभुनाती रहती, पर बुड्ढे पर कोई असर ना होता...। वह उसी तरह डगमगाते हुए वापस अपनी कोठरी की ओर मुड़ जाता और खाना खाकर थाली आँगन में लगे हैंडपंप के पास सरका देता। जब तक इनके बड़े भाई ज़िंदा रहे, बुड्ढे को कभी सीधे-सीधे अहसास नहीं हुआ कि वह अपने भतीजों और उनकी पत्नियों के आसरे है। पर तीन साल पहले भैया क्या गए, बुड्ढे को ये बहुएँ मानो हमेशा याद दिला देती हैं कि वो उनके मत्थे मुफ़्त की रोटी तोड़ रहा, सिर्फ इस वजह से कि उसके आगे-पीछे कोई नहीं। खैर! पेट में निवाला डालकर वह उसके बाद हमेशा की तरह अंदर जाकर कोठरी का किवाड़ उड़काकर अपनी खटिया के नीचे से एक जंग खाई संदूकची निकालता...अपनी धोती के किनारे बँधी चाबी से उसका बड़ा सा ताला खोलता और जाने उसमें से क्या-क्या निकालकर मिचमिची आँखों के पास ले जाकर देख-देखकर वापस रख देता...।

एक बार किवाड़ खुला रह जाने की वजह से बड़की बहू ने किसी काम से अंदर झाँक लिया था, तब से उसकी भुनभुनाहट में उस संदूकची को लेकर भी बुड्ढे को गरियाया जाने लगा था।

कुल मिलाकर बुड्ढा हर किसी पर बोझ ही था, तो उसके मरने से घर में हर किसी ने राहत

की साँस ही ली। किसी रिश्तेदार को तुरंत बुलाने की जहमत किसी ने नहीं उठाई, बस आसपास के दो-चार लोगों की सहायता से फटाफट ले जाकर उसका क्रिया कर्म भी निपटा दिया गया। कौन यहाँ कोई उसकी औलादें बैठी थीं, जो तेरहवीं-बरसी तक मातम करती, सो रात के खाने के बाद ही तय पाया गया कि उसकी कोठरी धुला-पुँछवाकर, उसकी शुद्धि के लिए वहाँ पुताई करवाने के बाद उसको अनाज-पानी रखने का भंडार-गृह बना दिया जाए। बुड्ढे के रहते गाँव से आया भी सभी कुछ रसोई घर में रखना पड़ता था। चाहते तो सब थे, पर उसके जीते जी उसे निकालना संभव भी नहीं था ना। आखिर यह सारी जमीन जायदाद थी, तो उसी की...और उसने बड़ी चालाकी से अपनी सेहत रहते वसीयत भी कर दी थी, जिसमें साफ-साफ लिखा था- यदि उसने अंतिम साँस कहीं और ली, तो सारी जायदाद एक ट्रस्ट को चली जाएगी...बनिस्बत उन सबके...।

कोठरी से बुड्ढे का सारा सामान पहले ही बाहर फिंकवा दिया गया था, पर किसी को उन सामानों में कोई संदूकची कहीं नहीं मिली। किसी को कोई फर्क भी नहीं पड़ा था, क्योंकि उसकी बाबत सिर्फ बड़की बहू को ही पता था।

सबके सो जाने के बाद अपना कमरा बंद करके बड़की बहू ने चुपके से पलंग के नीचे बड़ी जतन से छुपाई संदूकची को निकालकर उसका ताला खोला। उसे पूरी आशा थी सब कुछ उन सब को सौंप देने के बावजूद बुड्ढे ने जरूर इस संदूकची में कोई गुप्त धन छुपाकर रखा था, तभी तो रोज इसे ताकता-जाँचता था।

संदूकची खुली तो बड़की बहू की आँखें आश्चर्य से फैल गईं। संदूकची में थे तो बस- कुछ टूटी चूड़ियों के टुकड़े...बालों में बाँधा जाने वाला मटमैला-सा लाल रिबन...एक पैर की पायल...एक चुनरी और बहुत जतन से रखा हुआ एक जर्जर मटमैला सा कागज...जिस पर लगभग मिट चुकी इबारत में लिखा था-

'मुझे हमेशा तुम्हारा इंतजार रहेगा...।'

3-जानवर

अक्सर वह सड़क पर लावारिस-सा इधर-उधर घूमता दिख जाता। मोहल्ले के लोग बासी-तिबासी खाना उसके आगे डाल देते। वह खाता फिर माला के घर के बाहर बने हौद में भरे पानी को जी भरकर पीता...कुछ देर इधर-उधर देखता, फिर हर फाटक को बन्द देखकर मायूस होकर या तो किसी पेड़ के नीचे सो जाता या फिर सड़क पर निकल जाता...।

वह कितनी भी दूर निकल जाता पर सूरज के डूबने से पहले ही अपने मोहल्ले में लौट आता। मोहल्लेवालों को भी न जाने क्यों उससे लगाव सा हो गया था...अनजाने ही उसका इंतज़ार करते। वह आता तो ज्यादातर लोग घर के बाहर आकर उसके आगे कुछ खाने को डाल देते...। वह सबका मुँह देखता, पूँछ हिलाता और फिर रोटी खाकर हौद की ओर बढ़ जाता।

दिन में तो पानी पीकर वह इधर-उधर डोल भी आता, पर रात के समय न जाने क्यों माला के गेट पर बने चबूतरे पर ही सो जाता। माला यह बात जानती थी। वह भी दस-साढ़े दस बजे डिनर लेने के बाद बचा-खुचा खाना बाहर आकर उसे खिलाती...। खिलाना और खाना जैसे एक नियम बन गया था...। बिना उसे खिलाए माला को भी नींद नहीं आती थी और जब तक उसे भी वहाँ से खाना न मिल जाता, वह भी जागा हुआ पूँछ हिलाता रहता।

जाड़ा आ गया था...। माला के पति शहर से बाहर थे। बच्चे खा-पीकर सो गए थे। रसोई का काम समेट माला उसे खाना देने बाहर निकली तो अचानक सहम गई। बाहर, उसके घर के दूसरे वाले गेट की आड़ में खड़े एक विकृत-आवारा आदमी ने अचानक उसे दबोच लिया और फिर उसे घसीटता घर के अन्दर ले जाने लगा। माला भीतर तक काँप गई। इत्ती रात गए जाड़े की वजह से सड़क पर पूरा सन्नाटा था और लोग भी अपने-अपने घरों में रजाई में घुसे या तो सो रहे थे, या टी.वी देख रहे थे।

पकड़ से छूटने की उसने बहुत कोशिश की पर अपराधी काफ़ी बलिष्ठ था...। वह चीख भी नहीं पा रही थी; क्योंकि मजबूत हथेलियों ने उसका मुँह दबा रखा था। अपनी बर्बादी की कल्पना ने उसे बहुत सहमा दिया था। ग़लती उसकी भी थी...न कुत्ते को नियम से खाना देने निकलती न इस अपराधी के जाल में फँसती...। क्या पता वह कई दिन से उसे एक निश्चित समय पर बाहर आता देखकर उसकी ताक में लगा रहा हो...। पर अब क्या हो सकता था...?

सोचकर उसकी आँखों से आँसू बह ही रहे थे कि तभी उस अपराधी की चीख सुनकर अवाक रह गई। वह उसे छोड़ ज़मीन पर गिरा तड़प रहा था और उन दोनों के पीछे ही घर में आ गए कुत्ते ने उसके पैरों में अपने नुकीले दाँत पूरी गहराई तक घुसेड़ रखे थे और किसी तरह छोड़ नहीं रहा था। अपराधी की लगातार गूँज रही दर्दनाक चीखों को सुनकर पूरा मोहल्ला इकट्ठा हो गया था। माला से सारी बात सुनकर उसे अधमरा करने की रही-सही कसर मोहल्ले वालों ने पूरी कर उसे पुलिस के हवाले कर दिया।

देर रात गए सारी अफ़रा-तफ़री से फ़ुर्सत पा अन्दर कमरे में उस कुत्ते को सहलाती माला सोच रही थी कि लोगों की निगाह में यह कुत्ता एक जानवर है पर असली कुत्ता तो वह था जो आदमी की खोल में किसी जानवर से भी ज्यादा ख़तरनाक हो सकता था...।●

प्रेम गुप्ता मानी

लड़की

पूरे मोहल्ले में यह ख़बर आग की तरह फैल गई कि पण्डित राघोराम की जवान लड़की गीता को पुलिस पकड़कर ले गई। लेडी पुलिस जीप लेकर आई थी।

ख़बर सुनते ही मोहल्ले के लोग बहाने से राघोराम के घर में ताँक-झाँक करने लगे, पर वहाँ से उन्हें कोई भी सुराग नहीं मिल पा रहा था। जवान लड़की के यूँ पकड़े जाने पर जिस हलचल की आशा वे सब कर रहे थे, उसके प्रतिकूल राघोराम के घर में शान्ति छाई हुई थी, जिसके कारण सबको निराश होना पड़ रहा था। उनकी बेशर्मी से सब हैरान थे।

हारकर वे सब अन्नो ताई के पास पहुँचे, क्योंकि अन्नो ताई का कहना था कि सब कुछ उन्होंने अपनी आँखों से देखा है। सारे दिन अन्नो ताई के घर सब का आना-जाना लगा रहा और वे सबकी जिज्ञासा अपने ढंग से शान्त करती रही, ''अरे भैया, ऊ तो कहो कि हम अपनी आँखिन से देख लीहा, नाही तो भला कौनो को पता लगता। अरे हम तो पहिले ही कहित रहै कि ऊ छोरी के लच्छन ठीक नाही...दैखो पूरा मुहल्ला केर नाक काटि लिहन।''

पण्डित राघोराम पूरे मोहल्ले में फैल रही चर्चा से निरपेक्ष अपनी दिनचर्या में व्यस्त रहे। जब भी वे बाहर निकलते, मोहल्ले वाले छिप-छिपकर उनकी ओर देखते और कानाफूसी करते। पर वाह रे बेशर्मी, उन्हें रत्ती भर भी परवाह नहीं हुई। अब ऐसे में साफ़ बात कहकर सीधा झगड़ा कौन मोल ले?

इस काण्ड से किसी को लाभ हुआ हो चाहे नहीं, पर राधा देवी को ज़रूर हुआ। कितनी बार राघोराम की घरवाली ने उसकी लड़की की बात को लेकर उसे नीचा दिखाया है, अब वह जमकर बदला लेगी। उसने बात को और बढ़ा-चढ़ाकर फ़ैलाना शुरू कर दिया। उसने किसी तरह यह सुराग भी लगा लिया कि गीता आज पाँच दिनों बाद वापस आ रही है। यह पता लगते ही सब अपने-अपने घरों के दरवाज़े पर खड़े हो गए।

थोड़ी देर बाद एक जीप पण्डित राघोराम के दरवाज़े पर आकर रुकी। उस पर से हँसती हुई गीता उतरी, तो सबके चेहरे लटक गए। जीप में एन.सी.सी की वर्दियाँ पहने लड़कियाँ बैठी थीं, जो चार दिनों का कैम्प लगाने के बाद लौटी थीं। उनकी वर्दी के कारण ही अन्नो ताई ने उन्हें पुलिस समझ लिया था।

जीप धूल उड़ाती चली गई, तो मोहल्ले वाले अन्नो ताई को कोसते हुए अपने-अपने घरों के दरवाज़े बन्द करने लगे।●

बारहवीं

बीना जोशी हर्षिता

अँगुलियों में आसानी से गिने जा सकने वाले साथियों में व्यस्त रहने वाली कामकाजी आधुनिका ने अपने नौजवान पड़ोसी को शायद कभी भी अधिक महत्त्व नहीं दिया। एक अनचाहा मेहमान, सफल कूटनीतिज्ञ और महत्वाकांक्षी युवक की छवि समेटे हुए सहकर्मी के रूप में ही उसे देखा और समझा गया। अकसर बची हुई रसोई को करीने से परोस दिया जाता उसके सामने। वह रसोई, जो कभी भी उसके नाम से नहीं बनती थी, मगर अकसर ही बच जाती थी उसी के नाम के लिए और तृप्ति की लकीरें साफ़- साफ़ देखी जा सकती थीं, चाव से खाने वाले पड़ोसी के चेहरे पर।

बातों का अंतहीन सिलसिला, ख़्वाबों की लम्बी उड़ान और रोज़मर्रा की ज़िंदगी के सैकड़ों दाँवपेंच! सुनने वाली सुनना चाहे न चाहे, वह बस सुनाता ही चला जाता.....।

विचार-शृंखला सहसा थम जाती।

आज की बात कुछ ख़ास है।

आज फिर से बनी है रसोई, कई पकवान अपनी महक से आसपास के वातावरण को सुवासित कर रहे हैं। खीर, पूरी, बड़ा, सब्जी, दाल, रायता, चावल, चटनी और सूखे मेवों के साथ-साथ सलाद भी। बस परोसना और जीमना ही तो शेष रह गया।

आज सबसे पहले सजेगी थाली पड़ोसी की। सबसे पहले वह जीमेगा फिर आएगी बारी गृहस्वामिनी की।

बहुत -बहुत याद आ रहा है आज पड़ोसी।

ऐसा प्रतीत हो रहा है - जैसे रसोई का कोना -कोना जुड़ी हुई हथेलियों के साथ निवेदन कर रहा हो कि आ भी जाओ और ग्रहण करो अपना हिस्सा, कम करो बोझ मेरे मन का।

आँखो में छाए नमी के बादल आख़िर बरस ही पड़ते हैं उसकी याद में।

आख़िर बारहवीं है आज असमय जाने वाले पड़ोसी की।

दो दिन का बुख़ार और जीवन लीला ख़त्म।

ऐसे भी कोई जाता है क्या?●

झूले का दाम

भावना सक्सेना

शहर में बड़ा पार्क बना था। समाचार पत्र उद्घाटन की तस्वीरों से भरा हुआ था। रेडियो पर, टेलीविज़न के हर चैनल पर पार्क की चर्चा थी।

मुनिया नहीं जानती थी 700 करोड़ कितना होता है; लेकिन जब माँ ने नुक्कड़ की दुकान पर डबलरोटी लाने भेजा तो वहाँ कुछ सुन आई थी और इतना समझ गयी थी कि बहुत बढ़िया पार्क बना है! अपनी कालोनी के सूखी मिट्टी वाले रेलिंग टूटे व गायों के गोबर से भरे पार्क में बहुत दिन से जाना छोड़ दिया था। वहाँ के सभी झूले भी तो टूट चुके थे। बहुत जिद करने पर और माँ के मनाने पर पिताजी रविवार को नए पार्क ले जाने को मान गए। आलू पूड़ी, थर्मस, चिप्स, छोटे अन्नू का बैट-बॉल लिये पार्क पहुँचे तो दरबान ने गेट पर ही सारा खाना रखवा दिया, ''अंदर खाना पीना मना है! जाते समय वापस मिल जाएगा; लेकिन बाहर का रास्ता दो नंबर गेट से है। यहाँ तक चलकर आना होगा!''

अंदर अन्नू ने बॉल उछाली तो तुरंत एक गार्ड दौड़ा आया। - '' अरे-अरे-रे ,बोर्ड नहीं देखते,क्या लिखा है - घास पर खेलना मना है!''

ताज़ा खिले गुलाब ने मुनिया की आँखों में चमक भर दी। उसने हौले से पंखुड़ी छुई तो माली चिल्लाया -''अए लड़की! फूल क्यों तोड़ रही है!''

वह रुआँसी हो उठी - '' पापा , मैं तो फूल छू रही थी!''

सुंदरता की फंकी लगाकर ट्रैक पर चलते बाहर निकलने को थे कि एकाएक मुनिया पूछ बैठी - '' माँ झूले कितने के आते हैं?''●

बचपन

मनोज सेवलकर

दादाजी अपने पोते के साथ बारिश में भीगते हुए, कागज की नावों को पानी में बहाकर आनंद ले रहे थे और उनकी पत्नी उन्हें बार-बार बारिश में भीगने से मना कर रही थी, परन्तु वे पत्नी की बातों को अनसुना कर पोते के साथ बारिश में भीगते हुए नाव बहाने का यह आनंद छोटे बच्चों की तरह ले रहे थे।

पोते ने दादाजी से प्रश्न किया-''दादाजी, आपको दादी कब से घर के अंदर बुला रही है, आप अंदर क्यों नहीं जा रहे हो.... ?''

उन्होंने पोते को समझाते हुए कहा-''बेटा ये बारिश के बहते पानी संग कागज की नाव का खेल मेरे बचपन का सबसे मजेदार खेल रहा है। जब तक साँस है, इस बचपन के मजे को जाने नहीं दूँगा। तुम्हारी दादी तो बूढ़ी हो गई है, उसे क्या मालूम बचपन का मजा....''उन्होंने जोर से घर की ओर आवाज लगाई ''नहीं आता जाओ, मेरी तुम से कुट्टी... ।''

दादा-पोता हँसते-हँसते फिर से अपने खेल में मग्न हो गए।●

यशोधरा भटनागर

खिड़की

गार्ड ने हरी झंडी दिखाई और इंजन के हॉर्न संग ट्रेन धीरे-धीरे सरकने लगी। लाल साड़ी और गहनों से सजी प्रिया सिमटकर खिड़की के पास बैठ गई।

आँखें बाहर ही कुछ खोजती रहीं। मम्मी-पापा के उदास चेहरे धुँधले हो गए। हाथ हिलाते हुए उसने गालों तक बह आए आँसू पोंछ लिये।

धीरे-धीरे सब कुछ पीछे छूटता जा रहा था। साथ था तो आशु का साँवला मुस्कराता चेहरा।

आशु! उसकी आँखें फिर भरभरा कर बरसने लगीं। शादी के साल भर बाद ही तो आशु को कैंसर ने ऐसा जकड़ा कि...और उसकी दुनिया रंगहीन हो, श्वेत-श्याम रंगों में सिमटकर रह गई। आँखें ही नहीं पथराई, वे जड़ भी हो गईं।

और एक दिन....सामने खड़ी पहाड़-सी जिंदगी का वास्ता देकर उसके हाथ फिर पीले कर दिए।

''आशु! आशु!'' खिड़की संग चलता चेहरा? ''आशु!'' -आँखें बेचैन हो उसे ढूँढने लगीं।

''प्रिया! थक गई होगी, थोड़ा आराम कर लो।'' बड़े प्यार से कंधे पर हाथ रख डॉ. प्रफुल्ल ने प्रिया की आँखों में झाँकते हुए खिड़की बंद कर दी....●

योगेन्द्र शर्मा

पहचान

''ओ रिक्शा.....बड़े बाजार चलेगा।''

''चलूँगा दीवान जी.....। और....सरकार कैसे हैं? पहले से कुछ कमजोर दिखाई दे रहे हैं। कुछ बीमार-ऊमार रहे क्या?''

''अबे तू तो ऐसे बात कर रहा है, जैसे पुरानी जान पहचान हो।''

''अरे आप भूल गए सरकार.....। पिछले साल राम बारात वाले दिन आपने मेरे ऐसा बेंत जमाया....ऐसा बेंत जमाया था कि अब तक निशान पड़ा हुआ है.....ये देखिए...।'' ''

''मारा होगा.....। सरकारी बेंत है, ये तो ससुरा

चलता ही रहता है।''

''लेकिन सरकार, मुझे मारने में आपकी कलाई में मोंच आ गई थी।''

''अरे.....तो तू किसना है, क्या?''●

रत्नकुमार साँभरिया

1-फूल

ओह! आज तो मन्दिर जाने में देर हो गई।दादी माँ ने दीवार घड़ी की ओर देखा। वे उतावली में गमले में लगे गुलाब के फूल को तोड़ने के लिए आगे बढ़ीं, तो उनका पाँचेक साल का पोता जिद कर बैठा कि फूल वह लेगा। दादी माँ ने जब उसे फूल न लेने के लिए कहा, तो वह रो-रोकर जिद पकड़ गया। वे उसको दुलारती हुई कहने लगीं-बेटे ,मैं तुम्हें ऐसे ही फूल मँगवा दूँगी; लेकिन ये अपने घर के गुलाब हैं, मैंने इनको भगवान् के लिए रखा हुआ है।

रोते-रोते बच्चे की साँस फूलने लगी थी। दादी माँ की पूजा और बच्चे की ज़िद को लेकर पूरा परिवार दो खेमों में बँट गया था। कुछ का मानना था -बच्चे भगवान् का रूप होते हैं। फूल...। परिवार के दूसरे लोग कुपित थे कि दादी माँ की पूजा में विघ्न पड़ा तो, भगवान् नाराज़ होंगे।

दादी माँ ने जब फूलों की ओर देखा, तो उनकी आँखें वहीं रुक गईं। फूलों का व्यथित मन मानों कह रह था-आदमी भी कितना नासमझ है! वह अपने हाथों बनाए भगवान् के सामने खुद गिड़गिड़ाता है, हमें सूख-सूखकर मरने के लिए उसके चरणों में फेंक आता है।

दादी माँ मानो सोकर जागीं। फूल लेकर बच्चे के हाथ में थमाया। और आँसुओं से धुले उसके गालों को चूमने लगी।

2-अन्तर

घोड़े की पीठ पर दिनभर पड़ी चाबुकें नील बनकर उभर आई थीं। उसके एक-एक रोएँ में लहू चुहचुहा रहा था। वह टीस के मारे बार-बार पैर पटकता था, गर्दन झटकता था। घोड़ा पीठ के असहनीय दर्द को आँसुओं में बहा देना चाहता था, भूखी कुलबुलाती अंतड़ियों ने उसे चारे में थूथन गड़ाने के लिए विवश कर दिया।

एकाएक घोड़े की गीली आँखें अपने मालिक की ओर घूमीं। वह घोड़े के पास ही चारपाई डाले बैठा था और चाबुक से छिली अपनी हथेली पर मेहंदी लगा रहा था। घोड़े का मन व्यथित हो गया। उसकी आँखें डबडबा आईं। वह चारा छोड़कर थोड़ा आगे बढ़ा। घोड़ा चाबुक से आहत अपने मालिक की हथेली को अपनी नर्म-नर्म जीभ से सहलाने लगा था।●

रश्मि विभा त्रिपाठी

कसौटी

''देख तेरी शादी नहीं चली, तो क्या तेरी जिन्दगी हमेशा के लिए रुक गई? उसी का कब तक मातम मनाएगी। आगे बढ़ और अपनी जिन्दगी का सफर दुबारा शुरू कर''- माँ ने नियति को समझाया।

नियति- ''माँ क्या ये जरूरी है?''

माँ- ''हाँ बेटा! एक मोड़ पर एक साथी की जरूरत हर किसी को होती है। मेरे जाने के बाद तेरा क्या होगा, तू अकेले कैसे रहेगी, मुझे यही चिंता दिन- ब- दिन खाए जाती है। इसलिए मैं चाहती हूँ कि मेरे जीते जी तू फिर से अपना घर बसा ले। मेरी बात सुन! मैंने सब जाँच-पड़ताल कर ली है। राज बहुत अच्छा लड़का है। उसका घर- बार भी अच्छा है और कमाता भी अच्छा है। बस एक अच्छा काम और हो जाए कि उसके और तेरे गुण मिल जाएँ।''

माँ की आँखों में उस वक्त आई चमक को देखकर वह चुप रही वरना कहना तो यही चाहती थी कि उसके बारे में भी तो सबने यही कहा था।

शायद माँ ने उसका चेहरा पढ़ लिया था। कहने लगीं- ''इस बार मैं तेरी कुण्डली वाजपेयी जी को दिखाऊँगी। वे बहुत ही अच्छे ज्योतिषी हैं। लड़के की कुण्डली व्हाट्स एप पर जैसे ही आ जाएगी, पण्डित जी को जाकर दिखा लूँगी। ईश्वर करे, तेरी और उसकी कुण्डली मिल जाए।''

नियति गहरी सोच में थी जैसे। विचारों के भंवर में फँसी हुई। माँ ने उसके कन्धे पर हाथ रखा तब वह बाहर निकली- ''क्या सोच रही है? तूने सुना या अबकी बार भी मुझे अनसुना कर दिया'' कहकर उन्होंने अपनी बात फिर से दुहराई।

नियति- ''माँ! अगर तुम यही चाहती हो कि मैं अपनी जिन्दगी का सफर दुबारा से शुरू करूँ तो ईश्वर से ये दुआ मत करो कि मेरी और उसकी कुण्डली मिल जाए।''

नियति के शब्द किसी शांत तालाब में जैसे कंकड़ की तरह थे। माँ ने हैरानी और कुछ गुस्से से भरकर उसका चेहरा देखा। भला ये क्या बात हुई? बिना कुण्डली मिलाए, बिना गुण मिलाए शादी कैसे होगी? वह कुछ बोलने ही वाली थीं कि नियति के बोल उनके कानों में पड़ते ही उनका गुस्सा पानी के बुलबुले की तरह फूट गया ''ये दुआ करो कि मन मिल जाए।''●

राधेश्याम भारतीय

मुआवजा

गाँव में आँधी और ओला-वृष्टि के कारण नष्ट हुई फसल के बदले मुआवजा राशि बाँटने एक अधिकारी आया।

बारी- बारी से किसान आ रहे थे और अपनी मुआवजा राशि लेते जा रहे थे।

जब सारी राशि बँट चुकी तो रामधन खड़ा हुआ और हाथ जोड़कर कहने लगा, '' साब जी, हमें भी कुछ मुआवजा दे दीजिए!''

''क्या तुम्हारी भी फसल नष्ट हुई है?''

''नहीं साब जी! हमारे पास तो जमीन ही नहीं है।''

''..तो तुम्हें मुआवजा किस बात का?'' - अधिकारी ने सहज भाव से कहा।

'' साबजी, किसान की फसल होती थी..... हम गरीब उसे काटते थे और साल भर भूखे पेट का इलाज हो जाता था। अब फसल तबाह हो गई तो बताइए हम क्या काटेंगे....और काटेंगे नहीं तो खाएँगे क्या?''

''तुम्हें कुछ नहीं मिलेगा...जाइए अपने घर।'' इस बार अधिकारी कुछ क्रोधित स्वर में बोला।

रामधन माथा पकड़े वहीं बैठा रहा।●

डॉ. रामकुमार घोटड़

छत्रछाया

घर के पिछवाड़े में खाली जगह पर पेड़ लगे हुए थे। पिताजी की मृत्यु के बाद लड़के ने कटवाने शुरू कर दिए। जब एक पेड़ शेष रहा तब माँ ने कहा, ''बेटा, इस पेड़ को रहने दो, काटो मत।''

''क्यों माँ?''

''यह पेड़ तुम्हारे पिताजी का लगाया हुआ है।''

''किसी पेड़ को कोई न कोई लगाता ही है माँ।''

''मैं इसी पेड़ में तुम्हारे पिताजी की आत्मा का अहसास करती हूँ। जब भी मैं इसकी छाँव में बैठती हूँ तो मन को सकून मिलता है, और यूँ लगता है कि मैं उनके स्नेह, सानिध्य व छत्रछाया में बैठी हूँ।''

और लड़के ने उसकी बगल में एक और पेड़ लगा दिया।●

रामेश्वर काम्बोज 'हिमांशु'

1-उड़ान

चार बज चुके थे। डाकिए के आने की उम्मीद अब नहीं रही थी। मनीआर्डर आया होता तो वह ज़रूर आता। आत्माराम ने ठण्डी साँस ली। कबूतर-कबूतरी और बच्चा सुबह तक घोंसले को आबाद किए हुए थे। बाहर से दाना लाकर जब वे घोंसले में लौटते, बच्चा अपनी नन्ही-सी चोंच खोलकर कभी कबूतर की ओर मुड़ जाता, कभी कबूतरी की ओर। चुग्गा लेकर वह उनके पंखों के नीचे दुबककर बैठा रहता।

अब थोड़ा-सा उड़ने भी लगा था। लकवे के कारण टेढ़े हुए मुख को ऊपर उठाकर आत्माराम भरी-भरी आँखों से उन्हें देखते रहते। उस समय वे भी अपने को कबूतर समझने लगते। अकेला और तन्हा कबूतर।

सूर्यास्त हो गया। कबूतर घोंसले में आ गया। थोड़ी देर बाद कबूतरी भी आ पहुँची। दोनों काफ़ी देर तक गुमसुम-से बैठे रहे। कबूतरी ने अपनी ढीली और उदास गर्दन कबूतर की गर्दन-से सटा ली। धुँधलका छाने लगा। बच्चा नहीं लौटा। आत्माराम का हृदय भीग गया। बेटे ने गाँव में आना साल-भर पहले ही बन्द कर दिया था। अब पैसा भेजे भी तीन महीने हो गए।

आज घोंसले का सूनापन उसे बेचैन किए दे रहा था। नन्हा बच्चा उड़कर कहीं और चला गया था।

दो गरम-गरम आँसू एकदम लावे की तरह, ढुलक आए. वह और अधिक उदास हो गया।

2-खुशबू

दोनों भाइयों को पढ़ाने-लिखाने में उसकी उम्र के खुशनुमा साल चुपचाप बीत गए। तीस वर्ष की हो गई शाहीन इस तरह से। दोनों भाई नौकरी पाकर अलग-अलग शहरों में जा बसे।

अब घर में बूढ़ी माँ है और जवानी के पड़ाव को पीछे छोड़ने को मजबूर वह। खूबसूरत चेहरे पर सिलवटें पड़ने लगीं। कनपटी के पास कुछ सफेद बाल भी झलकने लगे। आईने में चेहरा देखते ही शाहीन के मन में एक हूक-सी उठी-

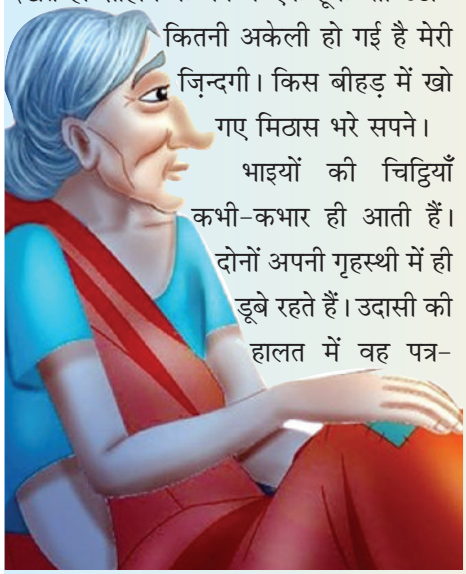

कितनी अकेली हो गई है मेरी ज़िन्दगी। किस बीहड़ में खो गए मिठास भरे सपने।

भाइयों की चिट्ठियाँ कभी-कभार ही आती हैं। दोनों अपनी गृहस्थी में ही डूबे रहते हैं। उदासी की हालत में वह पत्र-व्यवहार बंद कर चुकी है। सोचते-सोचते शाहीन उद्वेलित हो उठी। आँखों में आँसू भर आए। आज स्कूल जाने का भी मन नहीं था। घर में भी रहे तो माँ की हाय-तौबा कहाँ तक सुने? उसने आँखें पोंछीं और रिक्शा से उतरकर अपने शरीर को ठेलते हुए गेट की तरफ कदम बढ़ाए। पहली घंटी बज चुकी थी। तभी ''दीदीजी-दीदीजी'' की आवाज़ से उसका ध्यान भंग हुआ।

''दीदीजी, यह फूल मैं आपके लिए लाई हूँ।'' दूसरी कक्षा की एक लड़की हाथ में गुलाब का फूल लिए उसी तरफ बढ़ी।

शाहीन की दृष्टि उसके चेहरे पर गई। वह मंद-मंद मुस्करा रही थी। उसने गुलाब का फूल शाहीन की तरफ बढ़ा दिया। शाहीन ने गुलाब का फूल उसके हाथ से लेकर उसके गाल थपथपा दिए।

गुलाब की खुशबू उसके नथुनों में समाती जा रही थी। वह स्वयं को इस समय बहुत हल्का महसूस कर रही थी। उसने रजिस्टर उठाया और उपस्थिति लेने के लिए गुनगुनाती हुई कक्षा की तरफ तेजी से बढ़ गई।

3-खूबसूरत

विजय से मिले पाँच बरस हो गए थे। उसकी शादी में भी नहीं जा सका था। सोचा-अचानक पहुँचकर चौंका दूँगा। इस शहर में आया हूँ तो मिलता चलूँ।

दरवाज़ा एक साँवली थुलथुल औरत ने खोला। मैंने सोचा-होगी कोई।

मैंने अपना परिचय दिया।

''बैठिए, अभी आते होंगे नज़दीक ही गए हैं''-थुलथुल औरत मधुर स्वर में बोली।

मेरी आँखें श्रीमती विजय की तलाश कर रही थीं। आसपास कोई नज़र नहीं आया।

''क्या लेंगे आप? चाय या ठण्डा?'' थुलथुल ने विनम्रता से पूछा।

''चाय ही ठीक रहेगी''-मैंने घड़ी की तरफ़ देखा।

''तब तक आप हाथ-मुँह धो लीजिए''-साबुन तौलिया थमाकर उसने बाथरूम की तरफ़ संकेत किया।

हो सकता विजय की पत्नी ही हो। पर विजय जिसके पीछे कालेज की लड़कियाँ मँडराया करती थीं, ऐसी औरत से शादी क्यों करने लगा। हाथ-मुँह धोते हुए मैं सोचने लगा। यदि यही उसकी पत्नी है, तो वह शर्म के कारण मेरे सामने नज़र भी नहीं उठा सकेगा। कहाँ वह, कहाँ यह!

''भाई साहब आ जाइए. चाय तैयार है।'' -साँवली की मधुर आवाज़ कानों में जलतरंग-सी बजा गई।

ड्राइंगरूम में आकर बैठा ही था कि विजय भी आ गया।

''तुम्हारी पत्नी''-मैंने अचकचाते हुए पूछा।

''बहुत खूब! इतनी देर से आए हो, मेरी पत्नी से भी नहीं मिल पाए।''

''तुम भी हमेशा बुद्धू ही रहोगे!''

उसने थुलथुल की तरफ़ इशारा किया और गर्व से कहा-''यही है मेरी पत्नी सविता।''

''लीजिए भाई साहब!'' सविता ने बर्फ़ी की प्लेट मेरी तरफ़ बढ़ाई। उसकी आँखें खुशी से चमक रहीं थीं।

मैंने उसे ध्यानपूर्वक देखा-वह मुझे बहुत ही खूबसूरत लग रही थी।

4-गंगा स्नान

दो जवान बेटे मर गए. दस साल पहले पति भी चल बसे। दौलत के नाम पर बची थी सिलाई मशीन। सत्तर साला बूढ़ी पारो गाँव-भर के कपड़े

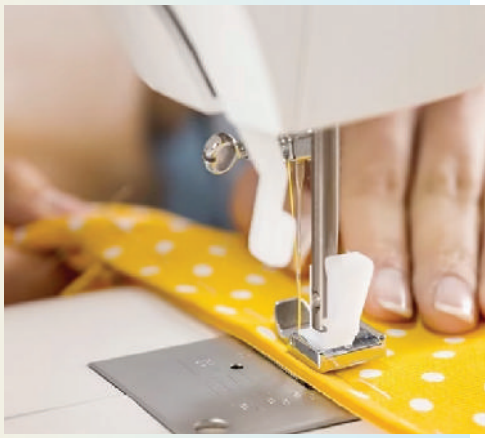

सिलती रहती। बदले में कोई चावल दे जाता तो कोई गेहूँ या बाजरा। सिलाई करते समय उसकी कमज़ोर गर्दन डमरू की तरह हिलती रहती। दरवाज़े के सामने से जो भी निकलता वह उसे राम-राम कहना न भूलती।

दया दिखाने वालों से उसे हमेशा चिढ़ रहती। छोटे-छोटे बच्चे दरवाज़े पर आकर ऊधम मचाते; लेकिन पारो उनको कभी बुरा-भला न कहकर उलटे खुश होती। प्रधानजी कन्या पाठशाला के लिए चंदा इकट्ठा करने निकले, तो पारो के घर की हालत देखकर पिघल गए-''क्यों दादी, तुम हाँ कह दो तो तुम्हें बुढ़ापा-पेंशन दिलवाने की कोशिश करूँ?''

पारो घायल-सी होकर बोली-''भगवान ने दो हाथ दिए हैं।''

''मेरी मशीन आधा पेट रोटी दे ही देती है। मैं किसी के आगे हाथ नहीं फैलाऊँगी। क्या तुम यही कहने आए थे? ''

''मैं तो कन्या पाठशाला बनवाने के लिए चंदा लेने आया था; पर तेरी हालत देखकर...।''

''तू कन्या पाठशाला बनवाएगा?''- पारो के झुर्रियों से भरे चेहरे पर सुबह की धूप-सी खिल गई।

''हाँ, एक दिन ज़रूर बनवाऊँगा दादी। बस तेरी असीस चाहिए।''

पारो घुटनों पर हाथ टेककर उठी। ताक पर रखी जंगखाई संदूकची उठा लाई। काफी देर तक उलट-पलट करने पर बटुआ निकाला।

उसमें से तीन सौ रुपये निकालकर प्रधानजी की हथेली पर रख दिए-''बेटे, सोचा था-मरने से पहले गंगा नहाने जाऊँगी। उसी के लिए जोड़कर ये पैसे रखे थे।''

''तब ये रुपये मुझे क्यों दे रही हो? गंगा नहाने नहीं जाओगी?''

''बेटे तुम पाठशाला बनवाओ। इससे बड़ा गंगा-स्नान और क्या होगा।'' कहकर पारो फिर कपड़े सीने में जुट गई।

5-धारणा

मैं इस शहर में बिल्कुल अनजान था। काफी भाग-दौड़ करके किसी तरह पासी मुहल्ले में एक मकान खोज सका था। परसों ही परिवार शिफ़्ट किया था। बातों ही बातों में आफ़िस में पता चला कि मैं अपना परिवार पासी मुहल्ले में शिफ़्ट कर चुका हूँ। बड़े साहब चौंके-आप सपरिवार इस मुहल्ले में रह पाएँगे?

क्या कुछ गड़बड़ हो गई सर? मैंने हैरानी से पूछा।

बहुत गन्दा मुहल्ला है। यहाँ आए दिन कुछ न कुछ लफड़ा होता रहता है। सँभलकर रहना होगा। साहब के माथे पर चिन्ता की रेखाएँ उभरी-यह मुहल्ला गन्दे मुहल्ले के नाम से बदनाम है। गुण्डागर्दी कुछ ज़्यादा ही है यहाँ।

मैं अपनी सीट पर आकर बैठा ही था कि बड़े बाबू आ पहुँचे-सर आपने मकान गन्दे मुहल्ले में लिया है?

लगता है मैंने ठीक नहीं किया है-मैं पछतावे के स्वर में बोला।

हाँ, सर ठीक नहीं किया है। यह मुहल्ला रहने लायक नहीं है। जितना जल्दी हो सके, मकान बदल लीजिए-उन्होंने अपनी अनुभवी आँखें मुझ पर टिका दीं।

इस मुहल्ले में आने के कारण मैं चिन्तित हो उठा। घर के सामने पान- टाफ़ी बेचने वाले खोखे पर नज़र गई। खोखेवाला काला-कलूटा मुछन्दर एक दम छँटा हुआ गुण्डा नज़र आया। कचर-कचर पान चबाते हुए वह और भी वीभत्स लग रहा था।

सचमुच मैं ग़लत जगह पर आ गया हूँ। मुझे रात भर ठीक से नींद नहीं आई। छत पर किसी के कूदने की आवाज़ आई। मेरे प्राण नखों में समा गए। मैं डरते-डरते उठा। दबे पाँव बाहर आया। दिल ज़ोरों से धड़क रहा था। मुण्डेर पर नज़र गई, वहाँ एक बिल्ली बैठी थी।

आज दोपहर में बाज़ार से आकर लेटा ही था कि आँख लग गई। कुछ ही देर बाद दरवाज़े पर थपथपाहट हुई। दरवाज़ा खुला हुआ था। मैं हड़बड़ाकर उठा।

सामने वही पान वाला मुछन्दर खड़ा मुस्करा रहा था। दोपहर का सन्नाटा। मुझे काटो तो खून नहीं।

क्या बात है? मैंने पूछा।

शायद आपका ही बच्चा होगा। टाफ़ी लेने के लिए आया था मेरे पास। उसने यह नोट मुझको दिया था-कहते हुए पान वाले ने सौ का नोट मेरी ओर बढ़ा दिया। मैं चौंका। यह सौ का नोट मेरी कमीज़ की जेब में था। देखा-जेब खाली थी। लगता है सोनू ने मेरी जेब से चुपचाप सौ का यह नोट निकाल लिया था।

''टाफ़ी के कितने पैसे हुए?''

''सिर्फ़ पचास पैसे। फिर कभी ले लेंगे''- वह कचर-कचर पान चबाते हुए मुस्कराया। दूधिया मुस्कान से उसका चेहरा नहा उठा-''अच्छा। बाबू साहब, प्रणाम!'' कहकर वह लौट पड़ा।

मैं स्वयं को इस समय बहुत हल्का महसूस कर रहा था।

6-कमीज़

महीने की आखिरी तारीख! शाम को जैसे ही पर्स खोलकर देखा, दस रुपये पड़े थे। हरीश चौंका, सुबह एक सौ साठ रुपये थे। अब सिर्फ़ दस रुपये। बचे हैं?

पत्नी को आवाज दी और तनिक तल्खी से पूछा, ''पर्स में से एक सौ पचास रुपए तुमने लिये हैं?''

''नहीं, मैंने नहीं लिये।''

''फिर?''

''मैं क्या जानूँ किसने लिये हैं।''

''घर में रहती हो तुम, फिर कौन जानेगा?''

''हो सकता है किसी बच्चे ने लिये हों।''

''क्या तुमसे नहीं पूछा?''

''पूछता तो मैं आपको न बता देती, इतनी बकझक क्यों करती।'' हरीश ने माथा पकड़ लिया। अगर वेतन मिलने में तीन-चार दिन की देरी हो गई तो घर में सब्जी भी नहीं आ सकेगी। उधार माँगना तो दूर, दूसरे को दिया अपना पैसा माँगने में भी लाज लगती है। घर में मेरी इस परेशानी को कोई कुछ समझता ही नहीं!

''नीतेश कहाँ गया?''

''अभी तो यहीं था। हो सकता है खेलने गया हो।''

''हो सकता है का क्या मतलब? तुम्हें कुछ पता भी रहता है या नहीं'' , वह झुँझलाया।

''आप भी कमाल करते हैं। कोई मुझे बताकर जाए ,तो ज़रूर पता होगा। बताकर तो कोई जाता नहीं, आप भी नहीं'' , पत्नी ठण्डेपन से बोली।

इतने में नीतेश आ पहुँचा। हाथ में एक पैकेट थामे।

''क्या है पैकेट में?'' हरीश ने रूखेपन से पूछा। वह सिर झुकाकर खड़ा हो गया।

''पर्स में से डेढ़ सौ रुपये तुमने लिये?''

''मैंने...लिये'' , वह सिर झुकाए बोला।

''किसी से पूछा?'' हरीश ने धीमी एवं कठोर आवाज में पूछा।

''नहीं'', वह रूआँसा होकर बोला।

''क्यों? क्यों नहीं पूछा'' , हरीश चीखा।

''...।''

''चुप क्यों हो? तुम इतने बड़े हो गए हो। तुम्हें घर की हालत का अच्छी तरह पता है। क्या किया पैसों का'' , उसने दाँत पीसे।

नीतेश ने पैकेट आगे बढ़ा दिया-''पंचशील में सेल लगी थी। आपके लिए एक शर्ट लेकर आया हूँ। कहीं बाहर जाने के लिए आपके पास कोई अच्छी शर्ट नहीं है।''

''फि...फिर...भी...पूछ तो लेते ही'', हरीश की आवाज की तल्खी न जाने कहाँ गुम हो गई थी। उसने पैकेट को सीने से सटा लिया।

7-टुकड़खोर

अभय खा-पीकर कमर सीधी करने के लिए लेटा ही था कि घर के कोने पर एक कुत्ता ज़ोर-ज़ोर से भौंकने लगा। उसने खिड़की से उस पर कंकड़ दे मारा। चोट खाकर कूँ-कूँ करता हुआ कुत्ता वहाँ से भाग खड़ा हुआ।

कुछ क्षण बाद वह चादर ओढ़कर लेटा ही था कि कुत्ते की आवाज़ और तेज हो गई। लगा, जैसे वह उसके सिर पर ही भौंक रहा है। वह भुनभुनाया, ''दफ्तर में साहब नहीं चैन लेने देते। रात के नौ बजे जाकर पिण्ड छोड़ा, वह भी सुबह जल्दी आने की मीठी हिदायत के साथ। आज दिन-भर फाइलों में आँखें टाँकनी पड़ीं। उलटे-सीधे काम करें साहब, सब शिकायतों के जवाब तैयार करे वह। टरकाते भी नहीं बनता। न जाने साहब का माथा कब गरम हो जाए? कब उसे रूखी-सूखी सीट पर पटक दे? इस दफ्तर में क्लर्की करना कुत्ता घसीटी से भी बदतर है। हरदम जी-जी कहते हुए मुँह सूख जाता है। मेडिकल क्लेम में अड़ंगे लगने का खटका न होता, तो मजा चखा देता खूसट को।''

भौंकने की आवाज़ रात के गहराते सन्नाटे को चाकू की तरह चीरने लगी। वह झुँझलाकर उठा-''हरामजादे, तेरी खबर लेनी पड़ेगी।''

उसने दरवाज़ा खोला। दरवाज़ा खुलने की आवाज़ सुनकर कुत्ता भौंकते-भौंकते बेहाल हो उठा। वह डण्डा उठाने लगा, तो पत्नी ने टोका, ''आज क्या हो गया है आपको? अगर यह कुत्ता रात-भर भौंकता रहा, तो आप रात-भर डण्डा लेकर इसके पीछे दौड़ते रहेंगे क्या?''

''बिना डण्डा खाए यह चुप होने वाला नहीं।'' वह झल्लाया।

''आप रुकिए।'' कहकर पत्नी उठी और कटोरदान से एक रोटी निकाल लाई। अतू-अत... की आवाज़ लगाकर पत्नी ने रोटी गली में फेंक दी।

कुत्ते ने लपककर रोटी उठाई। एक बार पीछे मुड़कर देखा और तीर की तरह दूसरी गली में तेजी से मुड़ गया।●

विभा रश्मि

1- निर्माता

आज हर चैनल पर उस लड़की की चर्चा थी, जो बहुदलीय बैठक में मंत्री जी के साथ- साथ दिखाई पड़ रही थी।

''नई या पुरानी पहचान ... कुछ तो होगा ही?''

''नहीं ऐसा कुछ नहीं।''- मंत्री जी सावधानी से चारों ओर देखकर अपने साथ बैठेधोती धारी को सफ़ाई देते हुए बोले।

''सब कुछ अचानक हुआ, एक राजनीतिक मीटिंग अटेंड करनी थी, सो इस लड़की में कुछ स्पार्क दिखा। कुशल राजनीतिक बनाने के नज़रिये से साथ ले लिया। आई कैन डू दिस।''

यूनिवर्सिटी के एक प्रोग्राम में, मंत्री जी मुख्य- अतिथि थे, उनके स्वागत के लिए खूबसूरत लड़कियों के ग्रुप में इस बाला को सामने रखा गया था। तब से ही वो मंत्री जी की लिस्ट में टॉप पर चल रही थी। फिर सफ़ाई दी-''कॉलेज के कुछ लड़के -लड़कियाँ हम से मिले थे, जो राजनीति को अपना करियर बनाने के इच्छुक थे। सो उन्हें तुरंत चांस दे दिया।''

''अपने राजनैतिक स्वार्थ के लिए ऊर्जावान युवाओं को भुनाना जायज़ था। हमेशा होता चला आया था। इतिहास देखो।''

मंत्री जी ने तर्क दे डाला। मंत्री महाशय जी हर लिस्ट को पर्सनली चेक कर रहे थे। इसलिए अचानक आज उस खूबसूरत बाला को बुलावा भेजा। आज तक कभी किसी ने पचास रुपये भी लड़की की हथेली पर नहीं रखे थे। पर आज तो लॉटरी लग गई ....। मंत्री जी का बुलावा...। मध्यवर्गीय लड़की के परिवार में जश्न का माहौल था।

कभी मंत्री जी और कभी उनकी नई खूबसूरत पी.ए का मोबाइल बारी - बारी से बज रहा था। बधाई देने वालों का ताँता लगा हुआ था।

उधर मंत्री जी के लड़की को पी.ए . घोषित कर चुकने के बाद उन्होंने एक ठंडी 'आह' भर कर सोचा - ''राजनीति का कैरियर भी कितना फलदायी हो गया है अब तो ...।''

मंत्री जी के मन की वक्रता अधरों पर फैल गई थी ...।

2 - मौन शब्द

'' सुनो! वे दोनों सुबह से ही झगड़ रहे हैं आज ...।''

'' बहू - बेटे की खूब नोक - झोंक , रूठना - मनाना जारी है ...।''

घबराकर अधेड़ पत्नी अपने पति से बोली।

जब उसकी घबराहट कम न हुई तो फिक्रमंद हो वो पुन: बोल पड़ी -

'' सुनो न! उनके बेड रूम से तेज़ स्वर में बहस सुनाई पड़ रही है , खूब झगड़ रहे हैं दोनों।''

''क्यों, क्या हुआ?''- पति का स्वर।

''शिकायत चल रही है , दो साल हो गए शादी को, बहू ने न जाने कितनी बार हमारे बेटे से प्यार का इज़हार किया। पर हमारे बेटे ने , 'वो शब्द' नहीं बोले पलटके, जो आजकल बोलने का बहुत फ़ैशन हो गया है।''

''...''

''क्या...नहीं बोला? कौ... न से शब्द?'' पति का अनाड़ी- सा सवाल।

''वो... ही...।''

पत्नी के नेत्रों में इस उम्र में भी रंगीन बल्बों की लड़ियाँ जल उठी थीं।

''अच्छा...अच्छा...।'' पति समझ गए। उन्हें लगा पत्नी कहीं वो 'ख़ास शब्द' बोल न सकी।

आगे बढ़कर उन्होंने अधेड़ पत्नी की मुलायम हथेली, अपनी दोनों हथेलियों में कैदकर उसे चुप करा दिया, तो वह उसे असीम प्यार से निहारने लगी ...।●

शशि पाधा

मंजिलें लाँघता दर्द

बस दो ही जन थे उस कमरे में। पाँच साल का ध्रुव और पैंसठ साल की दादी माँ। दोनों अपनी-अपनी आयु के अनुसार अपनी दिनचर्या में व्यस्त थे। दादी अपने घुटनों पर दर्द मिटाने की दवा लगा रही थी और ध्रुव अपने बिल्डिंग बनाने वाले खिलौनों के ब्लाक्स जोड़-जोड़कर ऊँची बिल्डिंग तैयार कर रहा था। एक के ऊपर एक, बहुत ऊँची, शायद पाँचवी मँजिल तक पहुँच गया था। नीचे कार पार्किंग भी थी। उसमें कार के स्थान पर ट्राई साइकल खड़ी हुई थी। ये था पाँच वर्ष के बच्चे का पहला वाहन। ध्रुव अक्सर कहता था कि वह बड़ा होकर बिल्डर बनेगा और बड़े - बड़े घर बनवाएगा।

आज यही देखकर दादी माँ मुस्कुराने लगी, ''क्या बन रहा है?'' उन्होंने यूँ ही पूछ लिया।

''बड़ी सी बिल्डिंग। इसमें हम सब मिलकर रहेंगे। चाचा, मासी और मेरे सारे कज़िन्स। कितना मजा आएगा न दादी।'' ध्रुव ने बड़े उत्साह से कहा।

''हुम्म!'' -दादी माँ ने ब्लाक्स की बनी बिल्डिंग पर एक सरसरी दृष्टि डाली। आज घुटनों में कुछ ज़्यादा ही दर्द था। दवा लगाते हुए मुँह से एक कराह-सी निकल गई।

ध्रुव ने दादी की ओर देखकर बड़े भोलेपन से कहा, ''दर्द हो रहा है? ऊपर से दूसरी दवा ले आइए न!''

''न बेटा! कोई बात नहीं , ठीक हो जाऊँगी कुछ देर में''- दादी ने उत्तर दिया

ध्रुव बहुत मासूमियत से दादी से बोला, ''आप चिंता मत करो, मैं सब ठीक कर दूँगा।''

मासूम ध्रुव के सांत्वना के शब्द सुनकर वह मुस्कुरा दी। अब दर्द भी कुछ कम हो रहा था, शायद दवा ने असर करना शुरू कर दिया था या ध्रुव की सांत्वना ने। अब वह भी उसके खेल में ध्यान लगाने लगी।

''ये क्या कर रहा है ध्रुव! वह बिल्डिंग की ऊपरी मंज़िलों से ब्लाक्स क्यों निकाल रहा है?'' दादी माँ को उत्सुकता हुई कि क्या हो रहा है। अधिकतर दो चार दिनों के लिए बिल्डिंग को न हटाने की हिदायत रहती है। पर आज...?

आज तो बिल्डिंग की सब से नीची वाली मंजिल पर कुछ और कमरे बन रहे थे। एक और कार पार्क भी बन गया। बाहर से लाए कुछ पत्ते-टहनियाँ सज गए। धीरे- धीरे सारी ऊपरी मंज़िलों के ब्लाक्स नीचे आ गए थे। भला आज क्या बन रहा है?

दादी अभी इसी सोच में थी कि अचानक ध्रुव ने उनकी कुर्सी के पास आकर बड़े प्यार से कहा, ''दादीमाँ! देखिए न,अब मैंने केवल एक ही मंजिल का घर बनाया है। लिफ्ट खराब होने पर आप को सीढ़ियाँ चढ़ने में दर्द होता है न; इसीलिए यह बड़ा- सा घर बनाया है। सब यहीं रहेंगे। सभीईईईई...।''

और दादी माँ का दर्द कई मंजिलें लाँघता हुआ कहीं दूर उड़ गया।●

शिवचरण सरोहा

कसूर

वसंत का एक मोहक दिन था। एक छोटा बच्चा प्रभात अपनी कक्षा में बैठा था। सभी बच्चे अपनी-अपनी कॉपी में सुलेख लिख रहे थे। बच्चा मंत्रमुग्ध- सा खिड़की के बाहर बगीचे को देख रहा था।

''लिखता क्यों नहीं?'' सर की भारी आवाज़ के साथ छड़ी उसकी पीठ पर पड़ी। छड़ी पड़ते ही वह तिलमिला उठा। आँखों में पानी उतर आया। बाहर बगीचे में फूल पर बैठी तितली उड़ गई।●

डॉ. शिवजी श्रीवास्तव

इकतीसवाँ दिन

समस्या वही पुरानी थी, विधवा माँ की जिंदगी दो बेटों के बीच बाँटी जा रही थी। पंद्रह-पंद्रह दिन तो ठीक थे पर इकतीसवें दिन का खर्चा कौन वहन करेगा। दोनों भाई माथापच्ची कर रहे थे, ताकि समाधान भी निकल आए और सामाजिक प्रतिष्ठा भी बनी रहे। दोनों में कोई भी इतना कम सामर्थ्यवान भी नहीं था कि एक अतिरिक्त दिन माँ को खिला न सके फिर भी दोनो भाइयों में छुपी ईर्ष्या थी कि दूसरे का खर्च उससे कम न हो जाए। बड़े का सुझाव था कि इकतीस तारीख में माँ कहीं भी रहे खर्च दोनों भाई आधा-आधा बाँट लेंगे पर छोटा सहमत नहीं था। वह बड़े की चालाकियों से वाकिफ था। वह जानता था हर इकतीस तारीख को माँ उसके जिम्मे कर दी जाएगी पर खर्च देने में बड़ा किचकिच करेगा। आखिर छोटे ने ही समाधान सुझाया-दीदी के पास ?..आखिर बेटी की भी तो कुछ जिम्मेदारी होती है,उसे भरपूर दहेज दिया गया है, तीज-त्योहार भर-भर झोली दिया जाता है..महीने में एक दिन माँ को नहीं रख सकती ?..फिर वह रहती भी तो इसी शहर में है कहीं बाहर भी नहीं जाना।...झटपट बहन को फोन मिलाया गया। बहनोई भले आदमी थे उन्होंने प्रस्ताव स्वीकार करते हुए इतना ही कहा-'हम लोगों को कोई परेशानी नहीं एक दिन रहें या एक महीना, पर माँ जी से भी पूछ लीजिए, इस उम्र में उन्हें अच्छा लगेगा बेटी के घर रहना, बहुत पुराने विचारों की हैं वे ?

-''इसमें माँ से क्या पूछना ?''-दोनों भाइयों ने समवेत स्वर में कहा-'उन्हें कोई जंगल या वृद्धाश्रम तो भेज नहीं रहे। बेटी के घर ही तो भेज रहे हैं,वह भी केवल इकतीस तारीख के दिन यानी साल में केवल सात दिन।'..दुनिया-दिखावे के लिए सर्वसम्मत-सम्मानजनक हल निकल आया, दोनों ने चैन की साँस ली। माँ से कुछ पूछा नहीं गया बस उन्हें बतला दिया गया। माँ की शंटिंग शुरू हो गई। उनका एक बैग हमेशा तैयार रहता।हर पन्द्रहवें दिन एक स्थान से दूसरे स्थान पर ठेल दी जातीं। माँ की मुस्कान गायब हो गई, वे हमेशा गुमसुम बनी रहती, पर हाँ, जब इकतीस तारीख होती, तो चेहरा थोड़ा खिल जाता जिसे देखकर दोनों ही बेटे-बहू कुढ़ जाते। ये सिलसिला दो महीने ही चल पाया। तीसरे महीने इकतीस तारीख की सुबह- सुबह छोटा बेटा माँ को दीदी के घर छोड़कर आया पर एक घण्टे बाद अचानक ही माँ के सीने में दर्द हुआ एक हिचकी आई और प्राण-पखेरू उड़ गए। रोना-पीटना मच गया। शाम तक माँ के अंतिम संस्कार की तैयारियाँ कर ली गईं। सब लोगों के साथ दोनों भाई भी शोक-मुद्रा में मुँह लटकाए खड़े थे। अंतिम यात्रा हेतु अर्थी तैयार थी...दोनों भाई माँ को कंधा देने के लिए झुके अचानक एक कड़कती आवाज हवा में गूँजी-'रुको'....सब चौंक गए। कंधा देने के लिए अर्थी की ओर झुकते भाई अचानक खड़े होकर आवाज की ओर मुड़े...बहन चंडी बनी खड़ी थी। उसके नेत्रों से चिंगारियाँ निकल रही थीं। स्वर में तीखापन था-''खबरदार! जो किसी भी भाई ने माँ की अर्थी को हाथ लगाया...आज इकतीसवाँ दिन है आज माँ हमारे हिस्से में है, उसकी सारी जिम्मेदारियों से तुम लोग आज मुक्त हो।''..इतना कहते हुए उसने आगे झुककर माँ की अर्थी अपने कंधे पर लेने का प्रयास किया और बुलंद स्वर में बोली-राम नाम..पीछे स्वर गूँजे. .. सत्य है..शव यात्रा शुरू हो गई। माँ की अर्थी में एक कंधा बेटी का भी था। दोनों भाई लुटे-पिटे से भीड़ के साथ पीछे-पीछे चलने लगे।●

श्याम सुन्दर अग्रवाल

1-गुलाब वाला कप

सुबह-सवेरे चाय बनाने हेतु बुजुर्ग हीरालाल रसोईघर में पहुँचे, तो गुलाबी कप अपने स्थान पर नहीं था। उन्होंने हर तरफ निगाह घुमाई। लेकिन कप कहीं भी दिखाई नहीं दिया। नये कप तो पड़े थे, पर उनका पसंदीदा गुलाबी कप गायब था। पहले तो शेल्फ पर ही रखा होता था। उनका दोस्त दे गया था, शादी की पच्चीसवीं वर्षगाँठ पर। बोला था—गुलाबी कपों में चाय पीने से प्यार गहरा होता है। तब से वे उन्हीं गुलाबी कपों में ही चाय पीते आ रहे थे। छह में से दो कप बेटे की शादी में टूट गए, दो बेटी की शादी में। उन कपों में चाय पीने वाले तब तक वे रह भी दो ही गए थे। पाँच वर्ष पहले जीवन-संगिनी गुलाब के साथ छोड़ जाने से पहले ही एक कप बहू से टूट गया था। तब कई बार वह और गुलाब एक ही कप में बारी-बारी से घूँट भर चाय पीते थे। आखिरी बचे कप को वह स्वयं ही धोकर रखते; ताकि कहीं टूट न जाए। किसी और कप में उन्हें चाय स्वाद ही नहीं लगती थी।

तभी बहूरानी उठकर आ गई। उन्होंने उससे कप के बारे में पूछ लिया।''

''बहुत पुराना हो गया था, पापा जी! दूसरे कपों में रखा अलग-सा अकेला कप अच्छा नहीं लगता था। कल रात रसोई की साफ-सफाई के दौरान आपके बेटे ने फेंक दिया। नए कप लाए हैं, उनमें से ले लो। चाय ही तो पीनी है।''

''अच्छे को क्या हुआ था, सुन्दर लगता था।''

वे मुँह में ही बुड़बुड़ाते हुए कमरे में आकर बिस्तर पर ढेर हो गए।

''इन्हें क्या पता पुरानी चीजों की अहमियत। मैं और गुलाब उस कप में ही चाय पीते रहे हैं। कप की डंडी पर उसकी उंगलियों के निशान थे और किनारों पर होठों के...इतने ध्यान से धोता था कि कहीं किसी निशान पर साबुन न लग जाए...इन्हें क्या पता यादों का मोल...।''

उस दिन के बाद वे कभी रसोईघर में नहीं गए। बहू कितनी भी अदरक-इलायची डालकर चाय बना देती, पर उन्हें कभी स्वाद नहीं लगी। आधी पीते, आधी छोड़ देते।

2-स्कूल

''अंकल, बंटी आपके पास तो नहीं आया।''- पड़ोसियों की लड़की दरवाजे पर खड़ी पूछ रही थी।

''नहीं बेटे, क्या बात हो गई?'' -मैंने पूछा।

''उसके स्कूल की रिक्शा खड़ी है और उसका कुछ पता नहीं। न जाने बस्ता फेंककर कहाँ चला गया।''

लड़की के चेहरे से चिंता व परेशानी झलक रही थी।

बंटी से मुझे बहुत प्यार था और उसे मुझसे। था तो मैं उसके बाबा की उम्र का, मगर बंटी मुझसे ऐसे व्यवहार करता, जैसे मैं उसका हमउम्र होऊँ। वह घंटों मेरे साथ खेलता रहता। वह तीन साल का हो गया था और उसे स्कूल जाने का बड़ा चाव था। पिछले सप्ताह ही वह खरगोश की शक्ल वाले सुन्दर बस्ते में पुस्तक डाले फिर रहा था।

सभी को कह रहा था, ''मैं भी स्कूल जाऊँगा, रिक्शा में बैठकर।''

चार दिन पहले जब वह पहली बार स्कूल गया, तो खुशी उसे सँभाली नहीं जा रही थी।

उठकर मैं भी लड़की के साथ हो लिया। अड़ोस-पड़ोस में सभी जगह पता कर लिया गया। घर का कोना-कोना छान मारा गया; मगर बंटी नहीं मिला।

अचानक मेरा ध्यान घर के पिछवाड़े बनी कोठरी की ओर गया।

''उस कोठरी में निगाह मार ली?'' मैंने पूछा।

''उस कोठरी में जाने से तो वह बहुत डरता है।'' बंटी की दादी ने कहा।

''कोठरी के भीतर तो वह झाँकता तक नहीं।'' बंटी की माँ कह रही थी।

''फिर भी देखने में क्या हर्ज है।'' कहता हुआ मैं कोठरी की ओर बढ़ा।

कोठरी के भीतर रोशनी बहुत कम थी। आँखों की पुतलियों ने पूरी तरह फैलकर ध्यान से देखा।

स्कूल की यूनिफॉर्म पहने बंटी एक कोने में दुबका बैठा था।

मैं उसकी ओर बढ़ा तो वह चीख मारकर रो पड़ा। बड़ी मुश्किल से उसे उठाकर बाहर लाया।

बंटी का बदन तेज बुखार से तप रहा था।●

श्याम सुन्दर दीप्ति

दीवारें

''ससरी' काल बापूजी! और क्या हाल है,'' कश्मीरे ने घर के दरवाजे के सामने गली में चारपाई पर बैठे, बापू को बुलाया और साथ ही पूछा, 'जस्सी घर पर ही है?

''हाँ बेटा! और तू सुना राजी है सब।''

''हाँ बापूजी! मेहर है वाहेगुरु की! तुम्हें शहरी गली में, पेड़ के नीचे बैठा देख, गाँव की याद आ गई। शहरी तो बस घरों में घुसे रहते हैं। आया बापू, जस्सी से मिलकर,' कहता, वह अन्दर चला गया।

जस्सी ने कश्मीर के आने की आवाज सुन ली थी और कमरे से बाहर आ गया और कश्मीरे को गले मिलता, अन्दर ले गया।

अपनी बातें खत्म कर, कश्मीर ने पूछा, ''और बापूजी कब के आए हैं?''

''तबीयत कुछ खराब थी, मैं ले आया कि चलो शहर किसी अच्छे डाक्टर को दिखा देंगे। पर इन बुजुर्गों का हिसाब अलग ही होता है। कार में बैठा कर ले जा तो सकते हैं, टैस्ट करवा सकते हैं, पर दवाई-बूटी इन्होंने मर्जी से खानी होती है।'' जस्सी ने अपनी बात बताई।

''चलो तूने चैकअप करवा दिया ना, अपना फर्ज तो यही है बस।''

''वह तो ठीक है, अब तूने देख लिया ना, घर के अन्दर कमरों में एसी लगे हैं, कूलर-पंखे सब हैं। पर नहीं! बाहर ही बैठना है, वहीं लेटना हैं। बुरा लगता है ना। पर समझते ही नहीं।''

''तूने समझाया भी बापू को'' - जस्सी ने बात का रुख बदलते हुए कहा।

''बहुत माथा- पच्ची की।''

''चल! सभी को ही पता होता है, इन बुजुर्गों की आदतों का'', कह वह उठ खड़ा हुआ।

बाहर आ, एक मिनट बापू के पास बैठ गया और उसी अंदाज में बोला, 'यह बापू तूने तो शहर का दृश्य ही बदल दिया।''

''हाँ बेटा! घर में पंखे -पुंखे सब हैं। पर कुदरत का कोई मुकाबला नहीं। एक बात और भी बेटा, आता-जाता व्यक्ति रुक जाता है। दो बातें सुन जाता है, दो सुना जाता है। अन्दर तो बेटा दीवारों को ही झाँकते रहते हैं।''

''यह तो ठीक है बापू! जस्सी कह रहा था, सभी कमरों में टी.वी. लगा है। वहाँ भी दिल बहल जाता है।'' जस्सी ने अपनी राय रखी।

''ले, ये भी सुन ले। मैं तो उसे भी दीवार ही कहता हूँ। अब पूछ क्यों? बेटा! कोई उसके साथ अपने दिल की बात तो नहीं बाँट सकता।''●

संस्कार

श्याम सुन्दर व्यास

सार्वजनिक नल पर पानी भरने वालों की भीड़ जमा हो गई थी। हंडा भर जाने के बाद बूढ़ी अम्मा से हंडा उठाया नहीं जा रहा था। लोगों का धैर्य बड़बड़ाहट में बदलने लगा। मनकू ने हंडा हटाकर अपनी बाल्टी लगाते हुए बूढ़ी से कहा- ''बहू को मेहँदी लगी है क्या, जो तू आ गई?''

कातर स्वर में बूढ़ी के बोल फ़टे-''उसका पाँव भारी है।''

मनकू को लगा जैसे किसी ने उस पर घड़ों पानी डाल दिया हो। उसने हंडा उठाया और बूढ़ी अम्मा के द्वार पर रख आया।●

दिखावा

सतीशराज पुष्करणा

एक कॉफी हाऊस के बाहर बरामदे में लगी मेज-कुर्सियों पर बैठे कुछ युवक कॉफी पीने के साथ-साथ कुछ ऊँचे स्वरों में किसी विषय पर बहस भी कर रहे थे। और बाहर मेन रोड पर एक भिखारी हाथ में कटोरा लिये भीख के उद्देश्य से खड़ा था। उन युवकों में से एक युवक, जो कुर्त्ता-पाजामा पहने था, एक सफारी-सूट पहने युवक से कहने लगा, ''तुम पूँजीपति लोग! गरीबों को देखना तक पंसद नहीं करते हो! जबकि इन्हीं गरीबों की वजह से तुम लोग इस ठाठ-बाट से रहते हो। वरना....!''

''देखो! तुम गलत समझ रहे हो। बात ऐसी नहीं है।''

''तो, फिर!''

''अमीरी-गरीबी तो आदमी की अपनी ओढ़ी-बिछाई हुई है। न मैं पूँजीपति हूँ और न ही मुझे गरीबों से किसी प्रकार की कोई नफरत है।''

''यदि वाकई ऐसी बात है, तो सामने भीख माँग रहे भिखारी को जाकर गले लगाकर दिखाओ।''

''मैं उसे कुछ रुपये भीख तो दे सकता हूँ, किंतु उस गंदे भिखारी को मैं गले किसी कीमत पर नहीं लगा सकता। तुम चाहो तो जाकर उससे गले मिलो या...।''

इतना सुनते ही वह कुर्त्ताधारी युवक लपककर उस भिखारी की ओर बढ़ गया। और जाते ही उसे अपनी बाँहों में भरकर गले से लगा लिया।

इस प्रकार युवक को अपने गले लगते देख पहले तो भिखारी कुछ घबराया, किंतु फिर कुछ सँभलते हुए बोला, ''बाबू! पेट, गले लगाने से नहीं, रोटी से भरता है। और रोटी के लिए पैसा चाहिए।''●

सत्या शर्मा

रक्षक

शिप्रा का रिजर्वेशन जिस बोगी में था उसमें लगभग सब लड़के ही थे। टॉयलेट जाने के बहाने शिप्रा पूरी बोगी घूम आई थी, मुश्किल से दो या तीन औरतें होंगी। मन अनजाने भय से काँप सा गया।

पहली बार अकेली सफर कर रही थी इसलिए पहले से ही घबराई हुई थी ,अत: खुद को सहज रखने के लिए चुपचाप अपनी सीट पर मैगज़ीन निकालकर पढ़ने लगी।

नवयुवकों का झुंड जो शायद किसी कैम्प जा रहा था। उनके हँसी-मजाक, चुटकुले उसकी हिम्मत को और भी तोड़ रहे थे।

शिप्रा के भय और घबराहट के बीच अनचाही सी रात धीरे - धीरे उतरने लगी।

सहसा सामने की सीट पर बैठे लड़के ने कहा —''हेलो , मैं साकेत और आप?''

भय से पीली पड़ चुकी शिप्रा ने कहा -''जी मैं .....''

''कोई बात नहीं नाम मत बताइए। वैसे कहाँ जा रहीं हैं आप?''

शिप्रा ने धीरे से कहा -''इलाहाबाद।''

''क्या इलाहाबाद... ? वो तो मेरा नानी -घर है। इस रिश्ते से तो आप मेरी बहन लगीं।'' खुश होते हुए साकेत ने कहा। और फिर इलाहाबाद की अनगिनत बातें बताता रहा कि उसके नाना जी काफी नामी व्यक्ति हैं , उसके दोनों मामा सेना के उच्च अधिकारी हैं और ढेरों नई - पुरानी बातें।

शिप्रा भी धीरे - धीरे सामान्य हो उसकी बातों में रुचि लेती रही।

रात गुजर गई।

सुबह शिप्रा ने कहा - ''लीजिए मेरा पता रख लीजिए, कभी नानी घर आइए, तो जरूर मिलने आइएगा।''

''कौन सा नानी घर बहन ? वो तो मैंने आपको डरते देखा तो झूठमूठ के रिश्ते गढ़ता रहा। मैं तो कभी इलाहाबाद आया ही नहीं।''

''क्या..... ?''- चौंक उठी शिप्रा।

''बहन ऐसा नहीं है कि सभी लड़के बुरे ही होते हैं कि किसी अकेली लड़की को देखा नहीं कि उस पर गिद्ध की तरह टूट पड़ें। हम में ही तो पिता और भाई भी होते हैं''-कहकर प्यार से उसके सर पर हाथ रख मुस्कुरा उठा साकेत।●

सविता मिश्रा

छवि सुधारक यंत्र

'सर, दस-बीस शिकायतों में से आप अकसर उन पर ध्यान देते हैं, जो अपने शिकायत पत्र में पुलिसवालों को अपशब्द बोलते हैं। उन्हें क्यों नहीं बोर्ड पर पिनअप करते हैं, जो खाकी की

तारीफ में चार लाइन लिखकर थाने के गेट से लगे, आपके द्वारा लगाए उस खंभे पर टाँग जाते हैं। इसके बजाय एक शिकायती बॉक्स लगवा दीजिए सर। आते-जाते लोगों की नजर ऐसे पत्रों पर पड़ती है, तो खाकी की छवि और भी अधिक धूमिल होती है।'' रिटायर होने के करीब पहुँचे कांस्टेबल ने अपना संदेह जाहिर किया।

''अरे भई, थोड़ा थम जाओ, कितनी शंकाएँ इकट्ठी करके लाए हो। दस पंद्रह दिन रुक जाओ, फिर देखना।'' थानाध्यक्ष ने समझाया।

''सर, हमने पता किया, तो पता चला आप जिस थाने में भी पोस्ट किए गए, वहाँ आपने पब्लिक के लिए शिकायती खंभे की व्यवस्था की और हर जगह खाकी की बुराइयाँ लिखने वाली गुमनाम शिकायतों को ही तवज्जो दी। थाने के अंदर लगे बोर्ड पर भी उन्हीं पत्रों को तवज्जो दी। सर, कम-से-कम थाने के अंदर...। इधर तारीफ़-ही-तारीफ के कागज लहराएँगे, तो हमारी छवि उजली दिखेगी न सर!''

''मैं लोगों के बीच खाकी की छवि सुधारना चाहता हूँ दिखाना नहीं।''

''लेकिन भला-बुरा कहनेवालों को प्राथमिकता क्यों और जिनकी नजरों में छवि अच्छी बनी हुई है, उन बहुमूल्य पत्रों को दराज में बंद कर देना...! ऐसा क्यों सर?''

''समझ रहा हूँ कि तुम क्या कहना चाह रहे हो। अपनी ही तारीफों के डंके पीटना कहाँ की इंसानियत। मैं जनता के मन में जमी खाकी की दागदार छवि को मिटाना चाहता हूँ। तुम इसे शिकायती खंभा कहने के बजाय 'छवि सुधारक यंत्र' भी कह सकते हो।'' कहते-कहते थाने के गेट तक आ पहुँचे थे।

खंभे पर नजर गई तो एक ताज़ातरीन पत्र लहरा रहा था। जिस लिखावट में तीन दिन पहले के पत्र में तबीयत से गालियाँ लिखीं थीं, आज स्थिति उससे बिल्कुल उलट थी। लोग रुक-रुककर बड़े-बड़े अक्षरों में लिखे पत्र को पढ़ रहे थे।

बूढ़े कांस्टेबल की शिकायती आँखें अब उच्चतर स्वर में 'जय हिन्द' कहते हुए चमक रही थीं।●

सारिका भूषण

नशा

''अब बस भी करो बेटा , पिछले तीन घंटों से लगातार मोबाइल पर गेम खेल रहे हो। आँखें तो खराब होंगी ही रिजल्ट भी खराब होगा।''

''कल मैथ्स के पेपर्स हैं और तुम्हारी यही पढ़ाई चल रही है।'' रीमा ने झुँझलाते हुए रचित को बोला।

''मम्मी आप तो बस मुझे ही बोलती हैं। दीदी को तो बिलकुल नहीं डाँटती। वह भी तो कितनी देर से यू ट्यूब पर मूवी देख रही है। हाँ आप क्यों बोलेंगी वो तो लाडली जो ठहरी।'' बोलते - बोलते दस वर्षीय रचित की आँखों से आँसू निकलने लगे। रचित को अच्छी तरह पता था कि मम्मी किसी की आँखों में आँसू नहीं देख सकती।

रचित के आँसू के इतिहास -भूगोल सभी से वाकिफ़ थी रीमा। रचित ही क्यों घर के सभी सदस्यों के आँसुओं से परिचित थी मगर फिर भी सबके लिए एक पैर पर खड़ी रहती थी। ऋषिका की दसवीं की परीक्षा सर पर थी और उसका फिल्में देखने का शौक बढ़ता ही जा रहा था। दो - चार बार रीमा ने प्यार से समझाया पर ऋषिका से हर बार यही सुनने को मिलता ''मम्मी आप कुछ समझती ही नहीं हैं। मैं लगातार नहीं पढ़ सकती और मेरे लिए रिलैक्स करना बहुत ज़रूरी है।''

सख्ती से पेश आना रीमा के स्वभाव में ही न था। उसका मानना था कि हम कभी भी कोई काम किसी से जबरन नहीं करवा सकते जब तक कि वह खुद उसे करने की इच्छा या जुनून न रखे। यही धारणा रखते हुए रीमा अपने बच्चों को थोड़े समय के लिए छोड़ देना ही उचित समझ रही थी।

रात के बारह बजे तक अम्मा जी का टीवी देखना भी रीमा को उनके स्वास्थ्य के लिए अच्छा नहीं लगता था। मगर अम्मा भी कहाँ मानने को तैयार रहती थी'' बस बेटा थोड़ी देर और देखूँगी, नींद भी तो नहीं आती है और कौन सा मुझे सुबह स्कूल जाना है।'' -रीमा के हाथों से दवा खाने के बाद अकसर अम्मा जी बोल पड़ती।

दिन भर के सारे काम ख़त्म करके जब रीमा बिस्तर पर जाती तो अकसर रोहित के मुँह से आती शराब की बदबू उसे सोने नहीं देती। हफ़्ते में कम से कम चार दिन तो ऐसा ज़रूर होता था। खुद को रोकने की कोशिश जब नाकाम हो जाती, तो यदि कभी रीमा शराब का जिक्र भी करती, तो रोहित तुरंत बोल पड़ता- ''रीमा प्लीज़, अब तुम मुझे लेक्चर देने मत बैठ जाना। ऑफिशियल पार्टी में कितना ज़रूरी होता है, यह सब तुम क्या जानो? वैसे भी तुमने पता नहीं दूसरों की ज़िन्दगी में दखल देने का क्या नशा पाल रखा है?''

रीमा सोचती रह जाती कि वाकई में वह नशे में है या बाकी सब।और जिस दिन उसका नशा उतर जाएगा, तो क्या यह घर, घर रह पाएगा?●

सीमा वर्मा

1- एक था भोला

तीन दिन बीत चुके थे मगर भोला ना आया। नानी रोज़ रोटी बनाकर उसका इंतजार करती।

यह नाम भी तो नानी ने ही दिया था उसे। वह रोज़ाना रोटी के समय उसके दरवाज़े पर आवाज़ करने लगता और नानी रोज़ उसे रोटी देती। तीन दिन पहले जिस वक्त वो आया था, नानी परेशान सी थी, प्यार से भोला बुलाने की बजाय ज़ोर से चीख पड़ी थी,''चला आता है

रोज़ मुँह उठाए, जैसे और कोई काम ही नहीं है, सेवा करो बस महाराज की।'' दरअसल उसी को लेकर तो नाना से नानी की खट-पट हो गई थी।

नानी बड़बड़ाती हुई रोटी लेकर जैसे ही बाहर आई, भोला को वहाँ ना पाकर परेशान हो गई। उसने उसे इधर उधर बहुत ढूँढा मगर वह कहीं भी ना मिला। फिर उस दिन तो नानी के गले से निवाला भी ना उतरा।

''अजी सुनती हो!'' कहते हुए नाना जी घर में घुसे और व्यंग्य से मुस्कुराते हुए बोले, ''अरे तुम्हारा लाड़ला! आज मंदिर के बगल में बैठा दिखा।''

''क्या?'' कहते हुए तेज़ क़दमों से नानी घर से बाहर की तरफ़ भागी।

मंदिर के पास जैसे ही भोला ने उसे देखा अपना मुँह दूसरी ओर फेर लिया। नानी ने उसके कान उमेठते हुए कहा, ''मैं बेकार में ही तुझे बैल बुद्धि कहती थी, तुझे भी इंसानों वाला रोग लग गया, जो अब तुझे मान-मनौव्वल चाहिए।''

भोला ने धीरे से अपने कान हिलाए मगर मुँह दूसरी तरफ़ ही घुमाए बैठा रहा।

इस बार नानी रो पड़ी, ''जा, मैं ही तुझसे मोह लगा बैठी थी, तू तो बैल का बैल ही रहेगा।'' जैसे ही नानी के आँसू उसके चेहरे पर पड़े वह सींग लहराता फ़ोरन उठ खड़ा हुआ और सिर झुकाए, पूँछ हिलाता नानी के पीछे-पीछे घर की ओर चल दिया।

2-भोर की पहली किरण

जिंदगी बीत गई थी। उसके पति को गुज़रे ज़माना हो चला था। बच्चे नए सफ़र की उड़ान पर थे।

वह भी अब अपने मन का करना चाहती थी। थोड़े पैसे जमा थे उसके पास। साग भाजी का खर्चा तो गाँव के खेतों से ही पूरा पड़ जाता था, दाई माँ जो थी वह उन सब घरों की। उससे मालिश करवाते ही औरतें भली चंगी हो जाती और उसे अच्छा खासा मेहनताना देतीं।

अब तो उसका बस एक ही सपना था जो उसके दिमाग पर हावी होने लगा था।

इससे पहले कि उसकी साँसें थम जाएँ और दिल की दिल में रह जाए, इन्हीं खयालों में डूबी वह उठ बैठी। पलंग के नीचे पड़े बक्से को बाहर निकाल,पोटली में रखे पैसे देख पुरसुकून हो, मन ही मन सुबह निकलने का निश्चय करके पुन: लेट गई।

वृंदावन जाकर वहीं बस जाने का सपना धीरे-धीरे उसे नींद के आगोश में लेने ही लगा था कि अचानक दरवाज़े पर आहट हुई।

''कौन?'' वह चौंककर उठ बैठी।

''ताई.. मैं नक्कु!''

''नक्कु!'' उसका नाम दोहराती वह दरवाज़े की ओर भागी।

दरवाज़ा खुलते ही दर्द से कराहती वह वहीं लुढ़क गई।

नौ महीने की गर्भवती नक्कु जमील की घरवाली थी। जबसे वह शहर गया, वापिस नहीं लौटा था।

उसे पलंग पर लिटा वह पानी गर्म करके ले आई।

दर्द से ज़र्द पड़ता चेहरा देख वह घबरा गई। फिर भी उसे हौसला देते हुई बोली, ''तू डर मत, सब ठीक हो जाएगा, बस हिम्मत रख।''

बच्चे के रुदन के साथ ही नक्कु चल बसी।

दु:खी मन से उसने बच्चे को साफ़ कपड़े में लपेटा और पड़ोसियों को आवाज़ दी। आवाज़ सुनते ही वह चले आए।

भोर की पहली किरण के साथ नक्कु के पार्थिव शरीर को मिट्टी के हवाले कर बच्चे को सीने से लगा वह अपने कमरे में लौट आई और धीरे से बक्सा वापिस पलंग के नीचे सरका दिया।

ज़रूरत

शूटिंग की तैयारी थी। सेट लग चुका था। बस निर्देशक महोदय के आने की प्रतीक्षा थी। उनके आते ही सब सचेत हो उठे।

''सब रेडी है?'' आते ही अपने असिस्टेंट से पूछा।

''जी सर!'' उसने मुस्तैदी से उत्तर दिया।

''एक बार सीन ब्रीफ करो।''

''जी, सीन है, माँ-बाप का लाड़ला बेटा रूठ गया है, तो माता पिता तरह-तरह की खाने पीने की चीज़ें लाकर उसको मना रहे हैं और बच्चा गुस्से में फेंक रहा है।''

सीमा सिंह

''और वो बाल कलाकार? उसका क्या हुआ? अस्पताल से छुट्टी मिल गई?''

''नहीं सर, पर दूसरे बच्चे का इंतजाम कर लिया है! यहीं पास की बस्ती से अरेंज किया है। सिर्फ दो सीन हैं बच्चे के, दो सौ रुपये रोज़ पर बुलाया है।''

''काम कर सकेगा?''

''जी सर, मैंने सब समझा दिया है।'

''ओके, चलो फिर, लाइट, कैमरा... एक्शन!''

''कट, कट, कट!''

''हाथ से रखना नहीं है, उठाकर फेंकना है,'' असिस्टेंट ने झुँझलाहट काबू करते हुए कहा, ''पहले केक और पेस्ट्री हाथ मारकर दूर गिराओ, फिर दूध का गिलास गिरा दो। ठीक?''

''चलो, फिर से,'' डायरेक्टर ने खीजकर कहा- ''एक्शन!''

''ओहो! कट! कट! कट! अबे, तुझको समझाया था ना? फेंक दे, नीचे गिरा दे! ये इतना सँभालकर क्यों रख रहा है?''

बच्चे ने सुबकते हुए कहा, ''उन अंकल ने कहा था शूटिंग के बाद खाने का सारा सामान मैं घर ले जा सकता हूँ।''

सुकेश साहनी

1-मास्टर

रेलवे स्टेशन से थोड़ा पहले ही मेरे जूते के पंजे वाले भाग की सिलाई खुल गई और मैं बिल्कुल असहाय हो गया। पत्नी के एक रिश्तेदार रुहेलखण्ड विश्वविद्यालय में परीक्षक के तौर पर आ रहे थे। उन्हीं को घर ले जाने के लिए मेरा स्टेशन आना हुआ था। आधे घण्टे बाद उनकी ट्रेन बरेली पहुँचने वाली थी।

मैने किसी मोची की तलाश में नजरें दौड़ाईं।

पिण्डी होटल के पास ही वह बैठा दिखाई दे गया। मैं लपककर उसके नजदीक पहुँचा और फटा जूता उसके आगे कर दिया। मुझे अनदेखा कर वह अपना सामान जमाने में लगा रहा। मैंने गौर किया कि उसने बालों में कोई खुशबूदार तेल लगा रखा था, आँखों में सुरमा साफ दिखाई दे रहा था। बड़ी-बड़ी मूँछों के सिरे किसी बर्छी की तरह नुकीले थे। कुल मिलाकर वह अपने हुलिए से दबंग किस्म का आदमी लग रहा था।

अपना काम निबटाकर उसने मेरे उधड़े जूते पर निगाह डाली।

''तीस रुपये लगेंगे!'' उसने बेरुखी से कहा।

''क्या!'' सुनकर मैं तनाव में आ गया। मेरी जेब में कुल साठ रुपये थे। मैं जूते की मरम्मत में दस रुपये से अधिक खर्च करने की स्थिति में नहीं था। रिश्तेदार को घर तक ले जाने के लिए मुझे पचास रुपये तो चाहिए ही।

''भाई, तीस रुपये तो बहुत ज़्यादा हैं, दस ले लो।'' मैंने उसे मनाने की कोशिश की।

''तीस से एक पैसा कम नहीं होगा।'' उसने मुझे घूरकर देखा तो मेरी पीठ में झुरझुरी-सी दौड़ गई।

मुझे उसपर गुस्सा आया। जब से इनकी पार्टी की सरकार क्या बनी है, इनके दिमाग सातवें आसमान पर पहुँच गए हैं। गुण्डा! मवाली! ...मेरी मजबूरी का फायदा उठाकर जेब काटने पर तुला है।

पिछले आठ सालों से ये जूते मेरा साथ दे रहे थे। दो बार सोल बदलवा चुका था। किसी न किसी प्राथमिकता के चलते नए जूते खरीदना टलता रहा था। अब तो मुझे इनसे बहुत लगाव हो गया था। यह लगाव एक तरफा नहीं, बदले में वह भी मेरे पैरों को बहुत आराम देते थे।

ट्रेन के बरेली पहुँचने का टाइम करीब आता जा रहा था। कोई और विकल्प मेरे पास था नहीं। मन मसोसकर मैंने उसे जूता सिलने को कह दिया था।

मेरे हामी भरते ही उसके अभ्यस्त हाथों ने जूते को थाम लिया, उलट-पलटकर जाँचा, परखा। सिलाई के लिए जूते में हाथ डालते ही वह चौंका, पहली बार उसने गहरी नजरों से मेरी ओर देखा। सुरमा लगी आँखों में विचित्र-से भाव तैर गए थे। देखते ही देखते उसके निपुण हाथों ने जूते को सिलकर पहले जैसा कर दिया था।

जूता पहनते हुए मैंने तीस रुपये उसकी ओर बढ़ा दिए।

''सिर्फ दस रुपये!'' कहकर उसने बीस रुपये मुझे लौटा दिए. मैं हैरान था, जो आदमी एक रुपया छोड़ने को तैयार नहीं था, वह पूरे बीस रुपये लौटा रहा था।

''बाबूजी!'' अपनी पनीली आँखों से मेरी आँखों में झाँकते हुए उसने कहा, ''चालीस साल हो गए यह काम करते हुए। जूते, चप्पल हाथ में आते ही हमसे बतियाने लगते हैं। सिलाई करते हुए आपके जूते से हमारी खूब बातें हुईं। हम बहुत कुछ जान गए हैं। विश्वास करें, हमने अपना पूरा मेहनताना आपसे ले लिया है।''

2-संस्कार

उसे लगा, पिताजी अपनी भीगी आँखों से एकटक उसी की ओर देख रहे हैं। उसने सूखे तौलिए से उनकी रुग्ण, कृशकाया को धीरे-धीरे पोंछा और फिर पत्नी को आवाज़ दी, ''सुनीता, ज़रा पाउडर का डिब्बा तो देना।''

फ़िल्मी पत्रिका पढ़ने में तल्लीन पत्नी ने उसकी आवाज़ सुनकर बुरा-सा मुँह बनाया और फिर पाउडर का डिब्बा लेकर बेमन से उसके पास आ गई। तभी पलंग के पास पड़े मल के पॉट और बलगम भरी चिलमची पर नज़र पड़ते ही उसने जल्दी से साड़ी का पल्लू नाक पर रख लिया। उसने चिढ़े हुए अंदाज़ में पति को घूरा और पैर पटकती हुए लौट गई।

''बेटा,'' पिता ने काँपती आवाज़ में कहा, ''तुम थक गए होगे। जाओ, आराम करो। मैं तो ईश्वर से हर पल यही प्रार्थना करता रहता हूँ कि मुझे इस शरीर से जल्द से जल्द मुक्त कर दे।''

तभी नन्हा राजू अपने पिता के पास आया, पलंग के पास पड़ी बलगम भरी चिलमची उठाकर बोला, ''मैं इछको बाथलूम में लख आऊँ।''

वह अपने बेटे को देखता रह गया। पत्नी भी राजू की ओर देखने लगी थीं।

''जाओ...रख आओ।'' उसकी आवाज़ भर्रा गई।

''भगवान तुझ जैसा बेटा सबको दे।'' वृद्ध की डबडबाई आँखें छलक पड़ी थीं, ''तुझे मेरा मल-मूत्र साफ करना पड़ता है...मुझे अच्छा नहीं लगता। अपने साथ तुझे भी इस नरक में रगड़ रहा हूँ।''

''पिताजी, आप ऐसा क्यों सोचते हैं? यह तो मेरा कर्तव्य है। वैसे भी आजकल के हालात को देखते हुए...'' रुककर उसने एक निगाह अपनी पत्नी और बाथरूम से लौटते हुए बेटे पर डाली, ''मैं जो कुछ कर रहा हूँ...सिर्फ अपने लिए कर रहा हूँ।''

''बेटा! तुझसे जीतना मुश्किल है...मुझे ज़रा बिठा तो दे।''

उसने पिता को उठाकर बैठा दिया। उसने एक हाथ से उनकी पीठ को सहारा देते हुए दूसरा हाथ गाव तकिए के लिए बढ़ाया ही था कि पत्नी लपककर उसके पास आई और उसने फुर्ती से तकिया ससुर की पीठ के पीछे लगा दिया।

3-धुँए की दीवार

अमीचन्द शीशे के सामने खड़ा होकर पगड़ी बाँधने लगा। बँटवारे के बाद वह पहली बार बेलेवालां जा रहा था। उसके मन में आज कोई उत्साह नहीं था। पहले हर महीने वह बेलेवालां के हाट से सबके लिए ज़रूरी सामान लाता था, दुलीचन्द और उसके बच्चों के लिए भी। उसने खिड़की के बाहर उदास निगाह डाली। अपने मकान को दो हिस्सों में बाँटती दीवार उसके दिल को चीरती चली गई। बँटवारे वाले दिन से उसके और छोटे भाई दुलीचन्द के बीच बातचीत बिल्कुल बन्द थी।

बाहर दुलीचन्द श्यामा गाय को दुहने की तैयारी कर रहा था। बँटवारे में गाय उसके हिस्से में आई थी।

तभी अमीचन्द की नज़र अपनी बेटी पर पड़ी। वह हाथ में बड़ा गिलास लिए चुपके से अपने चाचा की ओर बढ़ रही थी। वह चिल्लाकर बेटी को रोकना चाहता था, पर आवाज़ गले में फँसकर रह गई। उसका दिल जोर-जोर से धड़कने लगा।

दुलीचन्द ने मुस्कराकर अपनी भतीजी की तरफ़ देखा। जवाब में वह भी धीरे से हँसी। दुलीचन्द ने उसके हाथ से गिलास ले लिया और झटपट उसे दूध से भर दिया।

अमीचन्द एकटक इस दृश्य को देख रहा था। ठीक उसी समय दुलीचन्द की पत्नी घर से निकली। उसे पूरा विश्वास था कि बहू उसकी बेटी के हाथ से दूध भरा गिलास छीनकर पटक देगी। न जाने क्या-क्या बकेगी। बँटवारे के समय उसने बहुत झगड़ा किया था।

अमीचन्द यह देखकर हैरान रह गया था कि बहू के चेहरे पर हल्की मुस्कान उभरी और कहीं पति दुलीचन्द उसे देख न ले, इस डर से तुरन्त भीतर चली गई।

उसकी बेटी ने एक साँस में ही दूध का गिलास खाली कर दिया और वापस घर की ओर दौड़ पड़ी।

अमीचन्द की आँखें भर आईं।। उसे बेहद खुशी हुई, उसको लगा-घर के बीच की दीवार गायब हो गई है।

अमीचन्द उत्साह से भरा हुआ घर से बाहर आया और अड़ोस-पड़ोस को सुनाता हुआ ऊँची आवाज़ में बोला, ''ओए दुली, मैं बेलेवालॉ जा रहा हूँ। तुम्हें जाने की ज़रूरत नहीं। मैं तुम सबके लिए सामान लेता आऊँगा।''

4-पितृत्व

''खाना बनाना तो कोई हमारी बहू से सीखे...''लाल साहब ने तृप्ति भरी डकार ली-''वाह! खाने में मज़ा आ गया!''

डाइनिंग टेबल पर उनकी पत्नी, पुत्र और बेटी बैठे हुए थे। पुत्रवधू किचन की सर्विस विण्डो से गरमागरम फुलके सरका रही थी। लाल साहब अजीब खुशी में बसे चम्मच बजाते हुए 'एक बंगला बने न्यारा' गुनगुना रहे थे।

''आज बहुत खुश लग रहे हैं!'' पत्नी ने पूछ लिया।

''बात ही कुछ ऐसी है!''

''पापा, बताइए ना, जल्दी!'' रजनी का उत्सुक स्वर।

''जब फारेस्ट आफिसर ने रजनी की फोटो देखी तो बस देखता ही रह गया...'' लाल साहब ने शरारत से रजनी की ओर देखते हुए कहा-''और उसने फौरन हाँ कर दी। आख़िर हमारी बेटी है ही लाखों में एक।''

पापा की बात सुनकर रजनी शर्म से लाल हो गई और उसने नजरें झुका लीं।

''मुझे तो विश्वास ही नहीं होता...'' मिसेज लाल बोलीं।

''इसमें विश्वास न करने की क्या बात है? अरे, तुम चिन्ता काहे की करती हो...सब कुछ एकदम फर्स्ट क्लास है। लड़के के ऊपर किसी तरह की कोई जिम्मेवारी नहीं है...माँ-बाप और छोटी बहन की मौत काफ़ी पहले विमान दुर्घटना में हो गई थी...हमारी बेटी का एकछत्र राज रहेगा! फिर लड़का दहेज के भी तो खिलाफ है...''

''पिता जी! आज मैंने आपका मनपसन्द गाजर का हलुआ बनाया है...'' एकाएक रसोई की सर्विस विण्डो से झाँकते हुए उनकी पुत्रवधू ने कहा।

''कितना ख़्याल रखती है बहू हमारा! ...'' लाल साहब ने कहा और एकाएक गम्भीर हो गए। उन्हें लगा जैसे बहू सीधे उनकी आँखों में देखते हुए कह रही हो-'अपनी बेटी के लिए एकछत्र राज चाहते हैं और मैं जो दिन-रात खुशी-खुशी आप सबके लिए खटती हूँ...' एक दृश्य लाल साहब की आँखों के आगे फ्रीज हो गया, जिसमें उनकी पुत्रवधू खा जाने वाली नजरों से अपने सास-ससुर एवं ननद को घूर रही थी और उनके बेटे की आँखों में अपनी छोटी बहन के प्रति शत्रुता के भाव थे। वे सिहर उठे।

5-फॉल्ट

''मि. विनय, अपनी टोन सँभालिए।''

''कायदे की बात आपके दिमाग़ में घुसती है? मैंने कल ही आपको बताया कि मैं घरेलू कारणों से बहुत परेशान हूँ इसलिए हैड ऑफिस प्रगति-रिपोर्ट नहीं भेज पाया, फिर भी आपने इतना गंदा डी.ओ. लिख मारा।''

''आप काम नहीं करेंगे तो मुझे लिखना पड़ेगा...और अब... जिस तरह आप मुझसे मिसबिहेव कर रहे हैं...मुझे आपकी शिकायत हैड ऑफिस करनी पड़ेगी।''

''अरे...कल करता है तो आज कर दे।'' विनय के होंठ गुस्से से फड़कने लगे। उसने साहब की मेज पर ज़ोर से घूँसा मारा और चिल्लाया, ''मैं भी देखता हूँ तू मेरा क्या बिगाड़ लेता है।''

वह पैर पटकता हुआ कार्यालय से बाहर आ गया। उसका सिर किसी फोड़े की तरह दुख रहा था, दो दिन से वह एक मिनट के लिए भी नहीं सो सका था। शो-रूम्स के आगे हाथ में हाथ डाले टहलते जोड़ों को देखकर उसे ईर्ष्या हुई। पार्क की ओर जाने वाली सड़क पार करते हुए वह बस की चपेट में आने से बाल-बाल बचा। पार्क में बैठकर उसने दो डिब्बी सिगरेट फूँक डाली। जब रात के दस बज गए, तब वह घर की ओर चल दिया।

तीन-चार बार ज़ोर-ज़ोर से घंटी बजाने पर पत्नी ने दरवाज़ा खोला और भावशून्य चेहरा लिए एक ओर हट गई।

''कानों में तेल डालकर पड़े रहते हैं।''-वह भीतर घुसते हुए बड़बड़ाया।

जवाब में पत्नी ने ''भड़ाक'' की ज़ोरदार आवाज़ के साथ दरवाज़ा बंद किया।

बैडरूम में पत्नी उसकी ओर पीठ किए लेटी थी। कांपोज़ की दो गोलियाँ गटकने के बावजूद नींद उससे कोसों दूर थी। पिछले दो दिनों से यह सिलसिला जारी था। झगड़े की जड़ में कुछ भी नहीं था, फ़िल्म देखने जाने, न जाने जैसी बात का बतंगड़ बन गया था। दोनों में बातचीत बिल्कुल बंद थी। नाइट बल्ब की रोशनी में पत्नी को घूरते हुए उसने सोचा...निष्ठुर! पत्थर दिल! ...इसे मेरी ज़रा भी चिंता नहीं। मैंने दो दिन से खाना खाया कि नहीं...पूछ भी नहीं सकती? इतनी अकड़! ...अरे एक बार मेरे पास आकर बात कर ले तो मैं सारे गिले शिकवे भुलाकर राजी हो जाऊँ।

करवट बदलती पत्नी को देखते हुए एक प्रश्न ने उसके मस्तिष्क में डैने फैलाए... क्या इसने खाना खाया होगा? उसने ख़ुद से इस प्रश्न का उत्तर माँगा तो दिल ने...दिमाग ने एक स्वर में कहा, 'वह तुम्हारे बगैर नहीं खा सकती...असंभव!' उसके दिल को जैसे किसी ने मुट्ठी में जकड़ लिया...एसिडिटी की मरीज और दो दिन से भूखी। एकाएक उसने सोचा जिस पहल की उम्मीद वह पत्नी से कर रहा है, उस पर ख़ुद अमल क्यों नहीं करता?

उसने पत्नी के कंधे पर धीरे से हाथ रखा तो वह तुरंत पलटी और उसके कंधे से लगकर फफक-फफककर रो पड़ी, बोली, ''तुम मुझसे झगड़ा मत किया करो। मैं तुम्हारे बिना नहीं रह सकती।'' उसने पत्नी को प्यार से थपथपाया और रुंधे गले से बोला, ''मैं भी!''

''हम अपना उपवास किस चीज से तोड़ें?'' पत्नी आँसू पोंछते हुए मुस्कराई।

''ताज रेस्टोरेण्ट से खाना मँगा लेते हैं।'' उसने तिपाई पर रखे फ़ोन की ओर हाथ बढ़ाया।

''नहीं, मैं ख़ुद ही बनाऊँगी।''

''अरे, अपना टेलीफोन कब ठीक हुआ?'' रिसीवर कान से लगाते ही उसे ध्यान आया कि फ़ोन तो दो दिन से खराब था।

''आज ही।'' पत्नी ने बताया, ''अपने ही सैट में फॉल्ट था। लाइनमैन बता रहा था कि अपने इंस्ट्रूमेंट में गड़बड़ी की वज़ह से कई लाइनें हैल्ड अप थीं।''

पत्नी के रसोई में जाने के बाद भी वह रिसीवर पकड़े सोचता रहा। फिर उसने अपने बॉस के घर का नंबर डायल किया।

''हैलो!'' बॉस लाइन पर थे।

''सर, मैं विनय,'' उसने कहा, ''आज कार्यालय में जो कुछ भी हुआ उसके लिए मैं शर्मिन्दा हूँ...कृपया क्षमा करें।''

''मि.। विनय, मेरे दिल में आपके लिए बहुत आदर है, मैं उस बात को भूल चुका हूँ। आप निश्चिंत रहें...एंड हैव ऐ नाइस स्लीप।''

उसने रिसीवर क्रेडिल पर रखा तो ख़ुद को बहुत हल्का महसूस कर रहा था। उसने उनींदी आँखों से देखा पत्नी डायनिंग टेबल और किचन के बीच किसी नन्ही चिड़िया-सी फुदक रही थी।

6-मसिजीवी

''तो तुमने क्या फ़ैसला किया?''

''पिता जी, मैं पत्रिका के दफ्तर में ही नौकरी करना चाहता हूँ।''

''फिर हमारे इस कारोबार का क्या होगा?''

''इसे आपने बहुत ही अच्छी तरह सँभाला हुआ है,'' वह झिझकते हुए बोला, ''मदद के लिए किसी को नौकरी पर रख लीजिए।''

''वाह बेटा!'' वे गुस्से में बोले, ''उस दो टके की नौकरी के लिए तुम्हें हमारा दिल दुखाते शर्म नहीं आती?''

''पिता जी,'' उसने कहा, ''आपने पढ़ा-लिखाकर मुझे इस काबिल बना दिया है कि अपने देश और समाज के लिए कुछ कर सकूँ, मेरे काम की सर्वत्र चर्चा है। आपको तो खुश होना चाहिए!''

''मैंने इन क़लम घिसने वालों को सदा भूखों मरते देखा है। तुम्हारा वह मुंशी लेखक प्रेमचन्द...सुना है अंतिम दिनों में उसे खाने के भी लाले पड़े थे,'' वे चिढ़कर बोले, ''अपने बूते पर जितना तुम कमाते हो, उतना तो हम अपने एक नौकर को दे देते हैं। ऐसे काम का क्या फायदा? मैंने तुम्हें पढ़ा-लिखाकर बड़ी भारी गलती की!''

''किसी बड़े मकसद के लिए कष्ट तो उठाना ही पड़ता है।''

''तुम्हारा तो दिमाग़ फिर गया है,'' तुम्हें इस तरह समझाना बेकार है।

वह दुखी मन से बाहर आ गया। वह जानता था कि उसके साफ-साफ मना कर देने के बावजूद पिता जी चुप नहीं बैठेंगे। वे उसके रास्ते में जितनी रुकावटें खड़ी कर सकेंगे, करेंगे ताकि वह उनका पुश्तैनी लेन-देन का कारोबार सँभाल ले। एक बार पहले भी उनके कारण उसे बहुत प्रतिष्ठित पत्रिका की नौकरी से हाथ धोना पड़ा था।

वह अहाते में खड़े बूढ़े बरगद के नीचे बैठ गया। बचपन की अनेक यादें उसकी आँखों के आगे तैरने लगीं। इसी वट की शीतल छाया में हँसते-खेलते उसका बचपन कैसे बीत गया, उसे पता ही नहीं चला। उसे नहीं याद पिता जी ने कभी उसकी पढ़ाई-लिखाई में ज़रा भी रुचि ली हो।

कोठी के पुराने लठैत लखन की पत्नी वट की पूजा कर रही है। घर के दूसरे नौकर-चाकर भी पिता जी की दबंगई से सहमे रहते हैं।

उसकी नज़र वट से लटकती जड़ों पर स्थिर हो गई, जो अपनी ही छाया में बने मजबूत चबूतरे को नुकसान पहुँचा रही थीं।●

सुदर्शन रत्नाकर

मुक्ति

माँ को सात वर्ष से पागलपन के दौरे पड़ रहे थे और पिछले वर्ष से उसने चारपाई पकड़ ली थी। वहीं खाना-पीना। वहीं मल-मूत्र। माँ को सम्भालना उसके लिए कठिन हो गया था। ऊपर से कितनी ही बीमारियों ने उन्हें घेर रखा था। डाक्टर ने जवाब दे दिया था। ईश्वर ने जाने कितनी साँसें लिखी हैं, वे तो उन्हें पूरी करनी पड़ेगी। वह आज़िज आ गया था। कई बार खीझ उठता। माँ की सेवा भी करता और गुस्सा भी करता।जेब बेकाबू हो जाती।

गत कई महीनों से वह माँ की मुक्ति के लिए मृत्युंजय मंत्र का जाप भी करने लगा था। किसी तरह इस नारकीय जीवन से माँ मुक्त हो जाए, उसे छुटकारा मिल जाए। और ईश्वर ने बरसों बाद उसकी पुकार सुन ली थी। माँ को मुक्ति मिल गई थी। वह भी कर्त्तव्य भार से मुक्त हो गया था। सभी रस्मों को पूरा करने के बाद आज वह घर में नितांत अकेला रह गया था। चारपाई, जिस पर माँ सोती थी, सूनी पड़ी थी। घर में सन्नाटा पसरा था। वह चारपाई के पाए पर सिर रख कर फफक पड़ा। उसे उसमें से माँ की ममता की अजीब-सी महक आ रही थी।●

ग्लानि

सुधीर द्विवेदी

''नमस्कार!! मैं आपकी क्या मदद कर सकती हूँ?'' उसके मोबाइल के स्पीकर पर कस्टमर केयर एक्जीक्यूटिव का मीठा स्वर गूँजा। उसने मोबाइल अपने और करीब कर लिया।

''जी मैं आपकी क्या मदद कर सकती हूँ.. ?'' स्वर पुनः उभरा।

''करने को तो बहुत कुछ कर सकती हैं पर...!'' थोड़ी देर के लिए दूसरी तरफ़ सन्नाटा छा गया।

''जी प्रोडक्ट से सम्बन्धित कोई सहायता या शिकायत यदि हो तो दर्ज कराएँ।'' स्पीकर पर अब अधिक सधा हुआ स्वर सुनाई दिया।

''अजी कभी एकान्त में मिलिए तो शिकवे भी हों, शिकायत भी... '' उसे शगल करने की सूझी, उसके अंदर का जानवर जैसे जाग उठा।

''जी अवश्य.! आपकी पूरी सहायता की जाएगी। क्या मैं आपका नाम जान सकती हूँ? '' दूसरी तरफ़ का स्वर और अधिक संयत हो गया था, पर उसकी मिठास कम नहीं हुई थी।

''हम तो आशिक हैं ... !!'' वह फुसफुसाया... ।

''अच्छा.. !! तो फिर उनका भी नाम बता दीजिए, जिनके आप आशिक हैं? उनके बारे में जानकर आपकी इस बहन को अति-प्रसन्नता होगी।'' उस पार के स्वर में सन्तुलन के साथ मानो शहद का जादू था। वह अचानक अर्श से फर्श पर आ गिरा। अनायास ही उसकी आँखें मुँद गईं।

दो चोटियों में पीला रिबन बाँधे, खनकती हँसी लिये एक मासूम छवि उसकी भीग आई आँखों में झलक आई। कटाक्ष था या आत्मीयता? पर न जाने क्यों उसे इन शब्दों में यह अंतर ढूँढने का मन नहीं किया।

''माफ कीजिएगा... ''- भर्राए गले से यही शब्द निकले; लेकिन तब तक लाइन कट गई थी।●

तार

सुरेश सौरभ

पति जैसे ही दफ्तर से लौटा, पत्नी फौरन चाय-पानी लेकर आ गई। पति बोला-''तीस साल हो गए हमारी शादी को, अगर कभी देर-सबेर भी हो जाए, तो तुम उसी समय चाय-पानी तैयार रखती हो, उधर बहू है, अगर बेटा दस मिनट भी लेट हो जाए, तो फोन कर-करके पूरा घर सिर पर उठा लेती है; पर तुम कैसे जान जाती हो मेरे आने का सही समय।''

पत्नी- ''जैसे तुमने अभी मेरी आहट जान ली, वैसे मैं भी तुम्हारी आहट पहचान लेती हूँ, हमारा प्रेम उस जमाने का है, जब मोबाइल नहीं था। मोबाइल के बेतार से बड़े हृदय के तार हैं, बहू इस जमाने की है। मैं उस जमाने की हूँ, अब जमाना बदला है, तो प्रेम के तार भी बदल गए है।''●

डॉ. सुषमा गुप्ता

ज़िंदा का बोझ

वह शराब के नशे में धुत जब भी घर आता ज़ोर से चिल्लाता- ''अरी कहाँ मर गई?''

भागती-सी गुलाबो जाती और कमरे का दरवाज़ा बंद हो जाता।

बहुत बड़ा नाम था पीर साहब का पूरे इलाके में। लोग ने अल्लाह का दर्ज़ा तक दे डाला था और गुलाबो को पीर रानी का। पीर साहब वैसे तो डेरे पर ही रहते थे; पर महीने में दो चार बार घर भी आ जाते। जिस रात वह घर आते, बच्चियों को रात भर, रह-रह के कमरे से माँ की दर्दनाक चीखें सुनाई देतीं। अगले दिन माँ के शरीर पर ज़ख्म दिखते तो बच्चियाँ अपनी उम्र के हिसाब से सवाल पूछती और गुलाबो उनकी उम्र के हिसाब से ही जवाब देकर उन्हें समझा भी देती।

आज गुलाबो को सुबह से ही तेज़ बुखार था। रात गए फिर पीर साहब की गरज सुनाई दी- ''गुलाबो.....''

तेरह साल की जूही भागकर गई- ''जी बाबा''

पीर साहब ने उस पर ऊपर से नीचे तक भरपूर नज़र डाली फिर बेहद प्यार से बोले- ''अरे तू इतनी बड़ी कब हो गई? आ ...अंदर आ... बैठ मेरे पास।''

दरवाजा फिर बंद होने ही वाला था कि गुलाबो दौड़ती हाँफती पहुँची। पलभर में सब समझ गई, खींचकर जूही को कमरे से बाहर कर दिया और खुद अंदर होकर दरवाजा बंद कर लिया। पीर साहब का चिल्लाना और माँ की दर्दनाक चीखें बाहर तक सुनाई देने लगीं। अचानक चीखों का स्वर बदल गया।

अब दालान में ज़माने भर का मजमा लगा है। पीर साहब नहीं रहे। पीर रानी की सबसे विश्वस्त नौकरानी ने सबको खबर पहुँचाई, कोई लूट के इरादे से घर में घुसा और हाथापाई में पीर साहब का गला रेत गया।

लोगों ने खूब कोसा उस अनजान लुटेरे को। दोज़ख रसीद करने की बद्दुआएँ दे डालीं। औरतों के झुंड के झुंड आ रहे थे। खूब प्रलाप हो रहा था।

छाती-पीटती अम्मा बोली- ''हाय गुलाबो! कैसे उठाएगी तू बेवा होने का बोझ!''

गुलाबो मन ही मन बुदबुदाई- ''इसके तो जिंदा का बोझ ज़्यादा था अम्मा। इसकी लाश में बोझ कहाँ ...''●

हबीब कैफ़ी

सामना

शहर कर्फ़्यूग्रस्त था। सड़कें और गलियाँ सूनी पड़ी थीं। हर तरफ़ बंदूकधारी सिपाहियों की गश्त जारी थी। कुछ इलाक़ों में संगीनधारी फ़ौजी भी गश्त कर रहे थे। यह एक सूनी पड़ी गली का मोड़ था। इस मोड़ पर एक व्यक्ति बड़ी देर से असमंजस की स्थिति में खड़ा था। इस मुकाम से उसका मकान काफ़ी दूर था; लेकिन इस वक्त वह न आगे बढ़ने की स्थिति में था, न पीछे जाने की हालत में। वहाँ वह झिझका-सहमा खड़ा बड़ी उलझन महसूस कर रहा था। इतने में उसके कान खड़े हुए। पीछे से उसे हलकी-सी पदचाप सुनाई पड़ी। 'दुश्मन है?' यही एक सवाल उसके जेहन में कौंध गया।

पदचाप रफ़्ता-रफ़्ता क़रीब से क़रीबतर होती जा रही थी। बड़ी तेज़ी के साथ वह सोचने लगा- यहाँ अब ठहरे रहने का सीधा- सा मतलब है, धारदार हथियार से क़त्ल! भागकर सड़क पर जाने का अर्थ होगा, गोली का शिकार और निश्चित मौत! अब क्या किया जाना चाहिए?

उसका जेहन कह रहा था, गाय तक को ऊपरवाले ने सींग दिए हैं। अपनी हिफाजत वह खुद कर सकती है। फिर मैं तो एक आदमी हूँ। कुछ किया जाना चाहिए। उसने देखा। पैरों के पास ही उसे एक बड़ा-सा तीखा पत्थर दिख गया। झट से झुककर उसने पत्थर उठाया और आश्वस्त होकर वह पलट गया। उसे लगा, जैसे आईना सामने है। उस जैसा एक आदमी हाथ में तीखा पत्थर लिये सहमा-सहमा खड़ा था। ... और हाथ के पत्थर छोड़कर वे दोनों बगलगीर हो गए।●

डॉ. हरदीप कौर सन्धु

खूबसूरत हाथ

एक दिन अध्यापक ने दूसरी कक्षा के बच्चों को उनकी सबसे अधिक प्यारी किसी वस्तु का चित्र बनाने के लिए कहा। किसी ने सुंदर फूल बनाया तो किसी ने रंग- बिरंगी तितलियाँ। कोई सूर्य, चाँद, सितारे बनाने लगा तो कोई अपना सुंदर खिलौना। कक्षा के एक कोने में बैठी करमो ने बदसूरत से दो हाथ बनाए। अध्यापक ने हैरान होकर पूछा, ''ये क्या बनाया? हाथ! किसके हैं ये हाथ?''

''ये दुनिया के सबसे खूबसूरत हाथ हैं, मेरी माँ के हाथ हैं ये।''

''तुम्हारी माँ क्या करती है?

'' वह मज़दूरिन है। दिन भर सड़क पर पत्थर तोड़ने का काम करती हैं'' - करमो ने सिकुड़ते हुए उत्तर दिया।●

हरभगवान चावला

फाँस

चौधरी रामसिंह डेढ़ घंटे से बस का इंतजार कर रहे थे। कड़कती धूप थी, साए के नाम पर बबूल की झीनी छाया-अब तो प्यास भी लग गई थी बेचैनी में अंगोछे से पसीना पोंछे जा रहे थे कि तभी एक स्कूटर उनके पास आकर रुका।

''आइए चौधरी साहब!'' -स्कूटर से उतरकर मास्टर ओमप्रकाश कपड़े से सीट साफ करने लगा। पाँच-सात किलोमीटर चलने के बाद एक बड़े गाँव के बस अड्डे पर चौधरी साहब स्कूटर से उतरने लगे। ओमप्रकाश ने कहा, ''बैठे रहिए चौधरी साहब, घर पर छोड़ देता हूँ।''

''रहने दो ओम, मैं चला जाऊँगा।''

''इतनी धूप में! दो मिनट लगेंगे, छोड़ आता हूँ।'' ओमप्रकाश उन्हें घर तक छोड़ आया।

बहुत दिनों तक चौधरी साहब अपनी बिरादरी के लोगों में बैठते तो कहते, ''लड़का ओमप्रकाश बहुत अच्छा है। मेरे स्कूटर पर बैठने से पहले सीट को साफ किया, रास्ते में ठंडा पिलाया, घर तक छोड़कर गया पर एक बात फाँस की तरह चुभती है... अब ये छोटी जात वाले हम पर मेहरबानियाँ करेंगे...क्या जमाना आया है।●

अब नाहीं

हरनाम शर्मा

''भगवान् कसम, मनैं नेम है साहब, इब मैं यो काम काई नीं करता। कुछ नीं करता। बस कपड़ों पै प्रैस करके गुजारा करूँ।''

''.....'' -नए दारोगा की आँखें संवादहीन न थीं।

''माई-बाप कदी वर्दी प्रेस करवानी हो तो लेता आऊँगा, बस यो ही काम आ सकूँ इब तो मैं।''

''हरामजादे, झूठ तुम्हारे खून में समाया रहेगा जन्म भर। तेरा रिकॉर्ड बोल रहा है, साले तू अफीम, चरस, गाँजा सारी चीजें बेचता है। मुझे आज इस थाने में पन्द्रहवाँ दिन हो गया, एक बार भी नहीं आया!''

''साहब, जब धन्धा छोड़ दिया ,तो के करूँ आ कै? जब कमाई थी तो थाने की चौथ न्यारी सबसे पहले जावै थी, आपैई। थाने नै मेरे से कोई शिकायत नीं थी। इब बताओ.....''

''हाँ-हाँ, बताऊँगा। भूतनी के, अपना धन्धा छोड़कर हमारा धन्धा चौपट करवा दो। जरा बताइयो, मैंने तेरा क्या बिगाड़ा है? तेरा धन्धा तब ही बन्द हुआ ,जब मैं इय थाने में आया। साले, तुम लातों के भूत बातों से नहीं मानते। एकाध बार कचहरी के चक्कर कटवा दूँगा, तो सारा धन्धा खूब चल पड़ेगा? बोल ससुरे....।''

''के करूँ साहब, बात यो नहीं है।''

''और क्या है? कल से कोई बात नहीं सुनूँगा। चौथ थाने में पहुँच जानी चाहिए हफ्ते बाद, समझे, धन्धा चालू करो या मरो।''

''साहब साठ से ऊपर हो गया, पोरस थक गे, अब नहीं होगा।''

''अरे ससुरे बूढ़े, भोतई कर्मठोक है तू तो। अरे भई, तेरी कोई औलाद तो होगी?''

''जी छोरी थी, ब्याह दी।''●

''और घरवाली ?'' बुढ़िया को इंगित कर नए साहब ने पूछा।

''ना जी, यो तो निरी गऊ है जी। इसने कदी भी मेरे धन्धे में साथ नहीं दिया।''

''बस देख लो, और मैं नहीं सुनना चाहता, हमें भी आखिर कुछ चाहिए, पिछले कागजातों का पेटा भरने के लिए। कुछ धन्धा करो, म्हारा भी कुछ हो। समझे!'' आँखें तरेरकर नया दारोगा गुर्राया। बूढ़े के इनकार करने से पूर्व ही डण्डा तन चुका था, मगर जर्जर हाथों ने उस डण्डे को हवा में ही थाम लिया।●

प्रतिभा का स्वागत

हरि जोशी

उस समय तक उसकी रचनाओं को पत्रिकाओं में स्थान नहीं मिलता था। फिर भी पत्र पत्रिकाओं में उसके द्वारा रचनाएँ भेजते रहने का क्रम जारी था। वह नगर की साहित्यिक गोष्ठियों में जाता ज़रूर; लेकिन सब कोई उसे गधा समझते थे पर घास नहीं डालते थे।

बाद में कई बार उसके द्वारा गोष्ठियों में पढ़ी गई रचनाएँ, सर्वमान्य दिग्गजों द्वारा अमान्य कर दी गईं थीं।

वह हीन भावना से ग्रस्त हो जाता किन्तु कुछ और बेहतर लिखने की कोशिश करता रहता। कभी- कभार पत्रिकाओं को भी प्रकाशनार्थ भेज देता।

दो वर्ष के अंतराल के बाद एक दिन साहित्यकार 'क' ने उसे बताया कल गोष्ठी में कई लेखक तुम्हें भला बुरा कह रहे थे। आजकल तुम आते नहीं। तुम्हारी घटिया रचनाओं को बढ़िया पत्रिकाओं में कैसे स्थान मिल जाता है?

अगले दिन 'ख' ने उससे भेंट की। साहित्य जगत में तुम्हारी चर्चा है तुम बहुत घमंडी हो गए हो। रचनाएँ छपने से कुछ नहीं होगा। लेखकों के बीच उठना बैठना चाहिए।

उसके कार्यालयीन मित्र ने सूचना दी- ''तुम्हारी उस रचना पर कई नेता बहुत नाराज़ हैं। शायद तुम्हारे विरुद्ध कोई कार्यवाही भी हो जाए?''

रचना के आधार पर कुछ दिनों बाद उसके विरुद्ध शासकीय कार्यवाही होने लगी। वह आश्वस्त हो गया - ''उसकी प्रतिभा का समुचित स्वागत होने लगा है।''●

माँ के आँसू

हरि मृदुल

यह उसकी अपनी माँ से अंतिम मुलाक़ात थी, हालाँकि तब उसे इस बात का इल्म नहीं था। वह शहर लौटते समय माँ से विदाई ले रहा था, तो माँ फूट-फूटकर रो पड़ी थी। वह लगातार रोए जा रही थी। उसे थोड़ा आश्चर्य हुआ था कि माँ इतना तो कभी नहीं रोई। वह कुछ समझ नहीं पाया। हाँ, उसने यह जरूर किया कि जेब से रूमाल निकाला और माँ के आँसू पोंछने लगा। पूरा रूमाल आँसुओं से तर हो गया था।

माँ अभी भी रोए जा रही थी।

नौकरी का सवाल था। उसे किसी भी हालत में शहर लौटना था। माँ के आँसू उसे नहीं रोक सके। अलबत्ता उसने माँ के आँसुओं से भीगा रूमाल अपनी जेब में डाल लिया था।

शहर पहुँचते ही माँ के चल बसने की ख़बर आ गई। उसने जेब से रूमाल निकाला, वह अभी तक गीला था। न जाने क्यों, उसने यह रूमाल अलमारी में सुरक्षित रख दिया।

आज काफ़ी समय बाद उससे मेरी मुलाक़ात हुई है। बातचीत के दौरान उसने बताया कि माँ के आँसुओं वाला यह रूमाल अभी तक उतना ही गीला है। कोई और होता, तो उसे इस बात पर ज़रूर आश्चर्य होता, लेकिन मुझे कतई नहीं हुआ है।

लघुकथा का वर्त्तमान परिदृश्य : संचेतना एवं अभिव्यक्ति

डॉ .कविता भट्ट

द्रुतगति से युक्त आधुनिक युग में लघुकथा विधा पाठकों के लिए अति-उपयोगी है। कम समय में अधिक प्रसंगों का आनंद लेने के साथ ही पाठक समाज के आधुनिक प्रसंगों के सम्बन्ध में सचेत होकर समाज के प्रति अपने योगदान के प्रति जागरूक भी होता है। मुझे श्री रामेश्वर काम्बोज 'हिमांशु' कृत लघुकथा का वर्त्तमान परिदृश्य (लघुकथा समालोचना) पुस्तक के अध्ययन का अवसर प्राप्त हुआ। मैंने पढ़ने के स्थान पर अध्ययन शब्द उपयोग किया; क्योंकि इस पुस्तक को पढ़ लेना मात्र पर्याप्त नहीं; अपितु लघुकथा सम्बन्धी सूक्ष्मताओं को गहनता से समझने हेतु यह उल्लेखनीय कार्य है। लघुकथा लेखन विकासक्रम के भारतीय परिप्रेक्ष्य में यह कहना प्रासंगिक है कि 'हिमांशु' जी ने इस विधा को नवीनतम ऊँचाइयों तक ले जाने का अथक प्रयास किया; जो निरंतर जारी है। इसी शृंखला में यह समालोचनात्मक पुस्तक लघुकथा के विविध पक्षों का विशिष्ट विवेचन प्रस्तुत करने का सराहनीय प्रयास है। लघुकथा में समालोचना के भविष्य को स्पष्ट करते हुए समालोचनाकार ने एक अध्याय में राजशेखर को उद्धृत करते हुए आलोचक भावक की चार श्रेणियों का उल्लेख किया है-आरोचकी, सव्यतृणहारी, मत्सरी और तत्त्वाभिनिवेशी। किसी की अच्छी रचना भी अच्छी न लगना, सबकी अच्छी-बुरी सभी रचना अच्छी ही लगना, ईर्ष्यावश सभी की बुराई ही करना एवं न्यायपूर्ण आलोचना करना क्रमशः इन चारों प्रकार के आलोचकों के लक्षण हैं। मेरा मानना है कि समालोचनाकार चतुर्थ श्रेणी का यथोचित अनुपालन करते हैं। इस दृष्टि से पुस्तक पठनीय एवं संग्रहणीय है।

समीक्षा करते हुए तीन बिंदु महत्त्वपूर्ण हैं- प्रथम विषयवस्तु, द्वितीय भावपक्ष एवं तृतीय कलापक्ष। सर्वप्रथम हम विषयवस्तु की बात करेंगे। 22 विवेचनात्मक आलेखों को निबंधात्मक शैली में प्रस्तुत करते हुए समालोचनाकार ने प्रत्येक पक्ष को पैनी दृष्टि से

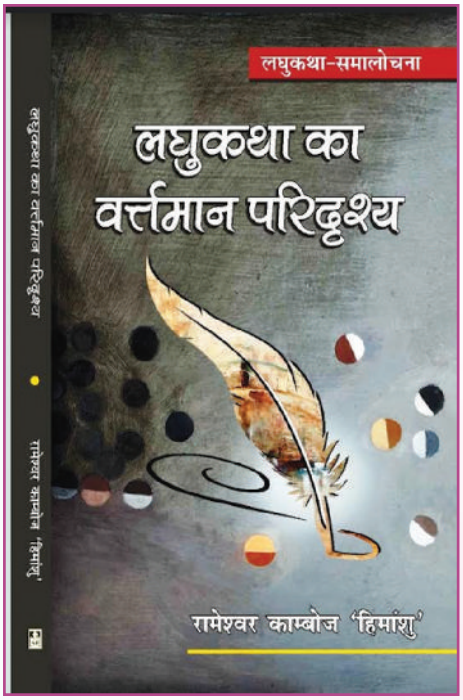

विश्लेषित किया है। परिणामस्वरूप भारतीय विकासक्रम की ऐतिहासिक खोजबीन के साथ ही वैयक्तिक, सामाजिक, प्रायोगिक तथा आनुभविक सोपानों पर आरूढ़ होते हुए लघुकथा एक नायिका के समान प्रत्येक पक्ष को प्रस्तुत करती हुई प्रतीत होती है। भावों को भाषा एवं विषयगत उपयुक्तता में आप्लावित करते हुए लेखक ने पूरी सावधानी रखी है कि कोई भी पक्ष अनछुआ न रह जाए। इस प्रकार लघुकथा को परिभाषित करने के सम्बन्ध में प्रथम सोपान (अध्याय) लघुकथा: संचेतना एवं अभिव्यक्ति अति सशक्त दार्शनिक आयाम को स्वयं में समेटे हुए है। मैं पढ़कर आश्चर्यचकित थी कि विश्लेषक ने लघुकथा को किस प्रकार से साहित्य एवं दर्शन के अनुपम संगम के रूप में प्रस्तुत किया। भारतीय दर्शन की एक आस्तिक दर्शन शाखा है-सांख्य दर्शन; जिसको आधार बनाकर श्रीकृष्ण ने गीताज्ञान भी उपदिष्ट किया। इसके अनुसार सम्पूर्ण सृष्टि चेतन एवं जड़ के संयोग का परिणाम है। चैतन्य की संवाहक चेतना ही है, यह दिखाई नहीं देती; किन्तु जब यह जड़ के साथ संयुक्त होकर अभिव्यक्त होती है; तो अनेक उल्लेखनीय परिणामों से युक्त होती है तथा समस्त चराचर जगत इसी का दृश्य रूप है। लघुकथा में भी लाक्षणिक रूप से इन्हीं तत्त्वों को समाहित मानते हुए लेखक ने खलील जिब्रान, सुकेश साहनी, रमेश बतरा, जगदीश कश्यप, सतीश राज पुष्करणा, सुभाष नीरव, चित्रा मुद्गल, बलराम, बलराम अग्रवाल, श्याम सुन्दर अग्रवाल, श्याम सुन्दर 'दीप्ति', कमल चोपड़ा, अशोक भाटिया, उपेन्द्र प्रसाद राय, सुदर्शन रत्नाकर, दीपक मशाल तथा, पवित्रा अग्रवाल आदि की लघुकथाओं की प्रासंगिकता को स्पष्ट करने का प्रयास किया है। यह कहा जा सकता है कि भाव पक्ष किसी भी सर्जन का संचेतनात्मक पक्ष है एवं कलापक्ष अभिव्यक्त्यात्मक पक्ष है। समालोचनाकार ने दोनों पक्षों का निर्वाह यथोचित ढंग से किया है; यह वस्तुतः उल्लेखनीय है।

लेखक का मानना है कि लघुकथा मात्र शब्दजाल या घटना का चित्रण नहीं; अपितु स्वयं में परिपूर्ण नैतिक कथ्य है। ये मानव के बहुआयामी जीवन को आकार एवं गति प्रदान करने की सामर्थ्य से युक्त होती हैं। जयशंकर प्रसाद की लघुकथाओं का सूक्ष्म विवेचन करने

में लेखक सफल रहे हैं । लघुकथा और भाषिक प्रयोग को विवेचित करते हुए समालोचनाकार स्पष्ट करते हैं कि पात्र, पात्र की मन:स्थिति, परिवेश, स्तर तथा परिस्थिति आदि इस सन्दर्भ में भाषा के स्वरूप का निर्धारण करते हैं। इस अध्याय में सुकेश साहनी की लघुकथा खेल (रेनड्रॉप के चेटरूम से) को उद्धृत भी किया है। बालमनोविज्ञान की कसौटी के सन्दर्भ में राजस्थान के लघुकथाकार यादवेन्द्र शर्मा तथा डॉ. शकुंतला किरण आदि को उदाहरण के रूप में प्रस्तुत किया गया है। इन्टरनेट और लघुकथा के माध्यम से श्री काम्बोज ने विविध नेट पत्रिकाओं के इस क्षेत्र में योगदान को विवेचित किया है। उनका मानना है कि गद्यकोश, साहित्यकुंज डॉट नेट,लघुकथा डॉट कॉम,उदंती डॉट कॉम, रचनाकार डॉट कॉम, अमर उजाला डॉट कॉम एवं हिन्दी गौरव डॉट कॉम आदि का लघुकथा को प्रसारित करने के क्षेत्र में महत्त्वपूर्ण योगदान उल्लिखित किया है। लघुकथा में समालोचना के भविष्य पर भी श्री काम्बोज गंभीरता से विचार करते हैं एवं इस क्षेत्र में परिचर्चाओं एवं अन्य गतिविधियों द्वारा आगामी पीढ़ी के ज्ञानवर्धन को आवश्यक मानते हैं। कथ्य की नवीनता एवं प्रस्तुति की सजगता की लघुकथाओं पर भी यथोचित प्रकाश डाला गया है। शोषित नारी की कथाओं में सुकेश साहनी के 'देह-व्यापार की लघुकथाएँ' नामक लघुकथा संग्रह को उद्धृत किया गया है। इसके अतिरिक्त साझा संस्कृति, अनुभव सृजित, समस्याओं पर केन्द्रित, परिवेश के प्रति लेखकीय ईमानदारी, विवादित लेखकों का अविवादित लेखन, जीवन के अच्छे-बुरे अनुभवों पर केन्द्रित, सामाजिक मुद्दों, शोषितों, मानवीय संवेदनाओं, व्यापक फलक, सामान्य जीवन से राजनीतिक पद-प्रतिष्ठा तक की यात्रा आदि प्रासंगिक विषयों पर केन्द्रित लघुकथाओं के विन्यास एवं उपयोगिता को समालोचनाकार ने यथाविधि यथोचित ढंग से विवेचित किया।

विषयवस्तु के उपरान्त अब हमें पुस्तक के भावपक्ष पर विचार करना चाहिए। इस दृष्टि से पुस्तक का महत्त्व इसलिए है; क्योंकि लघुकथा की शिल्पगत विशेषताओं को एक ही पुस्तक में समेटना एक चुनौतीपूर्ण कार्य है। इस चुनौती को समालोचनाकार ने बड़े ही सहज भाव से स्वीकार किया तथा लघुकथाओं को विविध खाँचों में व्यवस्थित करके उनके सार को उपयुक्तता एवं प्रासंगिकता के आधार पर विवेचित करने में पूर्ण तन्मयता दिखाई है। इसमें वे सफल भी रहे। स्पष्ट करना है कि विभिन्न देश, काल एवं परिस्थिति की लघुकथाओं को नियत एवं सुव्यवस्थित ढाँचे-खाँचे में रखकर लघुकथा लेखन के तकनीकी पक्ष की बारीकियों को बहुत सुन्दर ढंग से समझाया गया है। उपर्युक्त विशेषता के अतिरिक्त पुस्तक की भाषागत सुन्दरता देखते ही बनती है। भाषा प्रवाहपूर्ण, सुगढ़, सर्वग्राह्य एवं सुन्दर है।

कुल मिलाकर समालोचनाकार श्री 'हिमांशु' ने लघुकथा समालोचना के क्षेत्र में एक उपयोगी, अभूतपूर्व एवं ऐतिहासिक कार्य किया है। इन अध्यायों के द्वारा स्थापित लेखकों के साथ ही नए लेखकों को भी लघुकथा विधा को सांगोपांग समझने का सुअवसर प्राप्त होगा। आशा ही नहीं पूर्ण विश्वास है कि पाठक इस पुस्तक को पढ़ने के साथ ही व्यक्तिगत एवं संस्थागत पुस्तकालयों में संगृहीत भी करेंगे; जिससे समालोचनाकार द्वारा किए गए इस श्रमसाध्य लेखन का लाभ अधिक से अधिक पाठकों एवं लेखकों को मिल सके और लघुकथा के सम्बन्ध में अधिकाधिक ज्ञानवर्धन होने के साथ ही इस सम्बन्ध में निराधार भ्रान्तियों, संदेहों एवं अज्ञानतावश लेखन में हो रही अवांछनीय त्रुटियों का भी समाधान हो सके। श्री हिमांशु जी को मेरी अनंत शुभेच्छाएँ उनको लेखन एवं सर्जन हेतु नित्य नवीन ऊर्जा प्राप्त हो एवं उनका साहित्यिक योगदान मील का पत्थर सिद्ध हो, ऐसी शुभेच्छा है।●

-लघुकथा का वर्त्तमान परिदृश्य (लघुकथा समालोचना), लेखक श्री रामेश्वर काम्बोज 'हिमांशु', अयन प्रकाशन, 1/20 महरौली, नई दिल्ली-110030 प्रथम संस्करण : 2018, मूल्य : रु. 280/ पृष्ठ : 136

'गहरे पानी पैठ': समकाल की सार्थक अभिव्यक्ति (लघुकथा-संग्रह)

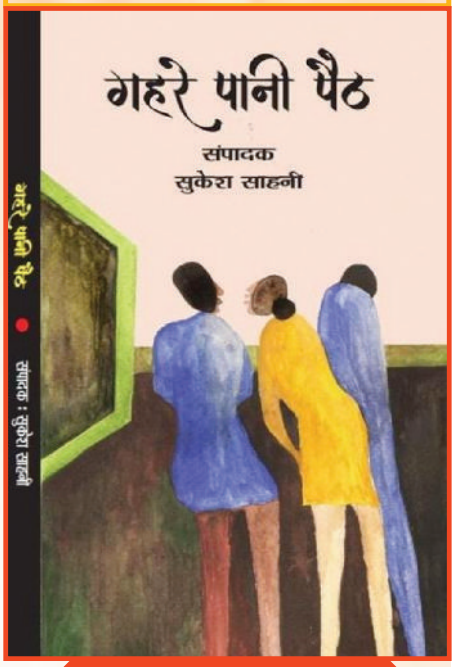

रमेश गौतम

लघुकथा साहित्य की महत्त्वपूर्ण विधा के रूप में सुपरिचित व स्थापित है। जीवन-जगत की वे अधिकतर स्थितियाँ जिनसे सामान्यजन का रोज ही सामना होता है। लघुकथा की अन्तर्वस्तु बनती हैं। और जनमानस पर अपना गहरा प्रभाव छोड़ती हैं। किसी भी विधा के समग्र विकास के लिए प्रयोग आवश्यक होते हैं, वे विधागत जड़ता को समाप्त कर उसे गतिशील बनाते हैं व अपने समकाल की सार्थक अभिव्यक्ति कर पाते हैं। एक रचनाकार अपने चारों ओर बिखरी परिवेशगत स्थितियों के यथार्थ को व्यक्त कर पाने में तभी सफल हो पाता है, जब उसकी रचनात्मकता का पहले से कोई बना-बनाया स्वरूप नहीं होता। उसकी संवेदन-प्रखरता उसे अपनी रचना की नई कहन और शिल्प प्रदान करती है। पूर्वाग्रहों से मुक्त ऐसी रचनात्मकता निश्चय ही चमत्कृत करती है। ऐसी रचनाओं का शब्द-संगठन प्रतीक बन जाता है, जिन्हें

समझना और उनके मर्म तक पहुँचना पाठक से अतिरिक्त एकाग्रता की अपेक्षा करता है जो उसे रचना के गहरे अर्थ तक पहुँचाती है। प्रख्यात लघुकथाकार सुकेश साहनी द्वारा संपादित 'गहरे पानी पैठ' ऐसी लघुकथाओं का अभिनव संग्रह है।

संग्रह की पहली लघुकथा 'सीख' (अंजली गुप्ता 'सिफ़र') ही हमें विमुग्ध करती है। अधुनातन समाज व्यवस्था जो अपने स्वार्थ के लिए दूसरों को नोचते-खसोटते मार गिराने की अभ्यस्त हो चुकी है-'एक हफ्ते से घर कितना सूना है न, सब लोग चले गए। हमारा खाना भी नहीं छोड़ गए। अब हम क्या खाएँगे?' गोल्डी रुआँसी हो उठी। 'तुम्हारा तो पता नहीं; लेकिन ऐसे में मुझे क्या करना चाहिए यह मैंने इनसे जरूर सीखा है।' मीनू गोल्डी की आँखों में देखते हुए बोली।'

कुछ देर बाद टैंक में केवल एक ही मछली तैर रही थी। लघुकथा मानवेतर (दो मछलियों) चरित्रों का सृजनकर आगे बढ़ती है जो लघुकथा के कथ्य का मेरुदण्ड बनकर उभरते हैं और आज की दुनिया के नख से शिख तक के बनावटीपन को अकस्मात उधेड़ डालते हैं। इसी तरह लघुकथा 'हँसी' (असगर वजाहत) अपनी अन्तर्वस्तु और भाषिक संरचना से पाठक को तत्क्षण बाँध लेती है। जटिल कथ्य भी भाषायी कौशल से अंत में सरल हो जाता है। एक विलक्षण चरित्र का सृजन कर लघुकथाकार हमारे भीतर के सारे खोखलेपन को उजागर कर हमें वस्तुस्थिति से अवगत कराता है। आज व्यक्ति स्वयं ही एक उत्पादित सामान की तरह बिखरा पड़ा है। उसका नैसर्गिक स्वरूप अनेक विखण्डित भूमिकाओं में है। ओढ़ी हुई गम्भीरता ने उसे अवसादपूर्ण परिस्थितियों में ढकेल दिया है। लघुकथा का अंत इनसे मुक्त होने का संकेत देता है।

इसी तरह 'आखिरी रास्ता' लघुकथा (अजय पालीवाल नरेश) उन मर्माहत स्थितियों की ओर ध्यान खींचती है जो वर्तमान समय में बुजुर्गों की नियति बन गई है। विखण्डित परिवारों की शृंखला में कहीं भी कोई ऐसा जोड़ नहीं जहाँ उनके अस्तित्व की कड़ी जुड़ती हो। 'पतंग' (अदिति मेहरोत्रा) लघुकथा भी ऐसी ही सामुदायिक आकांक्षा के सामने एक सामयिक प्रतिक्रिया है। 'मुक्ति' (अर्चना वर्मा) लघुकथा एक नई भाव-भंगिमा के साथ मनुष्य की संभावनाओं और उसके भीतर की रोशनी को परिभाषित करती है। अपनी ही रोशनी से आत्ममुग्ध होकर बाहर के कठोर यथार्थ से नहीं लड़ा जा सकता। लघुकथा में निहित गहरा अन्तर्बोध प्रभावित करता है। 'नोट' (अवधेश कुमार) अर्थग्रस्त मानसिकता का सर्वोत्कृष्ट उदाहरण प्रस्तुत करती है। एक तरह से अर्थवादी सामाजिक संरचना की पर्तें खोलती है। कथ्य व शिल्पगत प्रयोग लघुकथाओं को ठोस बनाते हैं लेकिन बोझिल नहीं होने देते लघुकथाओं के निष्कर्ष पाठकों को चमत्कृत करते हैं। ऐसी ही लघुकथाओं के क्रम में 'स्वाभिमान' (अनिल शूर आजाद), 'माँ' (ऋता शेखर मधु), 'गुलाब के लिए' (कस्तूर लाल तागरा), 'रास्ते' (कृष्ण मधु), 'अपनी ही आग में' (आनंद), 'संकट और सम्पर्क' (ओमा शर्मा), 'बड़ा होने पर' (गंभीर सिंह पालनी), 'कुत्ता' (चंदर सोनले), 'पति परमेश्वर' (पल्लवी त्रिवेदी), 'बिना शीशों का चश्मा' (रामकुमार आत्रेय), 'आतंकवादी' (रामकुमार घोटड), 'साँप' (रामनिवास मानव), 'रास्ते' (लखन स्वर्णिक), 'हाथी के दाँत' (विष्णु नागर), 'प्रार्थना' (सुरेश शर्मा) हैं।

'बैताल की नई कहानी' (अशोक भाटिया) लघुकथा की कथास्थिति, चारित्रिक बुनावट और लयबद्धता पाठक को अपने में समेट लेती है। स्पष्ट रूप से पाठक लघुकथा में अपनी उपस्थिति को अनुभूत करता है कि सामाजिक, सामुदायिक व पंथगत संकीर्णताएँ किस तरह एक अंतहीन विस्तार बनती जा रही हैं। जिन्हें प्रगतिशील युग में भी बैताल अपनी पीठ पर ढो रहा है। शीर्षक का लघुकथा से जुड़ाव और उसकी अर्थवत्ता रोमांचित करती है। 'पहरे पर संतरी' (आनंद हर्षुल) लघुकथा बाहरी अनुभवों के कड़वे यथार्थ को बड़ी मार्मिकता से पिरोती है। 'जात' (कमल चोपड़ा) लघुकथा जात व्यवस्था पर गहरा कटाक्ष करती है। छोटे बच्चे के माध्यम से ज्वलन्त प्रश्न उपस्थित कर आत्मीय संस्पर्श की माँग करती है। 'डर' (उदय प्रकाश) लघुकथा का वैशिष्ट्य उसकी लघुता में सिमटी दीर्घता है जो पाठक को देर तक मथती है। आज की त्रासद स्थितियों में डरे हुए मनुष्य की उपस्थिति दर्ज करती है। लघुकथा की अर्थवत्ता समूची दारुण स्थितियों की मीमांसा करती है। कटु यथार्थ को व्यापक सन्दर्भों में प्रस्तुत करती है। 'समाजवाद की प्रतीक्षा' (उर्मिकृष्ण) लघुकथा में प्रजातंत्र की यथार्थ स्थितियों की गहन व्यंजना है। चुनावी कोख से जन्मी विद्रूपताओं के बीच पलते मनुष्य की मन:स्थितियों का चित्रण करती है। अपने कथ्य की संवेदना और भाषा सौष्ठव से लघुकथा प्रभावित करती है। 'समाजवाद' (उर्मिल कुमार थपलियाल) लघुकथा में स्थितियों का अतियथार्थवादी चित्रण होते हुए भी अनायास पाठक को अपनी ओर एकाग्र करती है। यह एकाग्रता केवल कथा-स्थिति के प्रति नहीं थके हुए पात्र के प्रति है जिसे मनुष्य के रूप में परिभाषित किया जाता है, वस्तुत: वह इतना यंत्रवत हो चुका है कि उसे अपने ही अस्तित्व की अनुभूति निर्मूल प्रतीत होती है। एक विचार शून्यता इसे घेरे रहती है, दरअसल यह विचार शून्यता उस यथास्थितिवाद की परिणति है जहाँ बदलाव की कोई गुंजाइश शेष नहीं रह जाती। देह के भीतर की जीवन्तता से थका हुआ मनुष्य पूरे अस्तित्व को ही विभाजित कर स्थितियों के हवाले कर देता है। लघुकथा की व्यंजकता से विचार की कई धाराएँ फूटती हैं। 'दुम वाला

आदमी' (भगीरथ परिहार) लघुकथा सीधा लक्ष्य संधान करती है कि एक झूठ दूसरे झूठ में किस तरह से एकाकार हो जाता है। इस लघुकथा का गहन कथ्य व्यवस्था के कलपुर्जों की कलई खोलता है। 'दौड़' (मधुदीप) लघुकथा मर्मस्पर्शी है। अति महत्वाकांक्षाएँ व्यक्ति को किस तरह अकेला कर देती हैं। लघुकथा अपनी अन्तर्वस्तु से व्यक्ति की अनेकरूपता के कोहरे को छाँटती है इसे दिशा देती है। इस क्रम में 'जानवर भी रोते हैं' (जगदीश कश्यप), 'चोर' (जोगिंदर पाल), 'वह तीसरा' (दीपक मशाल), 'मदारी और खेल' (पारस दासोत), 'तुमसे मैं' (पूनम डोगरा), 'दो तितलियाँ और चुप रहने वाला लड़का' (प्रबोध गोविल), 'चश्मदीद' (बलराम अग्रवाल), 'शहर और आँखें' (मनोज कौशिक), 'अधूरे ख्वाब' (महेन्द्र कुमार), 'आदेश' (युगल), 'खोया हुआ आदमी' (रमेश बतरा), 'चिड़िया' (रवीन्द्र वर्मा), 'अपने पार' (राजेन्द्र यादव), 'जिस्मों का तिलिस्म' (सतीश राठी), 'आईना' (सत्यनारायण) आदि महत्वपूर्ण लघुकथाएँ हैं।

'जरूरत' (महेश शर्मा) लघुकथा एकाएक ध्यान आकर्षित करती है। पुराने सामान को ऑनलाइन बेचने के चलन के बीच सामान का फोटो सेशन करते पोते द्वारा ग्रैण्ड पा, स्माइल प्लीज कहते उनका फोटो क्लिक कर लेना। एक क्षण भर का घटनाक्रम। दादा के पूरे अस्तित्व को हिला देता है। वृद्धों की घर में स्थिति का एक रूपक सामने खड़ा हो जाता है। 'फक्कड़ उवाच' (योगराज प्रभाकर) लघुकथा दिन और रात के भौगोलिक व्याकरण को सामाजिक सन्दर्भ देती है। सूरज की उपस्थिति को भिन्न आयाम देती है, सत्ता के अहंकार को एक फक्कड़ ही ललकार सकता है। 'चिरसंगिनी' (रामेश्वर काम्बोज हिमांशु) लघुकथा में कुंठाग्रस्त मनुष्य की भाव स्थितियाँ एक बार को विस्मित करती हैं कि कथावस्तु कितनी सूक्ष्मता के साथ कुंठाग्रस्त मन: स्थितियों की शल्यक्रिया करती है। अपराधबोध के पर्यवेक्षण में बुना गया कथ्य प्रभावित करता है। एक तरह से लघुकथा मनुष्य के जटिलतम अन्तर्बोध की व्याख्या करती है। लघुकथा उस व्यतीत को पुनर्जीवित करती है जिसे लेकर मनुष्य सोया हुआ है। 'और वह मर गई' (शंकर पुणतांबेकर) लघुकथा एक प्रश्नवाचक चिन्ह की तरह सामने आती है। सत्य और नीति लघुकथा में दो भाववाचक संज्ञाएँ भर नहीं हैं। क्षयग्रस्त जीवन मूल्यों का रुदन है। जो आज भी हाशिए पर पड़ा है। 'वर्ग-भेद' (सतीश राज पुष्करणा) लघुकथा समाज में व्यक्ति की वस्तु स्थिति और उसकी मूल संवेदना को बहुत गहरे से रेखांकित करती है। 'और वह मरी नहीं' (संध्या तिवारी) लघुकथा स्त्री मन की गाँठों को परत-दर-परत खोलती है, उसके जर्जर आत्मविश्वास को सिलने की कोशिश करती है। 'नंगा आदमी' (सुकेश साहनी) लघुकथा मनुष्य की उस प्राकृतिक मनोदशा का चित्रण करती है जो उसे जन्म से मिली है। परन्तु सामाजिक स्थितियों में उसे न जाने कितनी पोशाकें और मुखौटे पहनकर जीवन यापन करना होता है। सामाजिक परिवेश के प्रयोजन नित्य रूप-रंग बदलते हैं। आदमी को उसी क्रम में नकलीपन ओढ़े रहने की कलात्मकता को सीखना पड़ता है पर एक दिन ऊबकर वह उसे उतार फेंकता है। छल, फरेब, प्रपंच की पोशाकों से अलग होते ही अवसाद की स्थिति से मुक्ति मिलती है एक अलग सुख की अनुभूति होती है। किन्तु समाज को वह स्वीकार नहीं। वास्तव में यह पोशाकें विभिन्न विचार धाराओं की प्रतीक हैं। जिनसे स्वतन्त्र होना दुष्कर है और पहनकर सत्य से दूर हो जाते हैं। समाज में व्यक्ति की कोई स्वतंत्र सत्ता नहीं है। लघुकथा की प्रतीकात्मकता और भाषायी सौष्ठव मुग्ध करता है। 'सफर में' (सुभाष नीरव) लघुकथा मनुष्य के स्थितिपरक व्यवहार की व्यंजना करती है। समय और स्थिति के अनुसार मनुष्य स्वत: सामंजस्य की ओर उन्मुख होता है। नीरव जी अपनी रचनात्मकता में कहीं भी तनाव नहीं आने देते। 'तिल' (हरि मृदुल) लघुकथा स्त्री के प्रति पुरुष के वर्चस्ववादी सोच की व्यंजना करती है। पुरुष हमेशा स्त्री के भीतर के व्यक्तित्व को बाहर के देह सौष्ठव से पढ़ने की कोशिश करता है। 'तिल' शीर्षक एक बिम्ब के रूप में उभरता है। कथा-सौष्ठव प्रभावित करता है।

संग्रह की अन्य महत्वपूर्ण लघुकथाओं में 'जूते और कालीन' (चैतन्य त्रिवेदी), 'अभी' (जसवीर चावला), 'तकनीक का धमाका' (जावेद आलम), 'पश्चाताप' (नर्मदा प्रसाद उपाध्याय), 'दया' (पृथ्वीराज अरोड़ा), 'रोटी की शक्ल' (भगवान प्रियभाषी), 'लकीरें' (मनन कुमार सिंह), 'चिड़िया' (राजेश सकलानी), 'निहाल चंद' (रघुनन्दन त्रिवेदी), 'छाता' (रमेश आजाद), 'कुकनूस' (रवि प्रभाकर), 'लांग शाट' (राकेश कुमार), 'हाथी के दाँत' (विष्णु नागर), 'आर्द्रता' (संतोष सुपेकर), 'आमने-सामने' (सुधीर अग्निहोत्री), 'भला आदमी' (सुरेन्द्र कुमार अरोड़ा), 'पल-पल' (सोनाली सिंह), 'एहसास' (हरदर्शन सहगल), 'लूट' (हरीश करमचंदाणी), 'लाठी' (हरीश नवल), 'खुशफहमी' (हसन जमाल) की चर्चा उल्लेखनीय है। सभी लघुकथाएँ अपने कथ्य-विधान यथार्थवादी सोच प्रतीकात्मकता, लाक्षणिकता और भाषायी सौष्ठव से 'गहरे पानी पैठ' शीर्षक की अर्थवत्ता को सार्थक करती हैं। लघुकथाओं की श्रेष्ठता इस बात का प्रमाण है कि उनके चयन में संपादक सुकेश साहनी जी ने बहुत श्रम किया है। रामेश्वर काम्बोज 'हिमांशु' जी की आवरण-टिप्पणी प्रभावशाली है। चित्रकार के रवीन्द्र का आवरण ध्यान खींचता है। अस्तु, निश्चय ही पाठकों के बीच 'गहरे पानी पैठ' लघुकथा संग्रह चर्चित होगा।●

आत्मरंजनयुक्त प्रासंगिक लघुकथाएँ

डॉ .कविता भट्ट

लघुकथा मात्र मनोरंजन की साहित्यिक विधा नहीं, अपितु सशक्त सामाजिक सन्देश के धागे में गूँथी हुई समाज के रंग-बिरंगे मनकों से युक्त माला कही जा सकती है; जो आत्मरंजन का श्रेष्ठ माध्यम भी है। आजकल साहित्य की अनेक विधाएँ पाठकों के समय तथा पढ़ने की आदत की कमी के कारण निरंतर मुख्य धारा से विलुप्त होती जा रही हैं। वर्तमान परिस्थितियों में लघुकथा अत्यधिक उपयोगी विधा इसलिए है; क्योंकि यह सीमित शब्दों में अत्यंत संवेदनशील एवं सारगर्भित तथ्यों को रोचक एवं सरल ढंग से प्रस्तुत करने का सशक्त माध्यम है। आधुनिक तीव्रगामी वातावरण में कम समय होते हुए भी पाठक लघुकथा के माध्यम से आत्मरंजन के साथ ही अत्यंत प्रासंगिक एवं समकालीन विषयों को समझ सकता है।

वस्तुत: लघुकथा केवल विषयों को प्रस्तुत ही नहीं करती; अपितु अपने आप में इतनी परिपूर्ण होती है कि यदि पाठक संवेदनशील है ,तो छोटी सी विषयवस्तु में ही गंभीर से गंभीर समस्याओं का समाधान भी खोज लेता है। लघुकथा किसी भी विषयवस्तु पर हो; इतना निश्चित है कि यह विषय का गंभीर दार्शनिक चिंतन प्रस्तुत करती है। सौभाग्य से मुझे इस विधा में अनेक विषयवस्तुओं पर पढ़ने का अवसर प्राप्त हुआ। अनेक लघुकथाएँ ऐसी हैं कि अपनी अंतिम पंक्ति तक आते-आते एक ज्वलंत समस्या के प्रति विचारों के साथ ही मन में आक्रोश भी स्फुरित कर गईं।

ऐसी ही एक लघुकथा है- श्री रामेश्वर काम्बोज 'हिमांशु' की 'धर्म-निरपेक्ष'। यह लघुकथा कुतूहल एवं रोमांच से प्रारंभ होकर एक ज्वलंत एवं चिंतनीय समकालीन मुद्दे पर जाकर समाप्त होती है। मुद्दा ऐसा कि जिस पर अनेकानेक ग्रन्थ लिखे जा सकते हैं। यह लघुकथा मन और मष्तिष्क दोनों को छूने के साथ ही गहरे से पैठ भी बना गयी। तटस्थ दृष्टिकोण अपनाते हुए; कथा की जितनी भी प्रशंसा की जाए कम ही है।

प्राचीन समय से धर्म मानव समाज हेतु दिग्दर्शन का हेतु एवं जीवन पद्धति के रूप में प्रतिष्ठित था; आधुनिक युग में वही मानव समाज की सबसे बड़ी त्रासदी का हेतु बन गया है। भारतवर्ष की स्थिति इस पक्ष पर चिंताजनक इसलिए है; क्योंकि धर्म, जाति एवं संप्रदाय के नाम पर बनता हुआ यहाँ का समाज धर्मनिरपेक्षता की बात सिद्धान्तत: मानते हुए भी व्यावहारिक धरातल पर अभी भी व्यर्थ के रक्तपात एवं राजनीतिक संघर्ष में ही उलझा हुआ है। इस कारण यहाँ का समाज वास्तविक उत्थान पर केन्द्रित नहीं हो पाता। इसी धार्मिक एवं सम्प्रदायगत रक्तपात को आधार बनाकर श्री काम्बोज की यह मार्मिक एवं सारगर्भित लघुकथा मानव समाज का धर्मान्धता वाला पक्ष प्रस्तुत करने के साथ ही अंतत: एक गहन शिक्षा भी प्रस्तुत करती है। कथाकार अपनी बात को कहने में पूर्ण से भी आगे निकल आए; क्योंकि धर्म कौतूहल अंत में मानव के धार्मिक रक्तपात वाले कृत्य पर घृणा में परिवर्तित हो जाता है। जब धर्म के नाम पर लड़ते हुए दो आक्रामक व्यक्तियों के चाकू से हुए संघर्ष में दोनों सड़क पर लुढ़क जाते हैं तथा एक कुत्ता ,जो हड्डी को चबा रहा है; हड्डी छोड़कर जब मांस की लालसा में उन व्यक्तियों को नोंचने के लिए आगे बढ़ता है; उन्हें गोश्त के रूप में नोंचने के स्थान पर वह कुत्ता उनके ऊपर मूत्र विसर्जन कर देता है। इस प्रकार लेखक बहुत कम शब्दों में बड़ी पटुता के साथ पाठक को यथोचित सन्देश देने में शत-प्रतिशत सफल रहे हैं। साथ ही निश्चित रूप से ऐसा प्रतीत होता है कि लेखक मात्र सिद्धांत में ही नहीं ,व्यवहार में भी मानवतावादी संवेदनशील हृदय रखते हैं; क्योंकि व्यक्ति साहित्यकार होने के साथ ही जब एक अच्छा दृष्टिकोण रखता हो और एक अच्छा व्यक्ति हो, तभी वह ऐसी रचना को लिपिबद्ध कर सकता है, अन्यथा नहीं।

धर्म के नाम पर लड़ने वाले लोग पशु से भी तुच्छ हैं; ऐसा सन्देश देने में लेखक पूर्णत: सफल रहे हैं। अंत में लेखक की इस कथा के सम्बन्ध में जो सन्देश प्रस्तुत होता है ,वह उपनिषद दर्शन के उस श्लोक से सम्बन्ध रखता है जिसमें कहा गया-

अयं निज: परोवेति गणना लघुचेतसाम्।
उदारचरितानां तु वसुधैव कुटुम्बकम्।।

अर्थात् ये तेरा है, ये मेरा है; ऐसी गणना संकुचित मानसिकता के लोग करते हैं; उदार चरित् वाले लोग तो सम्पूर्ण विश्व को कुटुंब के समान समझते हैं। यद्यपि इस प्रकार के विचारों से प्राचीन भारतीय वाङ्मय संपन्न है; तथापि वर्तमान परिस्थितियों में यह विचार थोड़ा कमजोर पड़ गया है। इस दृष्टि से 'धर्म निरपेक्ष' शीर्षक से यह लघुकथा अत्यंत प्रभावी एवं समकालीन परिदृश्य में प्रासंगिक भी है; क्योंकि धर्म के नाम पर होने वाले रक्तपात को जब तक नहीं रोका जाएगा; मानव समाज का वास्तविक

उत्थान संभव नहीं है। लघुकथाओं की इस शृंखला में मेरी पसंद की अनेक और भी रचनाएँ हैं, किन्तु समकालीन स्थितियों को चित्रित करती श्री सुकेश साहनी की कसौटी लघुकथा मुझे अत्यधिक प्रभावित करती है; यह रचना आधुनिक समाज में नारी जीवन की विसंगतियों को चित्रित करती है। एक ओर महिला अंतरिक्ष यात्री बनकर ब्रह्मांड में रहस्यों को उद्घाटित करने में पुरुषों से किसी भी तरह पीछे नहीं दूसरी ओर भारतीय सन्दर्भ में बात की जाए, तो वह संस्कारों में जकड़े हुए समाज का भी निर्वहन करती है। अंतर्द्वन्द्वों में घिरे उसके जीवन के अनेक पक्षों को प्रस्तुत करने में लेखक पूर्णत: सफल रहे हैं। वैश्विक विकास के दौर में बहुराष्ट्रीय कंपनी में नौकरी की इच्छा रखने वाली महिला से कंपनी की अपेक्षाओं एवं भारतीय सभ्यता एवं संस्कृति के मापदंडों में निरंतर उलझा हुआ महिला समाज कैसे मानसिक संघर्ष से हर दिन दो-चार होता है इस कथा के माध्यम से लेखक ने यही चित्रित करने का प्रयास किया है; जिसमें वे सफल हुए।

एक पुरुष साहित्यकार महिलाओं के मनोभावों एवं समस्याओं का ऐसा यथोचित चित्रण कर पाए; यह वास्तव में उल्लेखनीय है। इस प्रकार लेखक अपने लक्ष्य में पूर्णत: सफल हुए हैं।

कहना प्रासंगिक है कि यद्यपि भारतीय महिला शैक्षिक दृष्टि से कितनी भी सुयोग्य क्यों न हो; किन्तु वर्तमान परिस्थितियों में; यदि वह अपनी संस्कृति को दरकिनार नहीं करती और तथाकथित आधुनिकीकरण की अंधी दौड़ में शामिल नहीं होती ,तो वह अपनी योग्यता के अनुरूप नौकरी प्राप्त नहीं कर सकती। यदि नौकरी के हिसाब से स्वयं को ढालती है तो तथाकथित संस्कारों को खो बैठती है; और यदि संस्कारों के अनुसार चलती है ,तो वह आधुनिक युग की प्रतिस्पर्धाओं में पीछे छूट जाती है। इन्हीं अंतर्द्वन्द्वों से जूझती भारतीय महिला की अनेक क्षमताएँ तो स्वयं के मानसिक द्वंद्व एवं सामाजिक मापदंडों से जूझने में ही व्यर्थ हो जाती हैं। लेखक अपने सन्देश को पाठक तक पहुँचाने और एक नए ढंग से विचार स्फुरित करने के प्रयोग में खरे उतरते हैं। इस प्रकार के लेखन में नैरन्तर्य आवश्यक है।●

धर्म-निरपेक्ष

रामेश्वर काम्बोज 'हिमांशु'

शहर में दंगा हो गया था। घर जलाए जा रहे थे। छोटे बच्चों को भाले की नोकों पर उछाला जा रहा था। वे दोनों चौराहे पर निकल आए। आज से पहले उन्होंने एक-दूसरे को देखा न था। उनकी आँखों में खून उतर आया। उनके धर्म अलग-अलग थे। पहले ने दूसरे को माँ की गाली दी, दूसरे ने पहले को बहिन की गाली देकर धमकाया। दोनों ने अपने-अपने छुरे निकाल लिये। हड्डी को चिंचोड़ता पास में खड़ा हुआ कुत्ता गुर्रा उठा। वे दोनों एक-दूसरे को जान से मारने की धमकी दे रहे थे। हड्डी छोड़कर कुत्ता उनकी ओर देखने लगा। उन्होंने हाथ तौलकर एक-दूसरे पर छुरे का वार किया। दोनों छटपटाकर चौराहे के बीच में गिर पड़े। ज़मीन खून से भीग गई। कुत्ते ने पास आकर दोनों को सूँघा। कान फड़फड़ाए। बारी-बारी से दोनों के ऊपर पेशाब किया और सूखी हड्डी चबाने में लग गया।●

कसौटी

सुकेश साहनी

खुशी के मारे उसके पाँव जमीन पर नहीं पड़ रहे थे। साइबर कैफे से बाहर आते ही उसने घर का नम्बर मिलाया।

''पापा!...'' उससे बोला नहीं गया।

''हमारी बेटी ने किला फतह कर लिया! है न?''

''हाँ, पापा!'' वह चहकी, ''मैंने मुख्य परीक्षा पास कर ली है। मेरिट में दूसरे नम्बर पर हूँ !''

''शाबाश! मुझे पता था... हमारी बेटी है ही लाखों में एक!''

''पापा, पंद्रह मिनट के ब्रेक के बाद एक माइनर पर्सनॉलिटी टेस्ट और होना है। उसके फौरन बाद हमें अपाइंटमेंट लेटर दे दिए जाएँगे। मम्मी को फोन देना...''

''इस टेस्ट में भी हमारी बेटी अव्वल रहेगी। तुम्हारी मम्मी सब्जी लेने गई है। आते ही बात कराता हूँ। आल द बेस्ट, बेटा!''

उसकी आँखें भर आईं। पापा की छोटी-सी नौकरी थी, लेकिन उन्होंने बैंक से कर्जा लेकर अपनी दोनों बेटियों को उच्च शिक्षा दिलवाई थी। मम्मी-पापा की आँखों में तैरते सपनों को हकीकत में बदलने का अवसर आ गया था। बहुराष्ट्रीय कम्पनी में एग्ज़ीकयूटिव आफिसर के लिए उसने आवेदन किया था। आज ऑनलाइन परीक्षा उसने मेरिट में पोजीशन के साथ पास कर ली थी।●

दूसरे टेस्ट का समय हो रहा था। उसने कैफे में प्रवेश किया। कम्प्यूटर में रजिस्ट्रेशन नम्बर फीड करते ही जो पेज खुला, उसमें सबसे ऊपर नीले रंग में लिखा था-''वेलकम-मिस सुनन्दा!'' नीचे प्रश्न दिए हुए थे, जिनके आगे अंकित 'यस' अथवा 'नो' को उसे 'टिक' करना था...

विवाहित हैं? इससे पहले कहीं नौकरी की है? बॉस के साथ एक सप्ताह से अधिक घर से बाहर रही हैं? बॉस के मित्रों को 'ड्रिंक' सर्व किया है? एक से अधिक मेल फ्रेंड्स के साथ डेटिंग पर गई हैं? किसी सीनियर फ्रेंड के साथ अपना बैडरूम शेअर किया है? पब्लिक प्लेस में अपने फ्रेंड को 'किस' किया है? नेट सर्फ़िंग करती हैं? पार्न साइटस् देखती हैं? चैटिंग करती हैं? एडल्ट हॉट रूम्स में जाती हैं? साइबर फ्रेंड्स के साथ अपनी सीक्रेट फाइल्स शेअर करती हैं? चैटिंग के दौरान किसी फ्रेंड के कहने पर खुद को वेब कैमरे के सामने एक्सपोज़ किया है?.... सवालों के जवाब देते हुए उसके कान गर्म हो गए और चेहरा तमतमाने लगा। कैसे ऊट-पटांग और वाहियात सवाल पूछ रहे हैं? अगले ही क्षण उसने खुद को समझाया-बहुराष्ट्रीय कम्पनी है, विश्व के सभी देशों की सभ्यता एवं संस्कृति को ध्यान में रखकर क्वेश्चन फ्रेम किए गए होंगे।

सभी प्रश्नों के जवाब 'टिक' कर उसने पेज को रिजल्ट के लिए 'सबमिट' कर दिया। कुछ ही क्षणों बाद स्क्रीन पर रिजल्ट देखकर उसके पैरों के नीचे से जमीन निकल गई। सारी खुशी काफूर हो गई। ऐसा कैसे हो सकता है? पिछले पेज पर जाकर उसने सभी जवाब चेक किए, फिर 'सबमिट' किया। स्क्रीन पर लाल रंग में चमक रहे बड़े-बड़े शब्द उसे मुँह चिढ़ा रहे थे- 'सॉरी सुनन्दा! यू हैव नॉट क्वालिफाइड। यू आर नाइंटी फाइव परसेंट प्युअर (pure)। वी रिक्वाअर एटलीस्ट फोर्टी परसेंट नॉटी (naughty)।'

लघुकथाओं की अंतर्यात्रा - लघुकथाएँ : मेरी पसंद-2

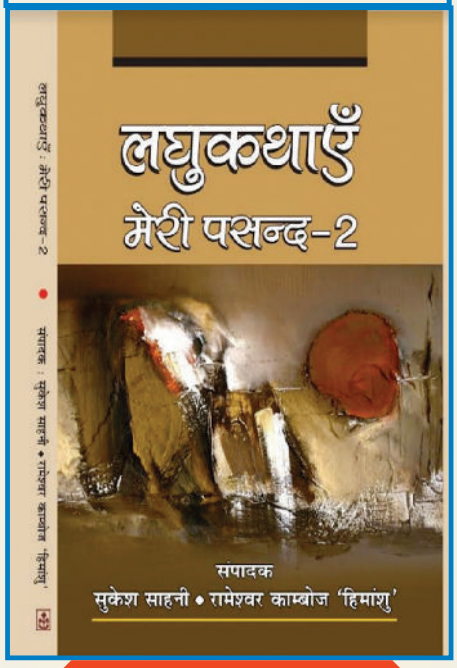

डॉ.कविता भट्ट

प्रसिद्ध लघुकथाकार एवं इस क्षेत्र में अभूतपूर्व ऐतिहासिक समर्पण के साथ कार्य करने वाले संपादकद्वय सुकेश साहनी एवं रामेश्वर काम्बोज 'हिमांशु' द्वारा सम्पादित 'लघुकथाएँ : मेरी पसंद-2' पढ़ने का मुझे सुअवसर प्राप्त हुआ। यह पुस्तक ख्यातिप्राप्त लेखकों द्वारा विभिन्न लघुकथाकारों की लघुकथाओं की समीक्षा का रंग-बिरंगा गुलदस्ता है; जिसमें मनभावन रंगों के साथ ही आनंदित और भावमुग्ध करने वाली सुगंध भी है। यह पुस्तक वैयक्तिक-सामाजिक ताने-बाने से तैयार लघुकथाओं की यथोचित समीक्षाओं को प्रस्तुत करने के साथ ही उन लघुकथाओं का रसास्वादन भी करवाती है। अनेक विशेषताओं को समेटे हुए 'लघुकथाएँ : मेरी पसंद-2' पठनीय एवं संग्रहणीय है; इसकी संक्षिप्त विवेचना करेंगे; किन्तु उससे पूर्व लघुकथा-विधा की वर्तमान प्रासंगिकता को संक्षेप में स्पष्ट करेंगे।

कभी-कभी एक 'अक्षर' अथवा अनेकश: 'अक्षर' समूह से शब्द की व्युत्पत्ति होती है। 'अक्षर' 'अ' एवं 'क्षर' से निर्मित है; जिनका अर्थ क्रमश: 'नहीं' एवं 'नाश' है; इस प्रकार पूरे शब्द का अर्थ है- 'जिसका नाश न हो'। साररूपेण कहा जा सकता है कि अक्षर वह है; जिसका नाश न हो। इस प्रकार यदि अक्षर अविनाशी है ,तो 'शब्द' भी अविनाशी हुआ। साथ ही ध्यातव्य है कि इसी दृष्टि से भारतीय वांग्मय में 'शब्द' को ब्रह्म की संज्ञा प्रदान की गई है।

स्पष्ट यह करना है कि यह अकारण नहीं है; अपितु जब भी वक्ता किसी शब्द को बोलता है या लेखक किसी शब्द को लिखता है; तो वह ब्रह्म का साक्षात्कार करता है; इसीलिए सत्यनिष्ठ शब्द-साधक या रचनाकार ब्रह्म के निकट होता है। इस दृष्टि से देखा जाए, तो शब्द में भी आत्मभाव हुआ और शब्द साधक तो चैतन्य होने के कारण आत्मभाव युक्त होता ही है। इस प्रकार शब्द साधना में निरत रचनाकार एवं शब्द; इन दोनों का आत्मभाव से युक्त होने के कारण इन को एक दूसरे का प्रतिबिम्ब भी माना जा सकता है। इसीलिए रचनाकार शब्दों में प्रतिबिंबित होता है। इस दृष्टि से शब्दों का समूह या वाक्य मात्र एक वाग्जाल नहीं ,अपितु सृष्टि है। अच्छा लघुकथाकार वही है, जिसकी पकड़ शब्द की विभिन्न मुद्राओं और अर्थ -छटाओं पर होती है।

ऐसी ही एक सृष्टि का प्रकारांतर है- लघुकथा; जो आकार में तो छोटी होती है; किन्तु भाव एवं अभिव्यक्ति की दृष्टि से स्वयं में विराट होती है। यहाँ पर लघुकथाओं के सम्बन्ध में भारतीय कथाओं में प्राप्त एक प्रसंग प्रासंगिक है; एक बार पार्वती-शिव ने अपने दोनों पुत्रों गणेश एवं कार्तिकेय को कहा कि जो सभी लोकों की परिक्रमा पहले कर आएगा; वह अधिक बुद्धिमान कहलाएगा। कार्तिकेय परिक्रमण हेतु शीघ्रता से निकल गए। गणेश ने अपने माता-पिता की एक परिक्रमा पूर्ण की और उनके सम्मुख खड़े हो गए और बोले कि मैंने समग्र ब्रह्माण्ड की परिक्रमा पूर्ण कर ली। पार्वती-शिव प्रसन्न हुए और उन्होंने वरदान दिया कि गणेश को प्रत्येक शुभकार्य में सर्वप्रथम पूजा जाएगा। यह प्रसंग यहाँ इसलिए उद्धृत किया; क्योंकि लघुकथा भी इस प्रकार की एक परिक्रमा है; जीवन के विविध पक्षों की अन्तर्यात्रा है। यदि अत्यन्त अल्प शब्दों में कुछ

सारगर्भित कहना हो, तो इससे सुन्दर और सार्थक विधा कोई भी नहीं। लघुकथा के प्रारम्भिक काल में इसके महत्त्व को समझे बिना या रचना-विधान की दृष्टि को गहराई से जाने बिना इसकी बहुत आलोचना की गई; किन्तु पाठकीयता ,लोकप्रियता तथा उपयोगिता को दृष्टिगत रखते हुए; आधुनिक अतितीव्र गत्यात्मक समय में इससे अच्छी सक्रिय त्वरित प्रभाव छोड़ने वाली विधा अन्य नहीं। पाठक और लेखक दोनों के साथ ही साहित्य एवं समाज की दृष्टि से भी यह अति उपयोगी है; क्योंकि यह समाज को कम शब्दों में दर्पण दिखाने तथा यथोचित दिशा में ले जाने में सक्षम है। इसलिए इस विधा का लेखन, पठन-पाठन तथा लोकप्रियता दिनों-दिन बढ़ते जा रहे हैं।

इस संग्रह में रचनाकार, समीक्षक और पाठक अपनी-अपनी पसन्द के साथ एक ही मंच पर विद्यमान हैं। 'मेरी पसन्द' का उद्देश्य ही रहा है- लेखक, समीक्षक और पाठक को जोड़ना। इस संग्रह में रचना श्रीवास्तव, डॉ. सुधा गुप्ता, सुमन कुमार घई, जया नर्गिस, हरि मृदुल, डॉ. मिथिलेश कुमारी मिश्र, निरंजन बोहा, डॉ. भावना कुँअर, डॉ.सुधा ओम ढींगरा, गिरीश पंकज, निशान्तर, मधुदीप, डॉ.ज्योत्स्ना शर्मा, अनिता ललित तथा डॉ.जेन्नी शबनम आदि प्रतिष्ठित लेखकों ने विभिन्न लघुकथाओं पर अपनी लेखनी समीक्षक के रूप में चलाई है। लघुकथा डॉट कॉम के इस महत्त्वपूर्ण कॉलम के माध्यम से लघुकथा की तह तक पहुँचने का सफल प्रयास किया गया है।

सुकेश साहनी कृत धुएँ की दीवार, गोश्त की गंध आदि लघुकथाएँ प्रशंसनीय हैं एवं उनकी यथोचित समीक्षा की गई है। लेखक 'गोश्त की गन्ध' के बिम्ब को पकड़ने में सफल रहा है, जो उक्त लघुकथा का प्राण है। उसे समझे बिना प्रतीकात्मक अर्थ तक पहुँच सम्भव नहीं। रामेश्वर काम्बोज 'हिमांशु' कृत ऊँचाई, छोटे-बड़े सपने, भग्नमूर्ति, नवजन्मा, खुशबू, धर्म-निरपेक्ष; चित्रा मुद्गल कृत रिश्ता की समीक्षा यथोचित सारगर्भित एवं सुन्दर है। डॉ. किशोर काबरा कृत पेड़ और बच्चा तथा खलील जिब्रान कृत एवं सुकेश साहनी द्वारा अनूदित आँख, महत्त्वाकांक्षा आदि लघुकथाओं की समीक्षा भी समीचीन है। डॉ. कुलदीप सिंह की लघुकथा सब ठीक है; आनंद मोहन अवस्थी कृत अन्नअप्पा, जोगिन्दर पाल कृत उपस्थित, उदय प्रकाश कृत डर, राजेन्द्र पाण्डेय कृत माटी का मोल, डॉ. शंकर पुणताम्बेकर लिखित अवैध संतान, डॉ. श्याम सुन्दर दीप्ति की स्वागत, श्याम सुन्दर अग्रवाल कृत माँ का कमरा, आँगन की धूप, सुभाष नीरव कृत बीमार, एक और कस्बा, सतीश दुबे कृत बर्थ डे गिफ्ट, विष्णु प्रभाकर कृत फर्क, डॉ. सतीशराज पुष्करणा की अँधेरा, जीवन-संघर्ष, अन्तश्चेतना, अखिल रायजादा की पहला संगीत, एन उन्नी कृत कबूतरों से भी खतरा है, अरुण कुमार कृत सीख, विवेक की साँझ, प्रद्युम्न भल्ला की बड़े साहब, सतिपाल खुल्लर कृत बंधन, प्रबोध कुमार की 'माँ' तथा रमेश बतरा कृत सूअर, लड़ाई आदि मार्मिक लघुकथाओं को पढ़ने का आनंद पाठक ले सकते हैं। 'मेरी पसन्द' के अन्तर्गत किया गया इन लघुकथाओं का चयन इस बात की स्थापना करता है कि अच्छी लघुकथा का गन्तव्य है-मानव मन की परख, उसमें उठती छोटी-बड़ी लहरें और उन तक पहुँचती गहन दृष्टि।

इन सभी लेखकों ने रचनाधर्मिता एवं सामाजिक उत्तरदायित्त्व का निर्वहन उत्कृष्टता के साथ किया है। सम्पादन की विशिष्टता यह है कि विविध लघुकथाओं की समीक्षा भी उसके साथ ही होने से पाठक को उसका विवेचन एवं विश्लेषण भी साथ ही पढ़ने को मिलता है। यह कार्य अत्यंत सराहनीय एवं उपयोगी है। यह पुस्तक सामान्य पाठक से लेकर, अनुसन्धान करने वाले, लघुकथा की सृजन-प्रक्रिया को समझने की जिज्ञासा रखने वाले सभी लघुकथा -प्रेमियों को जोड़ने के लिए सेतु का काम करेगी। 'मेरी पसन्द' का यह कार्य हिन्दी विश्व के प्रसिद्ध अन्तर्जाल के द्वारा पहले ही पाठकों तक पहुँच चुका है। प्रकाशन के माध्यम से अब पुस्तक रूप में भी उपलब्ध है। इस कार्य के लिए सम्पादकद्वय को साधुवाद एवं भविष्य-कालीन साहित्यिक यात्रा हेतु शुभकामनाएँ।●

लघुकथा : मेरी पसंद- 2, सम्पादक : सुकेश साहनी एवं रामेश्वर काम्बोज 'हिमांशु', संस्करण : 2018, पृष्ठ : 121, मूल्य : 240/- , प्रकाशन: अयन प्रकाशन, महरौली, नयी दिल्ली-110030

लघुकथा सृजन और रचना कौशल

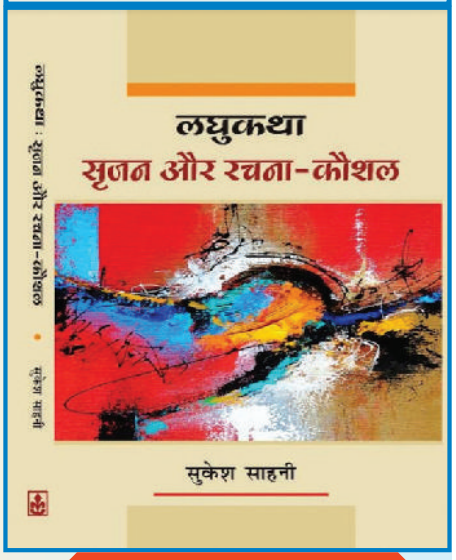

डॉ. उमेश महादोषी

विगत दिनों मूर्धन्य लघुकथाकार श्री सुकेश साहनी जी के लघुकथा विषयक आलेखों का महत्वपूर्ण संकलन प्रकाश में आया है। 'लघुकथा सृजन और रचना-कौशल' शीर्षक इस संकलन में लघुकथा के सन्दर्भ में विभिन्न अवसरों पर लिखे गये साहनी जी के 19 आलेख शामिल हैं। लघुकथा पर चर्चा की दृष्टि से ये आलेख अत्यंत महत्त्वपूर्ण हैं।

पुस्तक में शामिल पहला आलेख 1998 एवं 2012 में प्रकाशित साहनी जी के सुप्रसिद्ध लघुकथा संग्रह- 'ठंडी रजाई' की भूमिका के तौर पर लिखा गया है। दूसरा आलेख कोटकपूरा, पंजाब में आयोजित लघुकथा सम्मेलन में पढ़ा गया आलेख है। इसके बाद पाँच आलेख साहनी जी द्वारा संपादित महत्वपूर्ण लघुकथा संकलनों क्रमश: स्त्री-पुरुष संबन्धों की लघुकथाएँ (1992/2018), महानगर की लघुकथाएँ (1993/2019), खलील जिब्रान की लघुकथाएँ (1995/2017), देह-व्यापार पर केन्द्रित लघुकथाएँ (1997) एवं बाल मनोवैज्ञानिक लघुकथाएँ (2009 में रामेश्वर काम्बोज हिमांशु जी के साथ संपादित) के संपादकीय हैं। पुस्तक में शामिल नौ आलेख क्रमश: वर्ष 2007, 2009, 2010, 2011, 2012, 2014, 2016, 2017 एवं 2019 में आयोजित कथादेश अखिल भारतीय लघुकथा प्रतियोगिताओं में बतौर निर्णायक

टिप्पणियों के रूप में लिखे गये आलेख हैं। शेष तीन आलेख क्रमश: राजेन्द्र यादव, रामेश्वर काम्बोज हिमांशु एवं डॉ. श्याम सुन्दर 'दीप्ति' की लघुकथाओं पर समीक्षात्मक आलेख हैं। इस प्रकार विभिन्न अवसरों पर साहनी जी ने पाठकों, श्रोताओं और साथी लघुकथाकारों से अपनी बात कहने के लिए जो महत्त्वपूर्ण संवाद किया है, वह इस पुस्तक में एक साथ संकलित होकर सामने आया है।

माना जाता है कि श्री सुकेश साहनी जी लघुकथा पर अपनी बात कहने के लिए मुख्यत: अपनी रचनाओं को ही माध्यम बनाते हैं, अलग से शास्त्रीय, समालोचनात्मक या समीक्षात्मक आलेख अथवा पुस्तकें लिखने का कार्य वह प्राय: नहीं करते। ऐसे में इन संवादपरक आलेखों के माध्यम से लघुकथा जगत को उनके विचारों के साथ उनकी लघुकथा विषयक मान्यताओं को बहुत स्पष्ट रूप से जानने एवं समझने का अवसर मिलता है।

'लघुकथा: रचना प्रक्रिया' शीर्षक आलेख में, जो कि उनके लघुकथा संग्रह 'ठंडी रजाई' की भूमिका में लेखक ने अपनी लघुकथा सृजन की रचना प्रक्रिया पर बात की है। जीवनानुभव किस प्रकार एक रचना का आधार बनते हैं, इसे उदाहरण देकर समझाया गया है। साहनी जी का मानना है, ''लेखक के भीतर किसी रचना के लिए आवश्यक कच्चे माल के पकने की प्रक्रिया ही लेखक की रचना-प्रक्रिया है। लघुकथा की रचना-प्रक्रिया में उपन्यास एवं कहानी की भाँति बरसों भी लग सकते हैं।''

'कोटकपूरा लघुकथा लेखक सम्मेलन' में पढ़े गये आलेख 'कहानी का बीज रूप नहीं है लघुकथा' में साहनी जी ने लघुकथा को कहानी का बीजरूप मानने की धारणा से असहमति तो प्रकट की ही है, उन्होंने लघुकथा में विषय को लेकर बनी भ्रम की स्थिति को भी साफ करने का प्रयास किया है। उनके अनुसार जिन विषयों पर कहानी लिखी जा सकती है, उन पर लघुकथा भी लिखी जा सकती है। लघुकथा में लेखक विषय के मूल स्वर को पकड़ता है, जिसका तात्पर्य रचना में सम्बन्धित विषय और कथ्य के मूल (सूक्ष्म) स्वर से है। साहनी जी ने इसी बिन्दु को लघुकथा को कहानी से अलग करने वाला बताया है।

साहनी जी ने विभिन्न एकल विषयों पर रचित लघुकथाओं के कई संकलन संपादित किए हैं। उन्होंने इन संकलनों में एक-एक विषय के विभिन्न पक्षों पर सशक्त लघुकथाओं को संकलित करते हुए विभिन्न स्थितियों के विश्लेषण का नोट लिया है। अपने नोट को संकलनों के संपादकीय आलेखों में सहेजते हुए इसी विश्लेषण को रेखांकित किया है। इस दृष्टि से स्त्री-पुरुष संबन्धों की लघुकथाएँ, महानगर की लघुकथाएँ, खलील जिब्रान की लघुकथाएँ, देह-व्यापार पर केन्द्रित लघुकथाएँ एवं बाल मनोवैज्ञानिक लघुकथाएँ संकलनों के संपादकीय आलेख अत्यंत महत्त्वपूर्ण हैं। इन आलेखों में चयनित लघुकथाओं के कथ्यों और विषयों के मूल स्वर को रेखांकित करते हुए लघुकथा की ताकत को समझने-समझाने का प्रयास शामिल है।

देश की सुप्रसिद्ध कथा पत्रिका 'कथादेश' कई वर्षों से अखिल भारतीय स्तर की महत्त्वपूर्ण लघुकथा प्रतियोगिता आयोजित कर रही है। श्री सुकेश साहनी जी इस प्रतियोगिता से बतौर प्रेरक एवं निर्णायक काफी निकट से जुड़े रहे हैं। हर वर्ष निर्णायक के रूप में प्रतियोगिता की पुरस्कृत लघुकथाओं पर उनकी विश्लेषणपरक आलेखबद्ध टिप्पणी आती रही हैं। क्रमश: वर्ष 2007, 2009, 2010, 2011, 2012, 2014, 2016, 2017 एवं 2019 की प्रतियोगिता में पुरस्कृत लघुकथाओं से जुड़े आलेखों में पुरस्कृत लघुकथाओं पर साहनी जी ने अपनी बात बहुत स्पष्ट रूप में सामने रखी है। एक ओर इन लघुकथाओं के रचनात्मक पक्ष को स्पष्ट किया गया है तो उनके आलोचनात्मक बिन्दुओं पर भी बात हुई है। इन आलेखों में प्रतियोगी लघुकथाकारों के लेखन में निहित संभावनाओं को उजागर किया गया है तो उन बिन्दुओं पर भी चर्चा की गई है, जहाँ लेखकों को सतर्क रहने की आवश्यकता है। ऐसी टिप्पणियों से निश्चित रूप से प्रतियोगिता में शामिल लघुकथाकारों के साथ अन्यों को भी काफी कुछ सीखने को मिलता है।

कथाकार राजेन्द्र यादव जी ने भी कुछ ऐसी कथा रचनाएँ लिखी हैं, जिन्हें लघुकथा के दायरे में रखा जाता है। सुकेश जी ने अपने आलेख 'राजेन्द्र यादव की लघुकथाएँ' में यादव जी की नौ लघुकथाओं की बेबाक पड़ताल की है। निष्कर्षत: उन्होंने पाया है कि 'अपने पार' राजेन्द्र यादव की श्रेष्ठ लघुकथा है किन्तु इस लघुकथा जैसा प्रभाव वह अपनी अन्य लघुकथाओं में नहीं छोड़ पाए हैं। संभवत: यादव जी ने लघुकथा को उतनी गम्भीरता से नहीं लिया, जितना उन जैसे स्थापित साहित्यकार को लेना चाहिए था।

'रामेश्वर काम्बोज की अर्थगर्भी लघुकथाएँ' शीर्षक आलेख में सुकेश जी ने 'पड़ाव और पड़ताल' लघुकथा संकलन शृंखला के खण्ड सात में शामिल रामेश्वर काम्बोज हिमांशु जी की 11 प्रतिनिधि लघुकथाओं की पड़ताल बतौर लिखा गया आलेख है। हिमांशु जी की ये लघुकथाएँ हैं- धर्मनिरपेक्ष, ऊँचाई, गंगा स्नान, खुशबू, पिघलती हुई बर्फ, छोटे-बड़े सपने, कालचिड़ी, ऐजेण्डा, नवजन्मा, कटे हुए पंख एवं कमीज। हिमांशु जी रचनात्मकता के स्तर पर बेहद सजग लघुकथाकार हैं। इस आलेख में सुकेश जी ने लघुकथा के लिए आवश्यक अनुशासन और कथ्य की रचनात्मकता के सन्दर्भ में हिमांशु जी की लघुकथाओं का बहुत ही सहज विश्लेषण प्रस्तुत किया है। लघुकथाओं के कथ्यों और विषयों के विश्लेषण के साथ भाषा के प्रयोग एवं शीर्षक चयन में सजगता को रेखांकित किया गया है।

पंजाबी के साथ हिन्दी में भी लघुकथा के लिए समर्पित लघुकथाकारों में डॉ. श्याम सुन्दर दीप्ति जी का नाम बहुत सम्मान के साथ लिया जाता है। लघुकथा सृजन के साथ अनुवाद, लघुकथा सम्मेलनों एवं पंजाबी लघुकथा की पत्रिका मिन्नी के संपादन-प्रकाशन में भी उनका अभूतपूर्व योगदान है। दीप्ति जी के सुप्रसिद्ध लघुकथा संग्रह 'गैर हाजिर रिश्ता' की भूमिका के तौर पर 'डॉ. श्याम सुन्दर दीप्ति की लघुकथाएँ' शीर्षक आलेख में साहनी जी ने उनकी लघुकथाओं में निहित रचनात्मकता पर प्रकाश डाला है। कानून पसंद, सोग की ट्यून, संवाद, उदास दिल, दादी, असली बात, रीसेल वैल्यू, खो रहे पल आदि अनेक लघुकथाओं को उनकी विशिष्टताओं के लिए उद्धृत करते हुए साहनी जी ने दीप्ति जी की लघुकथाओं में कथ्य की अनुगूँज का पाठकों के सन्दर्भ में बहुत स्पष्ट विश्लेषण किया है।

सुकेश साहनी जी के ये आलेख निश्चित रूप से लघुकथा के बंधनमुक्त रूप-स्वरूप, स्वाभाविकता और निश्चिंतता के साथ आगे बढ़ाने की बात करते दिखाई देते हैं। उन्होंने लघुकथा सर्जन को नियमों से बाँधने की बजाय उसके अनुशासन को समझने पर जोर दिया है। विषय और कथ्य के मूल स्वर और लघुकथा के समापन बिन्दु पर विशेष ध्यान देने पर बल दिया है। विश्वासपूर्वक कहा जा सकता है कि यह पुस्तक नये लघुकथाकारों का मार्गदशन करने में सफल होगी।●

-लघुकथा- सृजन और रचना कौशल : सुकेश साहनी, प्रकाशन : अयन प्रकाशन, नई दिल्ली-110030, मूल्य : रु. 300/- पृष्ठ : 150, संस्करण : 2019

अनुवाद मूल रचनात्मकता से बड़ा काम होता है

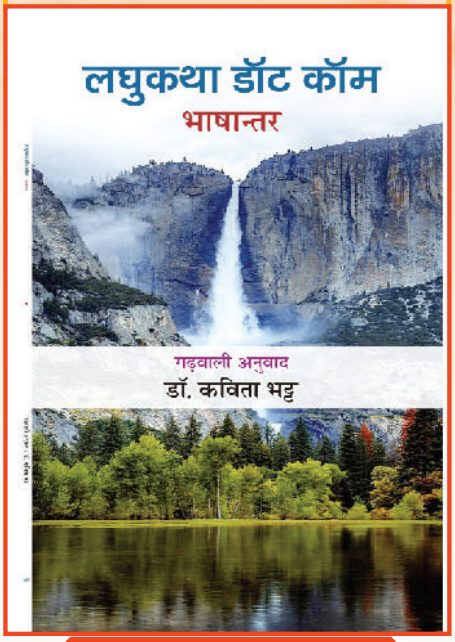

सुभाष नीरव

'लघुकथा डॉट कॉम' वेबसाइट आज जिस गरिमामय मुकाम पर आ पहुँची है, उसके पीछे जाने-माने कथाकार सुकेश साहनी और बहुआयामी वरिष्ठ साहित्यकार रामेश्वर काम्बोज 'हिमांशु' जी की अटूट लगन के साथ-साथ इनकी ईमानदारी, निष्ठा, कर्मठता और इनके श्रम का बहुत बड़ा योगदान है। लघुकथा की एकमात्र श्रेष्ठ वेबसाइट स्थापित करने और उसे लोकप्रिय बनाने में इनका योगदान कभी भुलाया नहीं जा सकता। आज यह वेबसाइट श्रेष्ठ और मानक लघुकथाओं की डिजिटल पत्रिका बन गई है। लघुकथा के उत्तरोत्तर विकास और उसके संवर्धन के लिए इस वेबसाइट को केवल हिन्दी लघुकथाओं तक ही सीमित नहीं किया गया, बल्कि इसे भारतीय भाषाओं, लोक भाषाओं और विश्व की अन्य भाषाओं से भी जोड़ा गया। यूँ तो इस वेब पत्रिका के सभी स्तम्भ बेजोड़ हैं, पर 'मेरी पसंद' और 'भाषांतर' स्तम्भों ने पाठकों में अपनी अलग पहचान बनाई है।

लोक भाषाओं के संरक्षण में अनुवाद की महत्त्वपूर्ण भूमिका होती है। भारत विविधताओं से भरा एक बहुभाषी देश है। भाषाओं को संरक्षित करने और उन्हें विलुप्त होने से बचाने में अनुवाद विधा की भी बहुत बड़ी भूमिका होती है, जिसे दुर्भाग्य से उस रूप में समझने का प्रयास नहीं किया गया है, जिस रूप में समझा जाना चाहिए। जो लोग आज भी अनुवाद को दोयम दर्जे का काम समझते हैं, वह भूल जाते हैं कि अनुवाद मूल रचनात्मकता से भी बड़ा काम होता है। दो भाषाओं के ज्ञान के साथ साथ उसकी संस्कृति, प्रकृति और परंपरा का ज्ञान होना भी आवश्यक होता है। अनुवाद केवल शब्दों को दूसरी भाषा में रूपांतरित कर देना भर नहीं है, यह एक विशद ज्ञान और संवेदनशीलता इसकी कुंजी है।

ज्ञान के प्रसार में भाषा के अवरोध को दूर करने में अनुवाद की बहुत बड़ी भूमिका होती है। विद्वानों का मत है कि भाषा जल के समान है, जल को सदैव प्रवहमान रहना चाहिए। प्रवाह का रुकना उसे विलुप्ति के कगार पर ले जाता है। इसे विलुप्त होने से बचाने में अनुवाद की महती भूमिका को नकारा नहीं जा सकता।

कई लोक भाषाएँ अपनी स्वतंत्र लिपि न होने के बावजूद हिन्दी (देवनागरी) में अपने अस्तित्व को कायम रखे हैं। अवधी, ब्रज, मैथिली, गढ़वाली, हरियाणवी आदि अनेक लोक भाषाएँ दरअसल हिन्दी जैसी महानदी की सहायक नदियाँ ही हैं, जो अपने थोड़े-थोड़े योगदान से महानदी को निरंतर समृद्ध करती रहती हैं, और अपने अस्तित्व का अहसास कराती रहती हैं।

'लघुकथा डॉट कॉम' ने अनुवाद की अनिवार्यता और उसके महत्त्व को समझते हुए ही 'भाषांतर' स्तम्भ शुरू किया होगा जो जुलाई 2007 से निरंतर जारी है और इस स्तम्भ के अंतर्गत उर्दू, संस्कृत, गुजराती, मराठी, सिन्धी, जर्मन, अंग्रेजी, तेलुगु, मलयालम, उड़िया, बांग्ला, नेपाली भाषाओं के साथ-साथ लोकभाषाओं को भी तरजीह दी है- जैसे गढ़वाली और अवधी। हिन्दी-गढ़वाली की विदुषी डॉ. कविता भट्ट ने 'भाषांतर' के माध्यम से हिन्दी की अनेक श्रेष्ठ लघुकथाओं को अपनी लोकभाषा में ले जाने का बीड़ा उठाया और उसमें वह सफल भी हुईं। अब इनके इस श्रम को पुस्तक का रूप दिया गया है - 'लघुकथा डॉट कॉम : भाषांतर' (अनुवाद : डॉ. कविता भट्ट)। में गढ़वाली अनुवाद के लिए हिन्दी के नए-पुराने कुल 45 लेखकों की लघुकथाओं का चयन किया गया। इसमें जहाँ हिन्दी के अग्रज एवं वरिष्ठ लेखक भी शामिल हुए, वहीं बिलकुल नए लेखकों को भी इसका हिस्सा बनाया गया है। पुस्तक में अच्छी बात यह की गई है कि लघुकथाओं के गढ़वाली अनुवाद से पहले उनके मूल पाठ को भी रखा गया है। मूल और अनुवाद को एक साथ पढ़ते हुए मूल भाषा की खुशबू, अनुवाद की मौलिकता और प्रामाणिकता के दर्शन सहज ही हो जाते हैं।

'लघुकथा डॉट कॉम' के विद्वान् संपादक-द्वय अनुवाद की शक्ति और उसकी महत्ता को बखूबी समझते हैं, यही वजह है कि उनका उद्देश्य स्पष्ट और साफ़ रहा है कि अच्छी लघुकथाएँ भाषाओं की सीमाओं को तोड़ते हुए अन्य भाषाओं, लोकभाषाओं में भी विचरण करें; पर यह उद्देश्य बिना अच्छे अनुवादकों की मदद के फलीभूत नहीं हो सकता। इस काम के लिए हमें अच्छे अनुवादक भी तैयार करने होंगे और उन्हें प्रोत्साहित भी करना होगा।

'लघुकथा डॉट कॉम' के 'भाषांतर' स्तम्भ से भविष्य में हमें और अच्छे कार्य अनुवाद के क्षेत्र में देखने-पढ़ने को मिलेंगे, ऐसा मेरा विश्वास है। ●

-0-लघुकथा डॉट कॉम : भाषान्तर : गढ़वाली अनुवाद- डॉ. कविता भट्ट, ISBN - 978-81-964701-7-3, प्रथम संस्करण - 2024, मूल्य:220 रुपये (पेपर बैक), पृष्ठ:88, प्रकाशक; शैलपुत्री फ़ाउण्डेशन, ग्लोबल सिन्जेंटिक फ़ाउण्डेशन, नई दिल्ली

लघुकथा के विविध आयाम कथ्य और शिल्प एक सार्थक विमर्श

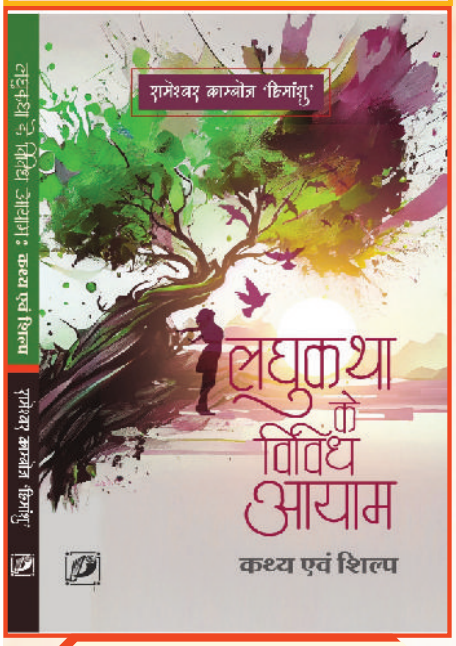

समीक्षक: डॉ. उपमा शर्मा

मानव जीवन और साहित्य का गहरा संबंध है। साहित्य में वह शक्ति समाहित है जिससे समाज के मूल्यों का निर्माण होता है। कथा कल्प की सबसे छोटी विधा लघुकथा पर अनवरत काम हो रहे हैं। 'लघुकथा के विविध आयाम (कथ्य और शिल्प)' पुस्तक में रामेश्वर काम्बोज 'हिमांशु' ने लघुकथा के इन्हीं कार्यों से पाठकों को जोड़ने का प्रयास किया है। इस पुस्तक में कथ्य और शिल्प के लिए 53 लघुकथाकारों की 100 लघुकथाओं के 'विभिन्न कथ्य और शिल्प' से संदर्भित किया गया है।

वैसे तो लघुकथा हमारे लिए कोई अपरिचित शब्द नहीं है। बचपन से ही पंचतंत्र, विक्रम बैताल, हितोपदेश की कहानियों में हम किस्सागोई के तंतु देखते आ रहे हैं। लघुकथा का लक्ष्य कुछ भी हो, उसमें भाव विचार के प्रभाव की अभिव्यक्ति के लिए उसमें कथा का होना अति आवश्यक है। लघुकथा में वर्णित घटना को कथानक, कथावस्तु, विषयवस्तु आदि भी कहते हैं। लघुकथा की विशेषता, इसकी लघुता में प्रभुता है। यह एक ऐसी रचना है जिसमें एक क्षण विशेष में घटी घटना को प्रदर्शित करना ही लेखक का उद्देश्य रहता है। और उसकी शैली, भाषा तथा कथा विन्यास उसी एक भाव की पुष्टि करते हैं। यह ऐसा ही है जैसे किसी पौधे का माधुर्य अपने समुन्नत रूप में ही दृष्टिगोचर होता है।

आज विकास के नाम पर प्रकृति के अंधाधुंध दोहन ने ग्लोबल वार्मिंग, पानी की कमी, जलवायु की असामानता जैसे संकट ला खड़े किए हैं। कहीं लगातार असमय बारिश हो रही है तो कहीं कड़ी हीट वेव्स। पहाड़ों और मैदान दोनों पर ही इसका असर साफ़ दिख रहा है। अगर मानव समय रहते नहीं चेता, तो उसे अपने विकास और पर्यावरण के असंतुलन की बहुत बुरी कीमत चुकानी होगी। रामेश्वर काम्बोज इस पर सटीक कथन कहते हैं-

'हम कल्याण को प्रमुख मानने वाले अपनी परम्परा को भूलकर केवल उपभोक्ता बनते जा रहे हैं।''

इस विषय पर सुकेश साहनी ने 'उतार', 'विरासत', 'खारा पानी', 'कुँआ खोदने वाला', 'मछली-मछली कितना पानी' जैसी लाजवाब लघुकथाएँ दी हैं। डायरी शैली में लिखी इस लघुकथा में घटते भूमिगत जल स्तर पर चिंता स्पष्ट दृष्टि गोचर हुई है। आज भारत के कई शहर भी पानी की कमी की समस्या से जूझ रहे हैं। नहर, बावड़ियाँ सूख रही हैं। कुँए सैप्टिक टैंक बना दिए गए हैं।

अरुण अभिषेक की 'आत्मघात' ,आनन्द हर्षुल की 'ईश्वर की खाँसी' और 'बच्चों की आँखें', मीनू खरे की 'गौरैया का घर' , बलराम अग्रवाल की 'अकेला कब गिरता है पेड़' , हरभगवान चावला की 'मरुभूमि का पेड़', कमल कपूर की 'सपनों के गुलमोहर', उमेश महादोषी की 'एक रिश्ता ऐसा भी' वनस्पति के महत्त्व पर लिखीं शानदार लघुकथाएँ हैं।

कहा गया है- साहित्य में जो कल्याण की भावना है, यदि वह नहीं है, तो एक दिन वो साहित्य नहीं रहेगा। साहित्य में यह कल्याण की भावना समाज से ही प्रतिबिंबित होती है। लेकिन आज यह भावना कम बहुत कम होती जा रही है। किसान, मजदूर, गरीब, यह श्रमजीवी वर्ग उत्पादन करते हैं, निर्माण करते हैं, किले से लेकर स्कूल तक बनाते हैं; लेकिन इसके बदले क्या पाते हैं? छल, धोखा और श्रम के बाजिब मूल्य से वंचित होने की मजबूरी। कितनी हैरत की बात है इस 95 प्रतिशत आबादी पर कुल पाँच प्रतिशत लोग हुकुम चलाते हैं।

अशोक भाटिया की 'पीढ़ी दर पीढ़ी', आनन्द हर्षुल की 'कोयले की इच्छा' डॉ. उपेन्द्र प्रसाद राय की 'किसान की रोटी', पवन जैन की 'एक टोकरी सब्जी' रामकरन सोनी की हार,और 'काँटा, सुदर्शन रत्नाकर की 'फाँस', 'साँझा दर्द' इस सर्वहारा जगत् की मजबूरियों को उकेरती हैं।

भारतीय कला में सौन्दर्य को कला का प्राण माना जाता है। अमूर्त अनुभूति को मूर्त रूप प्रदान करना ही कला की अभिव्यक्ति है; लेकिन सबको कला की कद्र करने की कला नहीं आती। आज समाज यथार्थ को त्याग दिखावे की ओर बढ़ रहा है। ऐसे में कला का सच्चा सम्मान कोई एक व्यक्ति भी करे तो कला को सार्थक मान लेना चाहिए। सौंदर्य का संबंध सुंदरता की उस गुणवत्ता या मानव निर्मित प्राकृतिक स्वरूपों से है जो देखने वाले में एक अनुभूति को उत्पन्न करते हैं। रामेश्वर काम्बोज की 'खूबसूरत' में थुलथुल सविता अपने बाह्य सौन्दर्य से निराश करती है; लेकिन जब कार्यकुशलता और मधुर व्यवहार में उसके आंतरिक सौन्दर्य के दर्शन हुए, तब वह बहुत खूबसूरत लगती है।

आधुनिकीकरण के इस दौर में अपनी आत्मकेंद्रित प्रवृत्ति के कारण इंसान का अपनों से ही निर्वाह कठिन हो गया है। स्वार्थपरता ने रिश्तों की कलई खोल दी है। दुनियादारी से अनजान बचपन एक आँगन में हँसते-खेलते,लड़ते-झगड़ते बीत जाता है; परंतु जैसे ही स्वार्थ की परतें मन पर अपना कब्जा जमाने लगती हैं, रिश्तों की उष्णता

उदासीनता में बदलने लगती है। और यह उदासीनता इस हद तक आ जाती है कि घर के बुजुर्ग ही बोझ लगने लगते हैं।

इस संदर्भ में रामेश्वर काम्बोज की लघुकथा 'स्पेस' में घर के बुजुर्ग के इकलौते शौक को धीरे-धीरे समेटकर कोने तक सीमित कर दिया गया। प्रिय चीज़ कबाड़ी को देने का गम और अकेलेपन की त्रासदी का असर देर तक पाठकों के मन पर रहता है।

प्रियंका गुप्ता की 'भूकंप' लघुकथा में पिता की मृत्यु की सोच पुत्र की निकृष्ट सोच है; लेकिन वही पिता दुधमुँहे को गोद में व्हील चेयर चलाते बाहर निकलते हैं।

डॉ. मधु सन्धु की लघुकथा 'अभिसारिका' में बुजुर्ग दंपती के दोनों बेटों के पास अलग-अलग रहने से पाठक के मन में सहज ही पीड़ा उभरती है। जहाँ रिश्तों में स्वार्थ इतना घुल चुका है कि परिवार के सदस्य ही एक दूसरे के प्रति उदासीन हो गए हैं, ऐसे में सविता मिश्रा की लघुकथा 'तोहफा', सीमा वर्मा की लघुकथा 'शहर अच्छे हैं', शशि पाधा की 'मंजिलें लाँघता दर्द' कृष्णा वर्मा की 'हैप्पी मदर्स डे' , सुभाष नीरव की 'शहर से दोस्ती' सुषमा वर्मा की 'कैमिस्ट्री', कमलेश भारतीय की 'मेरे अपने' रामेश्वर काम्बोज की 'क्रौंच -वध' ये आश्वस्त करती हैं कि संवेदनाएँ अभी बची हैं।

अफसरशाही पर व्यंग्य कसती रामेश्वर काम्बोज की लघुकथा 'एजेंडा' आज के परिवेश की कलई खोलती है।

रामेश्वर काम्बोज की ही लघुकथा 'कटे हुए पंख' में तोते के रूपक से लेखक ने बताया है कि कैसे सदियों से आज तक सुकरात को जहर का प्याला पिला दिया जाता है। और जनता के पंख काटकर उसे वायदों के झुनझुने पकड़ा दिए जाते हैं।

लिंगभेद के दंश को झेलते पाठक जब रामेश्वर काम्बोज की लघुकथा 'नवजन्मा' पढ़ते हैं, तो बेटी के जन्म पर बजने वाली तिड़क-तिड़ -तिड़ धुम्म की आवाज महसूस कर खुद भी नाच उठते हैं। लघुकथा में बजने वाले ढोल की मिठास देर तक मन मस्तिष्क पर असर छोड़ती है ।

किसी भी विधा में प्रयोग नई रचनात्मकता के दरवाजे खोलते हैं। नए- नए प्रयोग किसी भी विधा की सजीवता के द्योतक होते हैं, उसमें ताजगी लाते हैं, उसमें प्राण फूँकते हैं। नवीनता सदैव आकर्षित करती है। अतः शिल्प की दृष्टि से नए प्रयोगों पर भी ध्यान देने की आवश्यकता है। सुकेश साहनी ने अपनी लघुकथाओं में लगातार सफल प्रयोग किए हैं। उन्होंने लघुकथा की पारम्परिक परिपाटियों को विखंडित करके उसे एक नई बुनावट और शिल्प में ढाला है। इसके पीछे प्रयोग और नूतनता के आग्रह हैं। ये लघुकथाएँ नूतन शिल्प , कल्पनाशील व्यंग्य और भाषा के साथ मास्टर स्ट्रोक हैं। इसमें समाज के लिए आवाजें हैं। पर्यावरण को बचाने की चिंता निहित है। हुनरमंद कारीगर, छोटे रोजगार, मानवीय संवेदना और कार्पोरेट सभी का इन लघुकथाओं में दायरा है। ये छोटे कैनवास की बड़ी लघुकथाएँ हैं, जो मनुष्यता को बचाने का प्रयास कर रही हैं। इनमें विकास की मौजूदा स्थिति का क्रिटिसिज्म है, तो जीवन रूपी स्कूल से सहज सीखने की अवधारणा। भविष्य में पानी की कमी पर लिखी लघुकथा 'विरासत', डायरी शैली की लघुकथा 'उतार', 'कुँआ खोदने वाला', 'कोलाज' , 'मेंढकों के बीच' शिल्प और लघुकथा में प्रयोग के शानदार उदाहरण हैं।

विभिन्न शैलियों में धैर्य के साथ कथ्य का निर्वहन करता और भाषा की सजगता पर प्रकाश डालता यह संग्रह लघुकथाकारों के लिए एक बेजोड़ उपहार है। ●

लघुकथा के विविध आयाम (कथ्य एवं शिल्प), लेखक : रामेश्वर काम्बोज 'हिमांशु', प्रथम संस्करण : 2024, मूल्य : 310, प्रकाशक:पी.पी, पब्लिशिंग प्रा.लि. भारत, 3,/186 राजेन्द्र नगर, सेक्टर-2, साहिबाबाद, गाजियाबाद 201005

साहित्य की गहनतम अनुभूतियों का रसपान कराती- संवेदना एवं अभिव्यक्ति

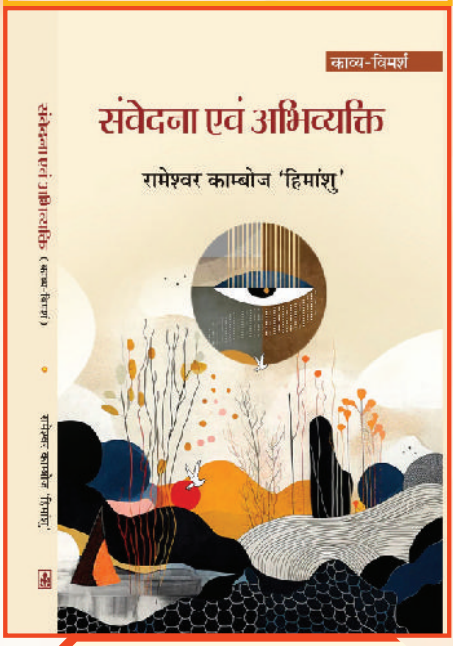

- डॉ. सुरंगमा यादव

भूमिका पुस्तक का दर्पण होती है,जिसमें पुस्तक का मुखड़ा प्रतिबिंबित होता है। किसी पुस्तक में भूमिका के दो रूप देखे जा सकते हैं: पहला, रचनाकार द्वारा व्यक्त किए गए स्वयं के उद्गार; दूसराः किसी अन्य साहित्यकार, स्नेही या आत्मीय जन द्वारा लिखी गई भूमिका। इसमें शुभेच्छा का भाव प्रमुख होता है। भूमिका पुस्तक प्रकाशन से पूर्व अस्तित्त्व में आती है जिसमें पुस्तक की उन विशेषताओं तथा अंशों को उजागर किया जाता है, जिसे पढ़कर पाठक में पुस्तक पढ़ने की जिज्ञासा उत्पन्न हो सके।

समीक्षा पुस्तक प्रकाशन के पश्चात् लिखी जाती है। समीक्षक तटस्थ भाव से पुस्तक की विशेषताओं तथा कमजोर पक्षों को रेखांकित करता है। विषय-विस्तार, भाषा -शैली, संप्रेषण, सामाजिक सरोकार आदि को दृष्टिगत रखकर समीक्षक कृति की परख करता है। समीक्षा पाठक के मस्तिष्क पर रचना की रेटिंग-सी कर देती है।

रामेश्वर काम्बोज 'हिमांशु' जी का लेखन-फलक बहुत विस्तृत है। गद्य और पद्य साहित्य

की विविध विधाओं के साथ- साथ बालकविताओं तथा पाठ्य पुस्तकों की रचना भी आपने की है। आप न केवल एक सहृदय साहित्यकार हैं: बल्कि एक जागरूक पाठक भी हैं। भूमिका तथा समीक्षा लेखन आपकी सर्जनशीलता का एक प्रमुख आयाम है। भूमिका लिखना हो या समीक्षा आप कृति का सर्वांगपूर्ण अवलोकन और अध्ययन करने के उपरान्त ही अपनी लेखनी चलाते हैं। आपकी पारखी दृष्टि आलोच्य कृति का तटस्थ मूल्यांकन करके ऐसा निचोड़ प्रस्तुत करती है कि पाठक पुस्तक के हर पक्ष से परिचित हो जाता है। सद्यः प्रकाशित 'संवेदना एवं अभिव्यक्ति' हाथ में आने पर यह ये विचार और भी प्रबल हो गया। 'संवेदना एवं अभिव्यक्ति' में आपने स्वयं की कृति सहित कुल 14 रचनाकारों की रचनाओं पर सारगर्भित समीक्षात्मक लेख लिखे हैं।

डॉ. जेन्नी शबनम की चार कृतियों- लम्हों का सफ़र- काव्य संग्रह, प्रवासी मन- हाइकु संग्रह, नवधा- विविध काव्य विधा संग्रह तथा मरजीना- क्षणिका संग्रह, डॉ. कविता भट्ट -मीलों चलना है- काव्य- संग्रह तथा काँठा माँ जून- हिन्दी हाइकु का गढ़वाली में अनुवाद, कृष्णा वर्मा -सिंदूरी भोर- हाइकु संग्रह, डॉ. भीकम सिंह-सिवानों पे गाँव- हाइकु-संग्रह तथा थके से सहयात्री-चोका- संग्रह, रचना श्रीवास्तव-सपनों की धूप-हाइकु- संग्रह, सुदर्शन रत्नाकर-मन मल्हार गाए, बोलो न निर्झर, युग बदल रहा है; क्रमशः सेदोका, छोटी कविताएँ तथा काव्य- संग्रह, डॉ. हरदीप कौर सन्धु-रंग शहूदी-द्विपदी कविताएँ, रश्मि विभा त्रिपाठी-मन की परिधि-काव्य संग्रह, डॉ. मीना अग्रवाल-बातें करती हवा-हाइकु -संग्रह, रामेश्वर काम्बोज-नवगीत की भूमिका, डॉ. पद्मजा शर्मा- आसमान को छूना है, शिव डोयले-शब्दों के मोती, पुरुषोत्तम श्रीवास्तव 'पुरु'-अनुभूति के पल तथा रेखा रोहतगी-मन मुखिया,हाइकु- संग्रहों पर अपनी लेखनी चलाकर सुधी पाठकों का मार्ग प्रशस्त किया है।

पुस्तक की भूमिका में आप लिखते हैं- 'हमारे भावप्रवण साथियों ने चाहे छोटी-बड़ी कविताएँ लिखी हों, चाहे जापानी शैली के हाइकु, ताँका, चोका, सेदोका आदि रचे हों, उनमें हमारी समूची भारतीयता दूध-मिसरी की तरह घुल गई है, उनमें संस्कृति की सुगंध रच-बस गई है। यह मेरा सौभाग्य है कि मुझे अपने अग्रजों की रचनाओं के साथ-साथ युवा साथियों के साहित्य की गहनतम अनुभूतियों का आनंद प्राप्त करने का भी अवसर मिला है।'

पुस्तक के कुछ प्रमुख उद्धरण हैं- डॉ. जेन्नी शबनम की कविताओं में जीवन की जद्दोजेहद के साथ संतप्त मन लिये आगे बढ़ने का संघर्ष है-लम्हों का सफ़र।

कोहरा ढक ले/अठखेलियाँ सारी/प्रिय-संग की।
डाकिया आँखें/मन के ख़त भेजे/ प्रिय न पढ़े।
सर्द न होना/चाय की प्याली जैसे/अधर धरो।-
(मीलों चलना है/ डॉ. कविता भट्ट)

उपर्युक्त ये तीन हाइकु केवल हाइकु नहीं, वरन् किसी कुशल कैमरामैन द्वारा लिए गए स्नैपशॉट प्रतीत होते हैं।

डॉ. भीकम सिंह वही हाइकुकार हैं, जिनके पास चित्रकार की कल्पना, कैमरामैन की सटीक दृश्य को क्लिक करने की सूझ-बूझ और कवि के शब्द-चित्रांकन की क्षमता मौजूद है-सिवानों पे गाँव।

कवयित्री डॉ. हरदीप कौर सन्धु को शब्द-सिद्धि प्राप्त है। वह आसपास के शब्दों में प्राण फूँककर उनको जीवंत कर देती हैं ।प्राण प्रतिष्ठा होने पर उनके शब्द श्लोक का रूप धारण कर लेते हैं-रंग शहूदी।

21 कृतियों का समग्रता में परिचय कराने वाली 'संवेदना एवं अभिव्यक्ति' पुस्तक में दो लेख- भाव जगत के मोती तथा बहुवर्णी भावों का गुलदस्ता क्रमशः मरजीना तथा बातें करती हवा, कृति के नाम निर्धारण से पूर्व लिखी गई भूमिकाएँ है, इसी कारण इनमें कृति के नामों का उल्लेख नहीं आ सका है। ●

संवेदना एवं अभिव्यक्ति(विमर्श) : प्रथम संस्करण : 2024, मूल्य : 280 रुपये (सजिल्द), पृष्ठ : 104, प्रकाशक : अयन प्रकाशन, जे- 19/ 139, राजापुरी, उत्तम नगर, नई दिल्ली- 110059

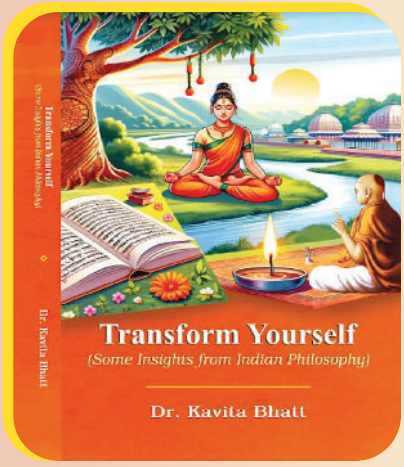

Pages:168; Price : 460; First Edition : 2024; Publisher:Global Synergetic Foundation, Lajpat Nagar, New Delhi-11002

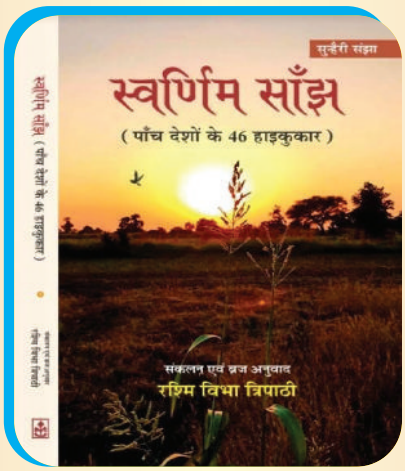

प्रथम संस्करण: 2024, मूल्य: 450 रुपये (सजिल्द), पृष्ठ: 160,

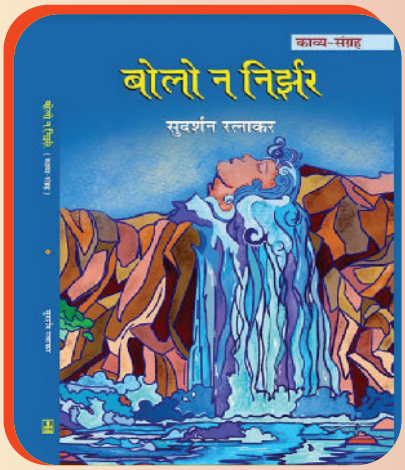

प्रथम संस्करण: 2024, मूल्य: 320 रुपये (सजिल्द), पृष्ठ: 116, दोनों के प्रकाशक: अयन प्रकाशन, जे- 19/ 139, राजापुरी, उत्तम नगर, नई दिल्ली- 110059

लघुकथा और भाषिक प्रयोग

रामेश्वर काम्बोज 'हिमांशु'

भाषा मनुष्य का आत्मिक स्वरूप है, जिसके बिना उसके अस्तित्व की कल्पना भी नहीं की जा सकती। अनुभूति, विचार, चिन्तन, कल्पना सबकी उड़ान भाषा से ही सम्भव है। इन सबकी अभिव्यक्ति ही उसे सामाजिक प्राणी बनाती है। यदि मानव के पास सम्प्रेषण का यह गुण न हुआ होता, तो पूरी सृष्टि बेतरतीब होने के साथ-साथ अभिशप्त ही प्रतीत होती। भाषा- शब्द सामने आते ही इसके विकास की कथा का सामाजिक स्वरूप सामने आ जाता है। समाज या समुदाय ही किसी भाषा के विकास का प्रमुख कारण है। जो समाज, जिस भाषा का प्रयोग करता है, वह भाषा उसके सम्पूर्ण चिन्तन और सामाजिक व्यवहार की संवाहक होती है। नदी जिस प्रकार निरन्तर प्रवाहित होने के कारण ही नदी है; ठीक उसी प्रकार समाज और भाषा भी अपने प्रवाह से ही जीवित रहते हैं। भाषा में उसके सुख- दु:ख, हर्ष-विषाद, उत्थान -पतन के सारे दौर देखे जा सकते हैं। जिस समाज को, समाज की भाषा को या चिन्तन को संकुचित करने की चेष्टा की जाती है, वह धीरे-धीरे अपनी इयत्ता खो बैठता है। इयत्ता खोने का डर उस भाषा और समाज को ज़्यादा होता है; जो जन सामान्य से कटने लगते हैं, अपना एक अलग कवच निर्मित कर लेते हैं। विश्व की समृद्ध भाषा संस्कृत विशिष्ट वर्ग तक सीमित होने के कारण बोलचाल में अपना अस्तित्व खो चुकी है, जबकि हिन्दी ने खड़ी बोली तथा अन्य बोलियों को साथ लेकर भारतीय समाज के बड़े वर्ग को अपने साथ बाँधा है। इसका मुख्य कारण है, हिन्दी की समाहरण-शक्ति, जो सात समन्दर पार भी अपना परचम फहराने का प्रयास कर रही है।

जब हम अच्छी लघुकथा की बात करते हैं, तो अच्छी भाषा की बात अनायास ही सामने आ जाती है। आज हिन्दी का समाज उत्तर भारत तक ही सीमित नहीं है, वरन् देश की सीमाएँ लाँघ चुका है। इसका कारण है, हिन्दी भाषा की समाहरण शक्ति। जिस प्रकार गंगा में अनेक जलधाराएँ आकर मिलती हैं और उसे और अधिक विशाल बना देती हैं, उसी प्रकार हमारे अंचल की अनेक बोलियों की शब्दावली, आचार, व्यवहार निरन्तर घुलते और समाहित होते जा रहे हैं। यही नहीं, आज़ादी के बाद स्वतन्त्र राष्ट्र बनने पर इसने दूसरे देशों की सरहदें भी पार कर ली हैं। वह समय नहीं रहा कि समुद्र-यात्रा करने पर समाज से निष्कासित कर दिया जाएगा। राजनीति, विज्ञान प्रौद्योगिकी, चिकित्सा, व्यापार एवं कम्प्यूटर क्रान्ति ने नए द्वार खोल दिए हैं। ऐसी स्थिति में भाषा -सुन्दरी को सात पर्दों के अन्दर छुपाकर नहीं रखा जा सकता। कथा की भाषा कभी शब्दकोशीय शब्दावली का अन्धानुकरण नहीं कर सकती। भाषा सीमाओं में नहीं बँधती। उसका सामाजिक संवाद और सम्प्रेषण में उपयोग, उसकी वास्तविक शक्ति है। भाषा जड़ नहीं होती; क्योंकि वह प्रवहमान समाज की जीवनी शक्ति है। एक बात और रेखांकित करने योग्य है कि शब्दकोशीय भाषा की एक सीमा है, वाक्-भाषा इससे कहीं और आगे है, कहीं अधिक बहुवर्णी और नवीनतम भावबोध की अनुचरी है। यह वही गोमुख है, जिसका जल शब्दकोश में आकर मिलता रहता है और उसको सागर बनाता है। अंग्रेज़ी भाषा में आज हिन्दी के कई हज़ार शब्दों का समावेश हो चुका है। भारत का 'गुरु' शब्द अब केवल भारतीय भाषाओं का शब्द नहीं बल्कि हज़ारों मील दूर अंग्रेज़ी के अखबारों में अग्रणी समाचार के शीर्षक की शोभा बढ़ा रहा है। विदेशी विज्ञापनों में बड़े-बड़े मॉल की दीवारों पर रोमन में लिखा मिलेगा-चलो फ्रेश्को, जिसमें चलो हिन्दी का शब्द लिया गया है। कनाडा में अनेक चलो फ्रेश्को मॉल मिल जाएँगे।

भाषा के सन्दर्भ में ज़रा कुछ स्थितियों पर गौर कीजिएगा-

1-छात्र देर से कक्षा में पहुँचा तो शिक्षक ने चुटकी बजाई और दरवाज़े की तरफ़ इशारा किया। छात्र चुपचाप बाहर निकल गया।

2-कई दिनों की भागदौड़ के बाद लूटमार करने वाला बदमाश आज पकड़ में आया। दारोगा जी के सामने लाया गया तो वे मुस्कराए- ''आइए हुजूर! आपका स्वागत है! आपके इन्तज़ार में तो हम पलक पाँवड़े बिछाए बैठे हैं''- फिर सिपाही की ओर मुड़े- ''जोधासिंह जी, अपने इन मेहमान की खातिरदारी में कोई कोर -कसर मत छोड़ना।''

3-ड्राइविंग लाइसेन्स न बन पाने से परेशान होकर जब युवक ने बाबू से कारण पूछा तो वह बत्तीसी निकालकर बेशर्मी से बोला - ''भैया हम तो गाँधी जी के फोटो के पुजारी हैं। बाकी बात आप जितना जल्दी समझ लोगे, उतना जल्दी काम हो जाएगा।''

पहले वाक्य में रेखांकित कथन शब्दकोश के अर्थ का नहीं; वरन् देरी से आने के परिणाम स्वरूप सांकेतिक अर्थ का द्योतक है।

-दूसरे वाक्य में दारोगा जी के कथन में स्वागत, पलक पाँवड़े बिछाए, मेहमान की खातिरदारी का शब्दकोशीय अर्थ नहीं, वरन् लाक्षणिक रूप में आए हैं।

-तीसरे वाक्य में- 'गाँधी जी के फोटो के पुजारी हैं।' का सांकेतिक अर्थ रिश्वत के रूप में आया है। गाँधी जी के फोटो छपे नोट में वह आज के समाज की गिरती हुई नैतिकता का परिचय देता है।

कथा में अभिप्रेत अर्थ कभी -कभी शब्द के पीछे बहुत सारी अर्थ सम्भावनाएँ एवं अर्थ छटाएँ छोड़ जाता है, जिसका अनुमित अर्थ रसज्ञ पाठक को सोचना पड़ता है। साहित्य की कोई भी विधा रचनाकार का 'वन वे ट्रैफ़िक' नहीं है। लघुकथा के लघु कलेवर और संश्लिष्ट शिल्प में यह और भी ज़रूरी हो जाता है कि रचना अपने पाठक के रूबरू हो सके। पाठकीय माँग पर कुछ भी परोसना या अपने हर लेखकीय अनुभव को या

किसी घटना को पाठक के सिर पर थोपना रचनाकार की सबसे बड़ी कमज़ोरी है। अच्छा लेखक पाठक की रुचि को व्यापक बनाने के साथ-साथ परिष्कृत भी करता है। सब जगह एक ही जैसी भाषा या शैली नहीं चल सकती। कमज़ोर भाषा के चलते शिल्पगत प्रयोग कथा को और कमज़ोर करते हैं। हाँ, अच्छी भाषा कमज़ोर कथ्य के लिए ऑक्सीजन का काम कर अनुप्राणित कर सकती है और कमज़ोर भाषा अच्छे-भले कथ्य को भी चौपट कर सकती है। कथ्य की माँग पर ही भाषा और शिल्प का निर्धारण करना चाहिए। किसी लेखक की देखा-देखी केवल प्रयोग के नाम पर नया शिल्प अपनाना खतरे से खाली नहीं है।

पात्र, पात्र की मन:स्थिति, परिवेश, स्तर, परिस्थिति बहुत सारे ऐसे कारक हैं, जो भाषा के स्वरूप का निर्धारण करते हैं। लघुकथा के बारे में मैं कहना चाहूँगा कि यह विधा भी कमज़ोर भाषा, सीमित अनुभव, घटना को ही कथा मान बैठना, उसे बिना तराशे अखबारी समाचार की तरह पेश कर देना या किसी प्रिय घटना को ही विषयवस्तु मान लेने वाले लेखकों के कारण और कुछ विधागत जानकारी से शून्य लोगों की वाहवाही में घिरकर सही उद्देश्य से भटक सकती है। शिल्प और शैली का नवीनतम प्रयोग करना लम्बे एवं गम्भीर भाषा-अध्ययन के पश्चात् ही आता है। भाषा-शिल्प में भाषा उस अश्वमेध के घोड़े की तरह है, जिसकी वल्गा थामने का मतलब है, पीछे आ रहे सैन्यदल से भी जूझना पड़ता है, अर्थात् वल्गा थामने वाले से अतिरिक्त शौर्य की उम्मीद की जाती है। इसी प्रकार लघुकथा में किसी नव्य प्रयोग का अपनाना ही महत्त्वपूर्ण नहीं है; बल्कि उसका निर्वाह भी आवश्यक है।

हर लघुकथा अपने कथ्यानुसार किसी न किसी पात्र पर ही टिकी रहती है। पात्र का क्षेत्र, शिक्षा, परिवेश भी उस कथा में बोलते हैं। किसी भी अच्छी कथा की मूल शक्ति है उसकी सम्प्रेषण शक्ति। उसे यह शक्ति भाषा की त्वरा से मिलती है, जिससे पात्र का कथन पूरी कथा का संवाहक बन जाता है। श्याम सुन्दर अग्रवाल की एक लघुकथा के कुछ वाक्य देखिए- गरीबों की एक बस्ती में लोगों को संबोधित करते हुए मंत्री जी ने कहा, ''इस साल देश में भयानक सूखा पड़ा है। देशवासियों को भूख से बचाने के लिए जरूरी है कि हम सप्ताह में कम से कम एक बार उपवास रखें।'' मंत्री के सुझाव पर लोगों ने तालियों से स्वागत किया।

''हम सब तो हफ़्ते में दो दिन भी भूखे रहने के लिए तैयार हैं। भीड़ में सबसे आगे खड़े व्यक्ति ने कहा। मंत्री जी उसकी बात सुनकर बहुत प्रभावित हुए और बोले,'' जिस देश में आप जैसे भक्त लोग हों, वह देश कभी भी भूखा नहीं मर सकता।

मंत्री जी चलने लगे जैसे बस्ती के लोगों के चेहरे प्रश्नचिह्न बन गए हों।

उन्होंने बड़ी उत्सुकता के साथ कहा, 'अगर आपको कोई शंका हो तो दूर कर लो।'

थोड़ी झिझक के साथ एक बुजुर्ग बोला, 'साब! हमें बाकी पाँच दिन का राशन कहाँ से मिलेगा ? '-(मरुस्थल के वासी)

नेता जी के इस सुझाव पर एक बुजुर्ग की यह शंका- ''साब! हमें बाकी पाँच दिन का राशन कहाँ से मिलेगा?'' भूख से पस्त बस्ती वालों की दारुण दशा का बहुत गहरा चित्रण कर देती है। यह एक संवाद उस भूख रूपी मरुस्थल के वासियों की पीड़ा बन जाता है, जो सदैव इससे जूझने के लिए अभिशप्त हैं। 'बोहनी: चित्रा मुद्गल' में भिखारी का संवाद झकझोर देने वाला है। इस संवाद की भाषा और चित्रण में शब्द प्रयोग पर ध्यान देना आवश्यक है-

''नई, मेरी माँ !'' वह दयनीय हो रिरियाया, ''तुम देता तो सब देता...तुम नई देता तो कोई नई देता...तुम्हारे हाथ से बोनी होता तो पेट भरने भर को मिल जाता...तीन दिन से तुम नई दिया माँ...भुक्का है, मेरी माँ!'' भीख में भी बोहनी। सहसा गुस्सा भरभरा गया। इस लघुकथा का शीर्षक 'बोहनी' आमफ़हम भाषा का शब्द है; लेकिन इस शब्द का अन्तरंग संसार बहुत व्यापक है।

-इन पंक्तियों में रिरियाया, नई देता, भुक्का है, मेरी माँ! सहसा गुस्सा भरभरा गया- जैसे शब्दों पर ध्यान देना जरूरी है। रिरियाया की ध्वन्यात्मकता, गुस्सा भरभरा गया का लाक्षणिक प्रयोग और नहीं के स्थान पर 'नई', भूखा के स्थान पर 'भुक्का' का प्रयोग किसी शब्दकोशीय या व्याकरणिक शुद्धता का मोहताज़ नहीं है। भाषा का यह सधा हुआ प्रयोग ही 'बोहनी' कथा को कई दशक से उत्कृष्ट लघुकथा की श्रेणी में रखे हुए है। भिखारियों पर लिखी गई सैकड़ों लघुकथाएँ अपने कमज़ोर शिल्प के कारण कालकवलित हो चुकी हैं।

इसी तरह की लघुकथा है- 'ठाकुर-हँसुआ-भात :चाँद मुंगेरी' की। इस लघुकथा के ये संवाद देखिए-

-अरे करमजला अब ही साल भर पहले जब बड़का ठाकुर मारा रहा, तो तू हुनका मरण-भोज में भात खाया कि नहीं ...बोल ?

-हाँ! खाया रहा. !. लेकिन अम्मा का ई दूसरा ठाकुर नहीं मरेगा ?

-मरेगा कैसे? बड़का को चोर मारा रहा...हिनका कौन मारेगा ?

क्षेत्रीय बोली के ये शब्द इस लघुकथा की धुरी हैं। बड़का, हुनका, ई, मारा रहा -हिनका शब्दों का परहेज़ करके यह लघुकथा लिखी जाती; तो उतना गहन प्रभाव न छोड़ती और न पात्रों की मन: स्थिति का परिचय ही दे पाती। आंचलिक शब्दावली इसकी शक्ति कई गुना बढ़ा देती है। 'करमजला' का सबसे बड़ा भाग्य है कि उसने सालभर पहले ही तो भात खाया था। विपन्नता की इससे बड़ी विडम्बना क्या हो सकती है ! वह भी कोई छप्पन भोग नहीं, वरन् साधारण -सा भोजन भात। उनके लिए वही सबसे बड़ा भोज है।

बच्चे की भाषा के बहुत सारे उदाहरण

लघुकथा- जगत् में मिल जाएँगे। 'बीमार-सुभाष नीरव' की लघुकथा का एक उदाहरण - बच्ची ने किताब में बने सेब के लाल रंग के चित्र को हसरत-भरी नज़रों से देखते हुए पूछा, ''मैं कब बीमाल होऊँगी, पापा ?'' इस वाक्य में -''मैं कब बीमाल होऊँगी, पापा?'' पाठक को भीतर तक बेध जाता है और परिवार की विपन्न स्थिति का अनायास ही आभास करा जाता है। बीमार के स्थान पर 'बीमाल' शब्द भीतर तक बेध जाता है।

'चटसार' : पंकज कुमार चौधरी' की इस लघुकथा में बच्चे देखते हैं कि सड़क से एक आदमी सूअर के बच्चे की पिछली टाँग बाँधकर लाठी से टाँगे हुए ले जा रहा था। सूअर का बच्चा (पाहुर) लगातार चिल्ला रहा था। स्कूल के सारे बच्चे खेलकूद छोड़कर उसके चिल्लाने का अनुमान लगाते हैं। एक बच्चे का यह कथन - अरे। वह डोम पढ़ाने के लिए उसे स्कूल ले जा रहा था। उसी डर से वह रो रहा था। एकाएक सब बच्चे चिल्ला पड़े-हाँ... हाँ सही बात! सही बात!!!

इस अन्तिम वाक्य में बच्चों का अनुमान और सहमति आतंक का पर्याय बन चुके हमारे स्कूलों (चटसार) की वास्तविकता का दर्शन कराती है, जहाँ पूरा शिक्षाशास्त्र एक हठयोग ही सिद्ध होता है। सूअर के बच्चे को पात्र के रूप में प्रस्तुत करना कथा को और भी धारदार बना देता है। शिक्षा व्यवस्था के लिए और किसी व्याख्या की ज़रूरत नहीं है।

अपनी लघुकथाओं में सुकेश साहनी ने भाषा और शिल्प के कई बार नए प्रयोग किए हैं; जो उनके गहन चिन्तन और विषयवस्तु पर उनकी मज़बूत पकड़ का सशक्त उदाहरण हैं-'बॉलीवुड डेज़' डायरी शैली में लिखी इनकी लघुकथा। सचमुच में भाषा और शिल्प एक चुनौती पूर्ण कार्य है। इस कथा में लेखक का जीवन अनुभव, अनुभव की वह विश्वसनीयता, जो उन्होंने मुम्बई में कई वर्ष रहकर अर्जित की है ; सब मिलकर लघुकथा का नया स्वरूप गढ़ते हैं। एक ओर पूरा विश्व विश्वग्राम (ग्लोबल विलेज) की ओर बढ़ रहा है, जिसमें नैतिक मूल्य जर्जर होते जा रहे हैं। बड़ी कम्पनियों की गलाकाट प्रतियोगिता उन्हें किसी भी हद तक गिरने के लिए तैयार कर रही है। इससे और आगे बढ़ें, तो आजकल चिट्ठी -पत्री का स्थान चैट रूम ले चुके हैं। विश्व स्तर पर आँधी की तरह एक अलग भाषा नहीं वरन् उसका स्थान लेने वाले परिवर्णी शब्द (ऐक्रॉनिम्स-acronyms) सामने आ रहे हैं। जैसे- BBN-Bye Bye Now ; FYI=For your information ; KIT=Keep in Touch आदि प्रयोग में लाए जा रहे हैं। यही नहीं, चैट रूम की सांकेतिक भाषा में नए प्रतिरूप इमोजी भी गढ़े जा चुके हैं। सांकेतिक चिह्नों के अलावा सैकड़ों संकेत गढ़े जा चुके हैं। मैं भाषा के किसी भ्रष्ट रूप का समर्थन न करके, यह आग्रह कर रहा हूँ कि अपनी आँख और अपना दिमाग खोलकर देखें -समझें। हम दुनिया से अलग नहीं हैं। लाठी के बल पर बहती नदी नहीं रोकी जा सकती। भाषा में आए बदलाव को महसूस ही नहीं वरन् स्वीकार भी करना पड़ेगा; चैटरूम में फेरी वाले की या सब्जीमण्डी की भाषा नहीं चलेगी और सब्जी मण्डी में विश्वविद्यालय के हिन्दी विभाग की भाषा या विवाह संस्कार की भाषा नहीं चलेगी। हमें कथ्य के अनुरूप अवसर, आवश्यकता और परिस्थिति को समझना होगा; इस सन्दर्भ में सुकेश साहनी की ही इस लघुकथा के अंश अपनी बात कह रहे हैं-

सुकेश साहनी

खेल (रेनड्रॉप के चैटरूम से)

मायसेल्फ : तुम्हारे ज़िस्म पर ये निशान?

रेनड्रॉप : दंगाइयों ने हमारे साथ सामूहिक बलात्कार किया, हमारे ज़िस्मों को बेरहमी से रौंदा गया, ये उन्हीं ज़ख्मों के निशान हैं।

मायसेल्फ : ओह!... तब तो तुमने उन्हें बहुत करीब से देखा है, वे कौन थे?

रेनड्रॉप : पहचानना मुश्किल था, उन्होंने एक ही साँचे में ढले मुखौटे पहन रखे थे।

मायसेल्फ : टेल मी एवरीथिंग अबॉउट दिस, हम इस स्टोरी को अपनी पार्टी की वेबसाइट के मुख्य पृष्ठ पर देंगे।

रेनड्रॉप : वाट इज द नेम ऑफ योअर पार्टी?

मायसेल्फ : सेकुलर 2002 डॉट काम।

रेनड्रॉप : ओके... आय एम रेडि फॉर नेट मीटिंग।

मायसेल्फ: लेकिन आगे बढ़ने से पहले- जस्ट फॉर फॉरमेलिटी- हमारा यह जानना ज़रूरी है कि तुम किस सम्प्रदाय से हो।

-जो इस लघुकथा की गहराई में नहीं जाना चाहेगा, जो साम्प्रदायिक दोगलेपन की कलुषित भावना को नहीं पकड़ना चाहेगा, वह चैट रूम की नग्नता को कोसकर रह जाएगा। उसको भाषा की समन्वित शक्ति का प्रयोग समझ में नहीं आएगा। वह इस लघुकथा की प्रभविष्णुता को भी हास्यास्पद जुमलों में समेटकर कम करने का प्रयास कर सकता है और खुद ही अपनी पीठ थपथपाने का काम करके वाह ! वाह! कर सकता है। साहित्य ऐसा मरीज़ नहीं है, जो परहेज़ी खाने पर निर्भर हो या जिसे डाइलिसिस पर ज़िन्दा रखा जा सके। प्यार, क्रोध, भय, दुविधा, सम्मान, अनुनय-विनय आदि की परिस्थिति में क्या हमारी भाषा एकरूपता से ग्रस्त होती है? क्या हम एक व्यक्ति होते हुए भी सबके साथ एक जैसा भाषा व्यवहार करते हैं। यदि ऐसा हुआ होता तो दैनन्दिन जीवन का काम तो चार सौ - पाँच सौ शब्दों से चला जाता है। चाँद-सूरज, बिजली, पानी, बादल, सागर के लिए कई- कई शब्द अकारण नहीं हैं। भाषा में लोकोक्तियाँ और मुहावरे हमारे इतिहास, भूगोल, कृषि-सभ्यता, धर्म, दर्शन, संस्कृति की सदियों से पाली- पोसी फसलें हैं। इस फ़सल को हम क्षेत्रीय सीमाओं से बाहर की जलवायु में भी प्रसारित कर रहे हैं। जहाँ करेला और नीम नहीं होंगे वहाँ, 'एक तो कड़वा करेला दूजे नीम चढ़ा', जहाँ कंगन नहीं होगा, वहाँ 'हाथ कंगन को आरसी' भी नहीं होगा। जिस प्रकार भाषा एक व्यवहार है, उसी प्रकार कथा भी एक व्यवहार है। वह रूखा-सूखा निबन्ध नहीं है; बल्कि समाज में निरन्तर हो रहे विकास-ह्रास सबकी प्राणवान् गाथा है।●

साइबरमैन : विभिन्न शैलियों का अद्भुत समागम

डॉ. सुषमा गुप्ता

साइबरमैन सुकेश साहनी का तीसरा लघुकथा संग्रह है। इस संग्रह की सभी लघुकथाएँ अपने आप में मील का पत्थर-सरीखी हैं। लघुकथा लिखने वालों के लिए सुकेश साहनी की लघुकथाएँ एक ट्यूटोरियल की तरह विभिन्न शैलियों का अद्भुत समागम तो होती ही हैं, विविध विषय और कथ्य को कलात्मक रूप में सम्प्रेषित करते अद्भुत शीर्षक उन्हें विशिष्ट बना देते हैं।

'अथ उलूक कथा' में 'उल्लू' प्रतीक (दिन में न देख पाने वाले) के माध्यम से आज के राजनेताओं की 'बाँटो और राज करो' की नीति का रोचक खुलासा हुआ है। 'ओएसिस' में बहुत ही रोचक ढंग से इस तथ्य को उजागर किया गया है कि कठोर से कठोर व्यक्ति के भीतर भी अतिसंवेदनशील दिल धड़कता है। 'बेटी का खत' में 'अपने' ही घर में असुरक्षित बेटियों के सच को बहुत ही मार्मिक अंदाज़ में पेश किया गया है। 'ईश्वर' लघुकथा बहुत गहराई लिये हुए है। इससे हमें लघुकथा-प्रस्तुति की ताकत का अहसास होता है, छोटी-सी लघुकथा में पूरे जीवन दर्शन के सत्य को समझा जा सकता है।

'राजपथ' लघुकथा ने तो चौंका दिया, उस लघुकथा के नीचे लिखा है कि वह अक्टूबर, 1998 में हंस में प्रकाशित हुई थी, पर पढ़कर ऐसा लगा-जैसे वह अभी ही कुछ साल पहले हुई एक घटना को केंद्र में रखकर लिखी गई हो। क्या इस तरह के राजनीतिक हथकंडे कभी नहीं बदलते! बार-बार दोहराए जाते हैं! ऐसी रचनाएँ कालजयी कहलाती हैं।

'मेढकों के बीच' का रचनाकाल 98 का है। देखकर हैरानी होती है कि किस प्रकार लेखक आने वाले संकट की आहट को महसूस कर लेता है। अच्छा लेखक भविष्यद्रष्टा भी होता है। यह लघुकथा इस बात का सबसे बड़ा प्रमाण है। पिछले दिनों हमारे देश में गाय को लेकर जो राजनीति हुई, जो मेढक उसमें शामिल हुए, उनसे

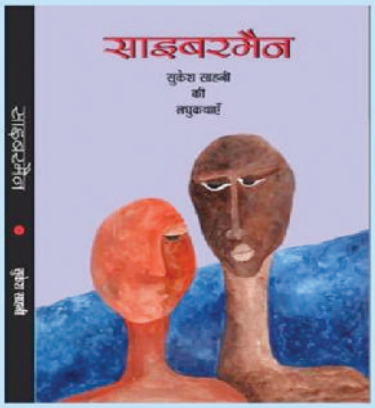

साइबरमैन

प्रसिद्ध कथाकार सुकेश साहनी की चर्चित लघुकथाओं का संग्रह

मूल्य : रु. 250/- पृष्ठ : 120

पाठकों के लिए 200 रुपये में डाक खर्च सहित उपलब्ध

प्रकाशक :
हिन्दी साहित्य निकेतन
16, साहित्य विहार, बिजनौर-246701
फोन : 783809032
ईमेल :
hindisahityaniketan@gmail.com
shodhdisha@gmail.com

सचेत करती है यह लघुकथा। खलील जिब्रान की रचनाओं की तरह ये लघुकथा सदैव प्रासंगिक रहेगी; क्योंकि न तो इंसान धर्म (वास्तव में सम्प्रदाय) से ऊपर उठकर मानवता की बात करना सीख पा रहा है, न ही इस चक्रव्यूह से बाहर निकल रहा है। ऐसी लघुकथाओं का लगातार लिखा जाना और पाठकों के बीच पहुँचना बहुत ज़रूरी है।

समाज में इतनी विसंगतियाँ हैं कि उनके चक्रव्यूह में हम स्वयं को असहाय महसूस करते हैं। 'बादल पानी और हवा' लघुकथा पढ़कर ऐसी ही बेबसी मुझे महसूस हुई। पर्यावरण असंतुलन पर केंद्रित सशक्त लघुकथा है।

इस लघुकथा-संग्रह में सुकेश जी की बहुत ही प्रचलित लघुकथा 'श्वान विलाप' भी है। जिसे जितनी बार भी पढ़ा जाए, उतनी बार ही हृदय द्रवित हो उठता है। समाज का एक वीभत्स चेहरा इस लघुकथा के माध्यम से हम सबके सामने है। दु:खद बात यह है कि हम अधिकतर लोग इसी समाज का हिस्सा हैं। हमारी आत्मकेंद्रित सोच पर करारी चोट करती है यह लघुकथा।

ऐसी ही एक दूसरी लघुकथा है 'खेल' जिसमें छुपी समाज की घिनौनी सच्चाई अंतर्मन को हिलाकर रख देती है। इस लघुकथा में विभिन्न राजनीतिक पार्टियों की 'छद्म धर्म निरपेक्षता' को बेनकाब किया गया है। प्रतीक-चयन में बहुत सजगता बरती गई हैं। यहाँ रेनड्रॉप (वर्षा की बूँद) से अच्छा कोई दूसरा प्रतीक नहीं हो सकता था।

'दाहिना हाथ' व्यंग्यात्मक लघुकथा है, इतनी रोचक कि अंत तक बाँधे रखती है। यहाँ 'दाहिना हाथ' कर्म का प्रतीक है। यह लघुकथा बहुत ही रोचक अंदाज़ में तथाकथित 'कर्महीन' लोगों की ओर ध्यान खींचती है, जो बैठे-बिठाए 'आम जन' का शोषण कर ठाठ का जीवन जीते हैं।

वर्ष 2005 में लिखी गई 'साइबरमैन' लघुकथा मानव-जीवन में 'साइबर दुनिया' के हस्तक्षेप को बहुत ही प्रभावी ढंग से पेश करती है। आज बढ़ते क्राइम, जो इंटरनेट की दुनिया से हम लोगों की ज़िन्दगी में प्रवेश कर गए हैं और हमारी मानसिकता को गहरा प्रभावित कर रहे हैं, उसका एक बहुत ही सशक्त चित्रण है। यह लघुकथा आपको बहुत देर आत्ममंथन में ले जाकर छोड़ देगी।

'बॉलीवुड डेज़' और 'उतार' डायरी- शैली में लिखी हुई बिल्कुल अलग तरह की लघुकथाएँ हैं। जहाँ 'बॉलीवुड डेज़' बढ़ती उम्र के बच्चों पर उनके आसपास के परिवेश पर किस हद तक असर डालता है यह दर्शाती है वहीं 'उतार' एक कुआँ खोदने वाले एक ऐसे मिस्त्री की डायरी है, जो आजीवन कुआँ खोदने का काम करते-करते

साल-दर-साल देख रहा है, किस तरीके से भूमिगत जल ख़त्म होता जा रहा है और अपने स्वार्थ के लिए लोग किस हद तक धरती का दोहन करने पर उतर आए हैं। जो ज़िंदगी भर दूसरों के लिए पानी तक पहुँचाने का ज़रिया बना रहा, वही अंत में एक-एक बूँद को तरस जाता है।

'कसौटी' लघुकथा मल्टीनेशनल कंपनियों के नाम पर उनकी आड़ में होने वाले दुराचार और उनके हथकण्डों को एक्सपोज करती है, जिसको सभ्य समाज का बड़ा वर्ग देखकर भी हमेशा से अनदेखा करता आया है।

'शिनाख्त' लघुकथा समाज का वह घिनौना चेहरा उघाड़ती है। जो इतना डरावना है कि रोंगटे खड़े हो जाएँ।

इस संग्रह की एक बेहद शानदार लघुकथा है 'कोलाज़'। आपके ज़ेहन को बुरी तरह झकझोर कर रख देगी। उपभोक्तावाद के इस दौर में इंसान की क्या हैसियत रह गई है! मानवीय मूल्यों की क्या धज्जियाँ उड़ गई हैं और इन सब की आड़ में एक आम इंसान को क्या-क्या सहना पड़ता है, उसका एक ऐसा चित्र है, जो वीभत्स है पर दुख की बात यह है कि वह उतना ही सच भी है।

'मास्टर' सुकेश जी की बहुत प्रचलित मार्मिक लघुकथा है। एक बार इसे पढ़ लेंगे, तो भूल नहीं सकेंगे। किसी चलचित्र की तरह वह मोची, जूता, मास्टर सब हमारी नज़रों के सामने जीवंत हो उठते हैं। बहुत ही भावपूर्ण लघुकथा है यह।

एक और लघुकथा 'आधी दुनिया' बिल्कुल अलग शैली की लघुकथा है। कालखंड दोष जो लघुकथाओं में गिनाते रहते हैं, उनको ऐसी लघुकथाओं से सीखना चाहिए कि किस तरीके से सिलसिलेवार संवाद बदलते गए और पूरा का पूरा एक वन, एक लघुकथा में समेट दिया गया। इस लघुकथा का क्राफ्ट बेहद काबिल-ए-तारीफ है।

'सेल्फी', 'मसिजीवी' और 'ब्रेक प्वाइंट' समाज में फैली कुरीतियों विसंगतियों को उजागर करती हुई मार्मिक लघुकथाएँ हैं।

'पहचान' भी एक अचंभित करती लघुकथा है, जो हमारा ध्यान इस तरफ़ आकर्षित करती है, जो गलती आम ज़िंदगी में हम सब करते हैं; पर हमारा ध्यान कभी इस तरफ़ नहीं जाता। बहुत-सी चीजों के सही नाम हम पूरी तरह से भूल बैठे हैं और प्रचलित नामों में इतना अटक गए हैं कि उनके सही अर्थ हमारे मेमोरी मकैनिज्म से लगभग लुप्त हो चुके हैं।

'अच्छाई' लघुकथा, अलग कलेवर की लघुकथा है। आम-सी लगने वाली बात किस क़दर गहरे मन पर असर डालती है कि उससे इस तरह की मारक लघुकथा बन पड़े, यह ऐसी लघुकथा पढ़कर ही जाना जा सकता है।

संग्रह की आखिरी लघुकथा ने तो मुझको बेहद भावुक कर दिया। माँ, ईश्वर का दिया हुआ सबसे बड़ा वरदान है। माँ जीते जी ही नहीं, मरने के बाद भी अपने बच्चों की सुरक्षा हेतु तत्पर रहती है। बहुत ही सुंदर और संवेदनशील लघुकथा है 'चिड़िया'। जीवन के प्रति सकारात्मक सन्देश, इस लघुकथा का प्राण तत्त्व है।

यह कहना बिल्कुल अतिशयोक्ति न होगी कि लघुकथा में जितने प्रयोग संभव हैं, इस लघुकथा-संग्रह को पढ़कर वे सब सीखे जा सकते हैं।●

चर्चित -संग्रह

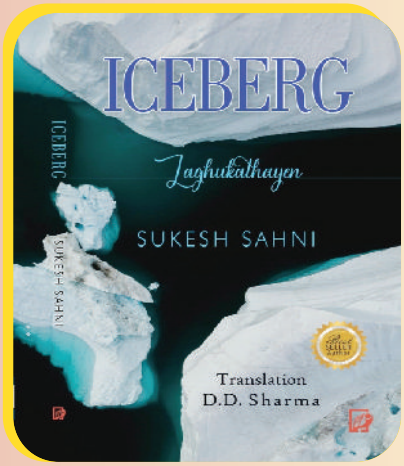

ICEBERG-सुकेश साहनी, अंग्रेज़ी-अनुवादः डी. डी. शर्मा, अमेजॉन और फ़िलप्कार्ट पर भी उपलब्ध

प्रकाशक : P.P. PUBLISHING PVT. LTD. INDIA. 3/186 RAJENDRA NAGAR, SECTOR-2, SAHIBABAD, GHAZIABAD 201005. CONTACT –+91-7827310876

pravasiprempublishing@gmail.com

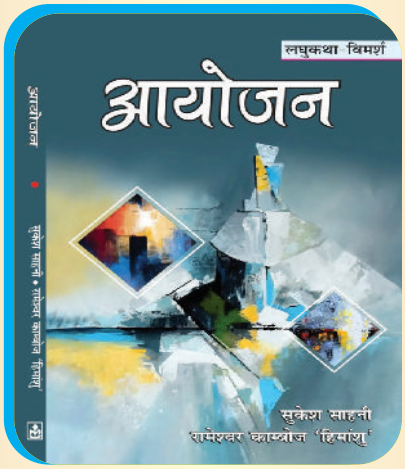

आयोजन- लघुकथा-विमर्श (बरेली गोष्ठी-11 एवं 12 फ़रवरी 1989) का 32 वर्ष बाद 2021 में द्वितीय संस्करण, सुकेश साहनी-रामेश्वर काम्बोज 'हिमांशु', पृष्ठ;108, मूल्य;220 रुपये, अयन प्रकाशनः 1/20 , महरौली , नई दिल्ली-110039

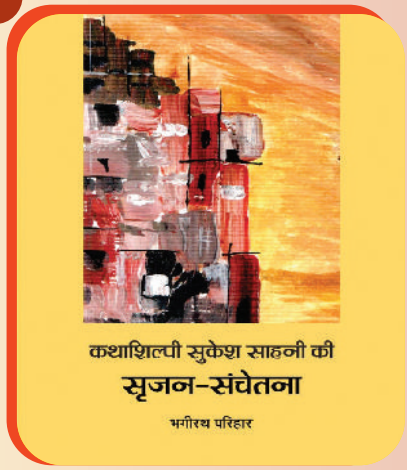

3-कथाशिल्पी सुकेश साहनी की सृजन-संचेतना(समालोचना) : भगीरथ परिहार

मूल्य : 320 रुपये (सज़िल्द), पेपरबैक :200 पृष्ठ , मूल्य : 200/, संस्करण : 2019, बोधि प्रकाशन सी-46, सुदर्शनपुरा इण्डस्ट्रियल एरिया एक्स, नाला रोड, गोदाम जयपुर

1-कबाड़

सुभाष नीरव

गढ़वाली अनुवाद: डॉ. कविता भट्ट

नौना थैं तीन कमरों कु फ्लैट मिली छौ। मजदूरु क दगड़ा मजदूर बण्यां किशन बाबू खुशी-खुशी सामान थैं ट्रक बिटि उतरौंणा छा। सैडी उम्र किराया क मकानू म गळै यालि छै। कुछ बि हो, अप्वी गरीबीम रैक नौना थैं ऊँची शिक्षा दिलाण कु फल ईश्वर न वूं थैं दे-दे छौ। नौंन्नु सीधु अफसर बणि अर बणदु ई कम्पनी की तरफ सि रौणा वास्ता इतगा बड़ू फ्लैट वे थैं मिली गे।

नौनु सीधु ऑफिस चलि गे छौ। किशन बाबू अर वेकी ब्वारी द्वी मजुरू की मदत सि सैरू सामान फ्लैट म लगवाणा छा।

द्वफरा माँ खाणों का बगत पर नौनु आई त देखिक दंग रै गे। सरू सामान ठिक ढंग से सजै-धजै क रखवये गे छौ। एक बैडरूम, दूसरू ड्राइंगरूम अर तीसरू पिताजी अर मेमानू क वास्ता। वाह!

नौना न पूरा फ्लैट कु मुआयना कैरि। बड़ू-सी रूसाड़ु, रूसाड़ा क दगडा बड़ु-सि एक स्टोर, जै माँ फालतू झबाड़-कबाड़ भर्यूं छौ। वेन ध्यान से देखि अर सोचण लगी गे। वेन अपणी घौरवाळी दुसरी तरफां लि जैक समझाई-देख, स्टोर बिटि सैरू झबाड़-कबाड़ भैर फिंकवे द्या। वख त एक चारपै भौत आराम से ऐ सकदि। इन कैर, वुख अच्छी तरौ सफै करवैक पिताजी की चारपै उखी लगवे दे। तीसरा कमरा थैं मि अपडु रीडिंग-रूम बणै द्योलु।

रातौ थैं स्टोर म बिछिं चारपै माँ पोड़दि बगत किशन बाबू थैं अपड़ा बुड्या सरील बिटि पैली बार कबाड़-जनि बदबू औणी छै।●

2-काग-भगोड़ा/ ध्राह्

रामेश्वर काम्बोज 'हिमांशु'

हिमाचली अनुवाद: अशोक दर्द

किसान बड़ा परेशान होई गिया। हरिया भरिया फसला गी नील गौआँ अते सूअर तबाह करी जंदे। इनाँ छा बचदी फसल पकदी ताँ चिड़ियाँ चुगी जंदियाँ। किसाने लम्मे बांसे पुर ध्रा टंगी करी बी दिक्खी लिया। चिड़ुआँ पखेरुआँ जानवराँ पुर कोई असर नहीं होया।

किसान इक्क दिन शहर था गिया दा। भीड़ कुसे नेते दा पुतला जलाणा चांह्दी थी। पुलसा लाठीचार्ज करीता। पुतला छड्डी करी भीड़ नह्ठी गेई।

पुलसा वाले़याँ दी खुशामद करी ने किसान उस पुतले ई लेई आया अते अणी करी अपणे खेतरे च टँगी दित्ता।

हूण डरे दे मारे कोई बी जीव जंतु खेतराँ पास्से आणे दी हिम्मत नी करदा।।●

3-कसूर

शिवचरण सरोहा

गढ़वाली अनुवाद: डॉ. कविता भट्ट

वसंत कु एक सुन्दर दिन छौ। एक छोटू बच्चा प्रभात अपड़ी कक्षा म बैठ्यूं छौ। सब्बी बच्चा अपड़ी-अपड़ी कॉफी म सुलेख लिखणा छा। बच्चा भौत ध्यान सी मोरी का भैर बगीचा थैं देखणु छौ।

''लिखणु किले नि?'' गुरूजी की भारी आवाज़ कि लाठी वेकी पीठ पर पड़ी. लाठी पड़दु इ वु तिलमिलै गे। आँखों माँ पाणी ऐ गे। भैर बगीचा म फूल पर बैठीं तितली उड़ गे।●

4-फ़ादर्स डे / बबा कौ दिनु

पवन जैन

ब्रज अनुवाद: रश्मि विभा त्रिपाठी

स्कूल मैं लला के दाखिले कौ फारम भरत भए प्राचार्य नैं पूछी, ''लला के बबा कौ नाँउ?''

''काहे, का अटक परी बबा के नाँउ की?''

बिंग्य तैं, ''तौ पतौ नाहिं?''

''पतौ काहे नाहिं, मैया कौ ई लला के बबा कौ नाँउ पतौ होवतु ऐ।''

''तौ फिरि लिखवाउ, अकि पक्कौ नाहिं।''

''रावरी बुधि रावरी पूछन माँझ दीसि रई ऐ।''

अकझकात भए, ''नाहिं, मोहि कोऊ लाग नाहिं। आप बस्सि जाके बबा कौ नाँउ लिखवाउ।''

''काहे लिखाऔं? आप मोरौ नाँउ लिखउ।''

''रावरौ नाँउ मैया के कॉलम बीचि आइ गयौ। बबा के नाँउ कौ ऊ कॉलम ऐ।''

''जु जिम्मेदारी जनि उठाइ सकतु, बाकौ नाँउ काहे?''

''नाते मैं बबा कौ नाँउ लिखिबौ आवस ऐ। तौ पतौ जनि लिखि दैंऔं।''

अनखाइ, ''पतौ जनि काहे लिखिहौ, जनमिबे बारौ बापु ई बापु नाहिं होवतु। आप दोऊ कॉलमनि बीच मोरौ ई नाँउ लिखि लेउ।''

''हओ आछौ।''

''जिम्मेदारी उठाइबे बारौ ई बाप होवतु ऐ। मोहि गरब ऐ, हौं ई जाकी मइया हौं, हौं ई बापु।''●

5-पेट का सवाल

सतीश राठी

छत्तीसगढ़ी अनुवाद:दीपाली ठाकुर

''कइसे बे! बबा के माल समझे हस का?'' गिट्टी म डामर मिलावत टूरा के गाल म थपरा देवत ठेकेदार ह बमकत कहिस।

''कमती डामर म बने पकड़ात नइ हे, ठेकेदार साहब। बने सड़क बनय सोच के डामर ल थोकिन बने डारत हंव।'' रिरियावत टूरा ह कहिस।

''मोर काम म तें नवा आये हस, बेटा। अतका डामर म त होगे ठेकेदारी, तैं मोर भट्ठा बइठारबे।'' तहां समझावत कहिस ''ये डामर में बाबू, इंजीनियर, अधिकारी, मंत्री सबके बाँटा हे बेटा। खराब सड़क के दचका महू ल लगथे।''

''चल! ए मा अउ बजरी डार।'' मने मन म लागत के गुना-भाग करत ठेकेदार ह कहिस। टूरा ह बुताये मन ले ठेकेदार के कहे अनुसार करे लगिस। ओखर ओरमे मुहू ल देख के ठेकेदार बोलिस, ''सबो के पेट हे बेटा। बने सड़क बना देबे अउ छै महीना में गड्ढा नइ परिस त, इंजीनियर साहब ए दारी के ठेका ला दूसर ठेकेदार ल दे देही। इही गड्ढा ह तो सबो के पेट ल भरत हे बेटा।''●

डॉ. कविता भट्ट कश्मीर विश्वविद्यालय, श्रीनगर में दार्शनिक लेखन हेतु पुरस्कृत

अखिल भारतीय दर्शन परिषद्, भारत का 68 वां वार्षिक अधिवेशन कश्मीर विश्वविद्यालय, श्रीनगर, कश्मीर के भव्य प्रेक्षागृह में आयोजित किया गया। इस अधिवेशन में सम्पूर्ण भारतवर्ष के विभिन्न प्रदेशों के दर्शन जगत से जुड़े लगभग चार सौ शिक्षाविदों, आचार्यों और अध्येताओं ने प्रतिभाग किया। इस अधिवेशन के उद्घाटन सत्र में परिषद् द्वारा दर्शनशास्त्र के क्षेत्र में लेखन इत्यादि उल्लेखनीय कार्य करने वाले कुछ शिक्षाविदों को प्रतिष्ठित पुरस्कार और सम्मान प्रदान किए गए।

वर्ष 2023 हेतु ख्यातिलब्ध प्रो. सोहन राज तांतेड़ दर्शन पुरस्कार हे. न. ब. गढ़वाल विश्वविद्यालय के दर्शनशास्त्र विभाग में सहायक आचार्य सुविख्यात लेखिका डॉ. कविता भट्ट को प्रदान किया गया। ज्ञात हो कि योग, दर्शन और साहित्य के क्षेत्र में 'शैलपुत्री' नाम से ख्याति प्राप्त डॉ. भट्ट को यह पुरस्कार उनकी कृति 'घेरंड संहिता में षट्कर्म, योगाभ्यास और योग' के लिए दिया गया। लगभग साढ़े तीन सौ पृष्ठों की यह पुस्तक भारतवर्ष के सबसे पुराने प्रकाशकों में से एक चौखंभा संस्कृत प्रतिष्ठान, दिल्ली से प्रकाशित है। यह पुरस्कार प्रो. नीलोफर खान, कुलपति, कश्मीर विश्वविद्यालय, प्रो. जटाशंकर, अध्यक्ष, अखिल भारतीय दर्शन परिषद्, प्रो. ज्योति स्वरूप दुबे, सचिव, अखिल भारतीय दर्शन परिषद् , प्रो. मेराज अहमद, विभागाध्यक्ष, संस्कृत विभाग, प्रो. मठवाले इत्यादि दर्शनशास्त्रियों और शिक्षाविदों के द्वारा दिया गया। इस अवसर पर दर्शन और शिक्षण जगत से जुड़ी विभूतियाँ, शोधार्थी और अध्येता उपस्थित रहे।

ध्यातव्य है कि 'शैलपुत्री' नाम से ख्यातिलब्ध डॉ. कविता भट्ट लगभग विगत 25 वर्षों से भारतीय दर्शन, योगदर्शन, गीतादर्शन, महिला सशक्तीकरण और हिन्दी साहित्य पर केंद्रित लेखन और दर्शन के गूढ़ विषयों के लोकव्यापीकरण हेतु समर्पित रही हैं; जो एक गंभीर लेखिका, प्रखर व्याख्याता और शिक्षाविद् हैं। डॉ .भट्ट की विभिन्न विधाओं पर केंद्रित 27 पुस्तकें, अनेक शोध पत्र, लोकप्रिय आलेख सहित सैकड़ों साहित्यिक रचनाएँ और कविताएँ प्रकाशित हैं। डॉ. भट्ट की रचनाएँ देश विदेश की अनेक भाषाओं में अनूदित हो चुकी हैं। ज्ञात हो कि डॉ. कविता भट्ट को अखिल भारतीय साहित्य अकादमी पुरस्कार साहित्य अकादमी, मध्य प्रदेश और हिंदी चेतना सृजन सम्मान, केनेडा सहित अनेक अंतरराष्ट्रीय और राष्ट्रीय पुरस्कार/सम्मान पूर्व में ही प्राप्त हो चुके हैं। अनेक वैदेशिक पटलों सहित भारतीय उच्चायोग, अनेक मंत्रालयों, साहित्य अकादमियों और शिक्षण संस्थानों इत्यादि द्वारा डॉ. भट्ट को निरंतर व्याख्यान हेतु आमंत्रित किया जाता है।

डॉ. कविता भट्ट ने इस पुरस्कार के लिए अखिल भारतीय दर्शन परिषद् के समस्त पदाधिकारियों और निर्णायक मंडल को धन्यवाद ज्ञापित किया। पुरस्कार से विश्वविद्यालय परिवार और उनके प्रशंसकों में हर्ष की लहर है।

कश्मीर से लौटकर उन्होंने बताया कि परिषद् के द्वारा 10 से 12 जून, 2024 तक आयोजित इस अधिवेशन में कश्मीर विश्व-विद्यालय की कुलपति प्रो. नीलोफर खान ने विश्वविद्यालय में दर्शनशास्त्र विभाग खुलवाने की भी घोषणा की और बताया कि इस सत्र से इस विभाग में पढ़ाई आरम्भ हो जाएगी। उन्होंने यह भी कहा कि विद्यार्थियों को तार्किक शक्ति के विकास, प्रतियोगी परीक्षाओं तथा नैतिक उत्थान हेतु दर्शनशास्त्र का अध्ययन अवश्य करना चाहिए। विश्वविद्यालय में दर्शनशास्त्र विभाग खुलवाने के लिए अखिल भारतीय दर्शन परिषद् के पदाधिकारियों का विशेष अनुरोध और प्रयास फलित होने से परिषद् ने प्रसन्नता व्यक्त की।●

महत्त्वपूर्ण पुस्तकें

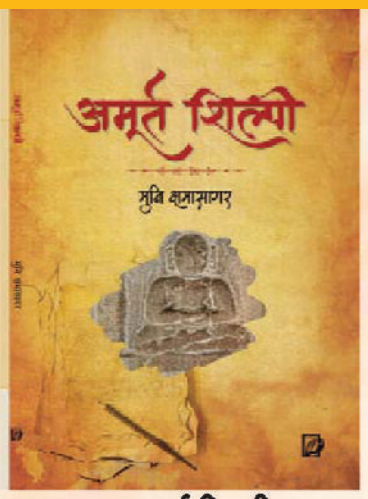

अमूर्त-शिल्पी

पृष्ठ : 126, मूल्य : 18 रुपये, भाषा : हिंदी

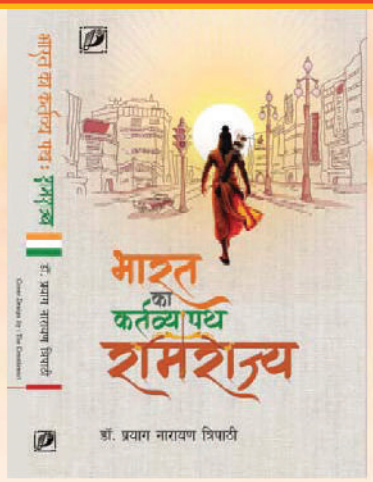

भारत का कर्तव्य पथ : रामराज्य

पृष्ठ : 290, मूल्य : 440 रुपये, भाषा : हिंदी

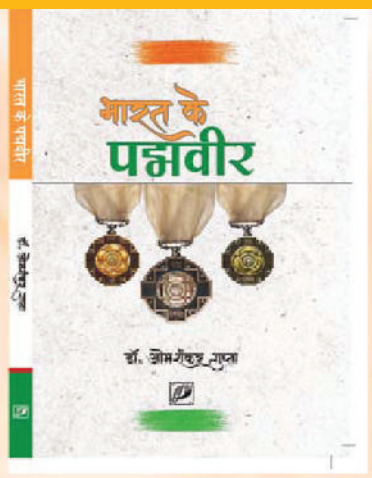

भारत के पद्मवीर

पृष्ठ : 162, मूल्य : 340 रुपये, भाषा : हिंदी

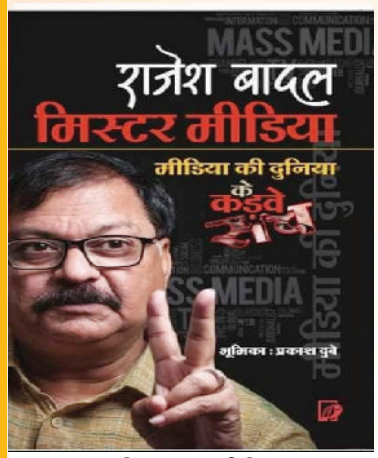

मिस्टर मीडिया

पृष्ठ : 350, मूल्य : 650/- रुपये

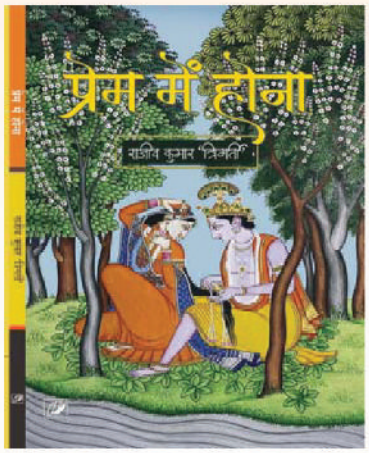

प्रेम में होना (कविता संग्रह),

पृष्ठ : 110, मूल्य : 205 रुपये, भाषा : हिंदी

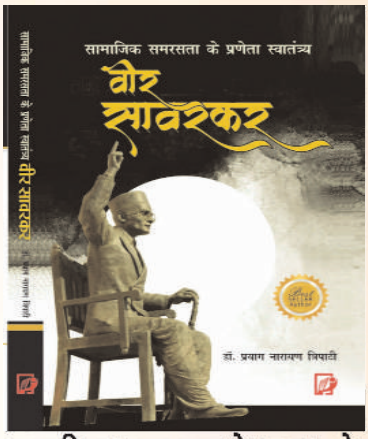

सामाजिक समरसता के एक प्रणेता स्वातंत्र्य वीर सावरकर

पृष्ठ : 242, मूल्य : 400 रुपये, भाषा : हिंदी

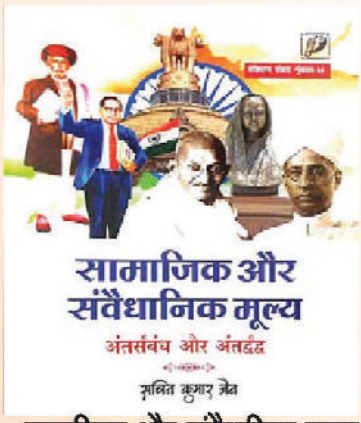

सामाजिक और संवैधानिक मूल्य
अंतर्संबंध और अन्तर्द्वन्द्व

पृष्ठ : 114(रॉयल साइज़), मूल्य : 315 रुपये

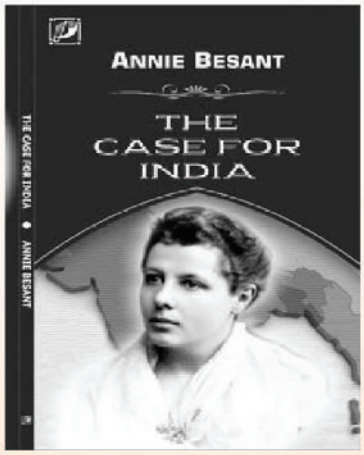

Annie Besant-Intro

Pages : 64, Price : 150, Language : English

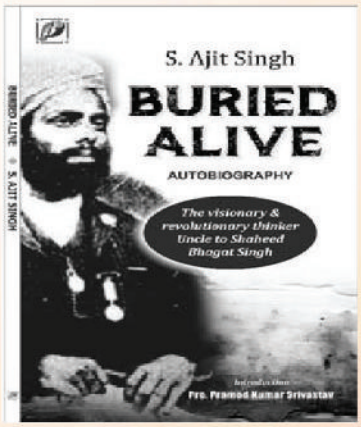

S. Ajit Singh's Autobiography (Buried Alive)

Page : 110 , Rs. 270.00, Language : English

प्रकाशक : P.P. PUBLISHING PVT. LTD. INDIA. 3/186 RAJENDRA NAGAR, SECTOR-2, SAHIBABAD, GHAZIABAD 201005. CONTACT - +91-7827310876
Mail – pravasiprempublishing@gmail.com

रामेश्वर काम्बोज 'हिमांशु' की प्रमुख पुस्तकें

रामेश्वर काम्बोज 'हिमांशु'
पृष्ठ:144 मूल्य:400 रुपये, सं:2023

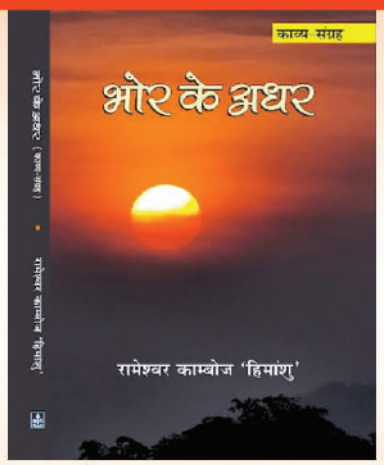

रामेश्वर काम्बोज 'हिमांशु'
पृष्ठ: 120 मूल्य: 260, रुपये, सं: 2022

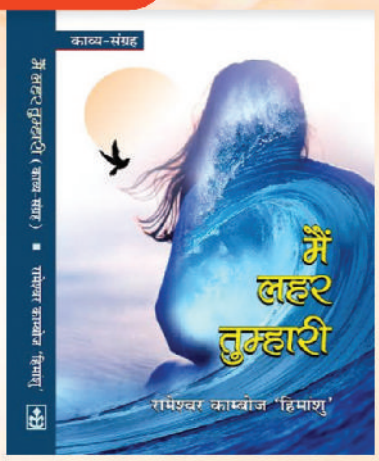

रामेश्वर काम्बोज 'हिमांशु'
पृष्ठ: 96, मूल्य: 240 रुपये, सं: 2022

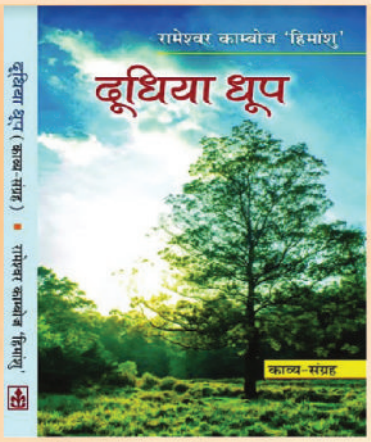

रामेश्वर काम्बोज 'हिमांशु',
पृष्ठ:136, मूल्य: 340 रुपये, सं: 2022

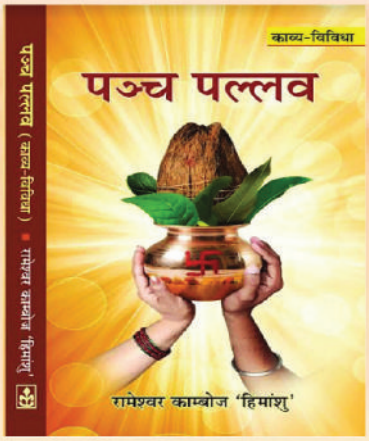

रामेश्वर काम्बोज 'हिमांशु',
पृष्ठ:104, मूल्य: 260 रुपये, सं: 2022

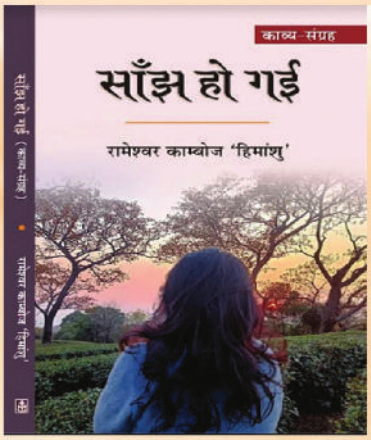

रामेश्वर काम्बोज 'हिमांशु',
पृष्ठ:120, मूल्य: 300 रुपये, सं: 2022

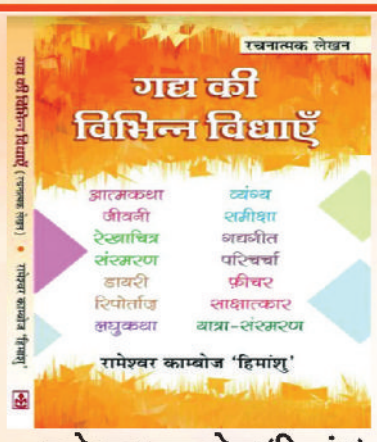

रामेश्वर काम्बोज 'हिमांशु'
मूल्य : 260 रुपये, पृष्ठ: 120, सं: 2022

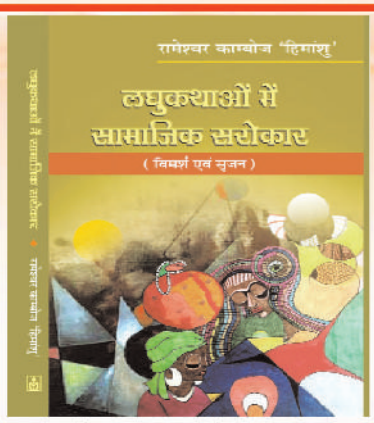

रामेश्वर काम्बोज 'हिमांशु'
मूल्य : 400 रुपये, पृष्ठ :144, सं: 2023

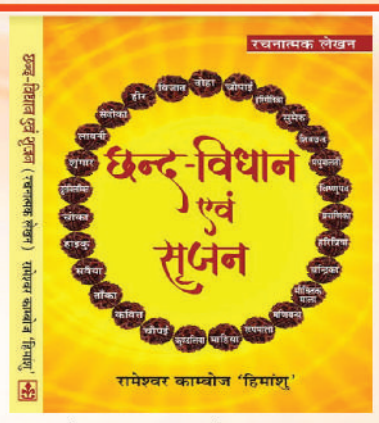

रामेश्वर काम्बोज 'हिमांशु'
मूल्य : 220 रुपये, पृष्ठ: 96, सं: 2022

अयन प्रकाशन
साहित्य संस्कार के 43 वर्ष

जे/19, गली नं 39 राजापुरी उत्तम नगर, नई दिल्ली- 110059
सम्पर्क : ayanprakashan@gmail.com
मोबा-9211312372

डॉ.कविता भट्ट की प्रमुख पुस्तकें

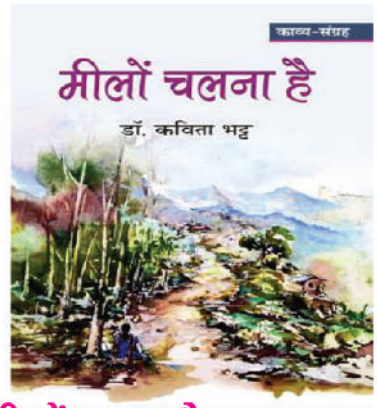

मीलों चलना है (काव्य-संग्रह)
राघव पब्लिकेशन, नई दिल्ली,
संस्करण: 2021, पृष्ठ: 144,
मूल्य: 200 रुपये

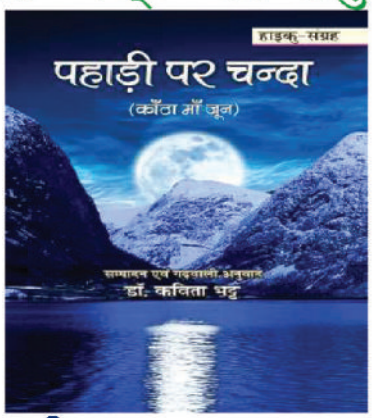

पहाड़ी पर चन्दा (हाइकु-संग्रह)
अयन प्रकाशन, 1/20, महरौली नई दिल्ली-110030, संस्करण: 2021,
पृष्ठ:168 मूल्य: 3400 रुपये

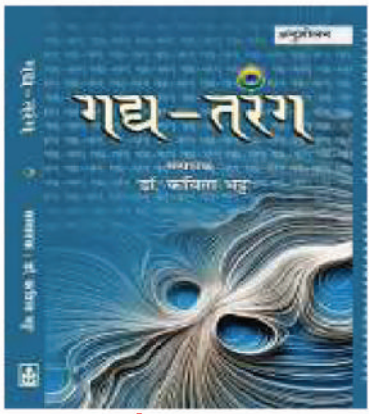

गद्य-तरंग (अनुशीलन)
अयन प्रकाशन, 1/20, महरौली नई दिल्ली-110030, संस्करण: 2021,
पृष्ठ:184 मूल्य: 380 रुपये

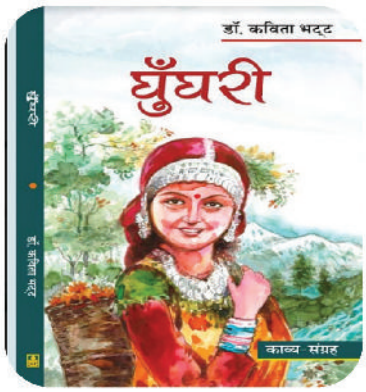

घुँघरी (काव्य-संग्रह)
पृष्ठ ;128, मूल्य: 260 रुपये, संस्करण: 2018,
अयन प्रकाशन ,1/20, महरौली
नई दिल्ली-110030

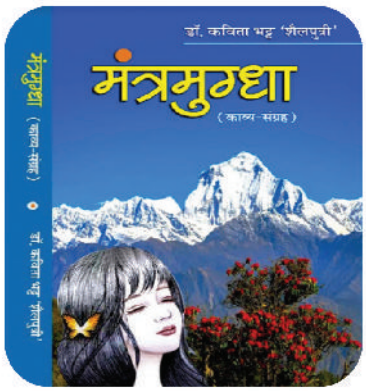

मन्त्रमुग्धा (काव्य-संग्रह)
डॉ कविता भट्ट 'शैलपुत्री';
पृष्ठ: 104; मूल्य: 240 रुपये; संस्करण:2022; ISBN -978-93-94320-01-7 प्रकाशक; शैलपुत्री (इंप्रिण्ट),
जीएसएफ़ नेटवर्क प्राइवेट लिमिटेड नई दिल्ली

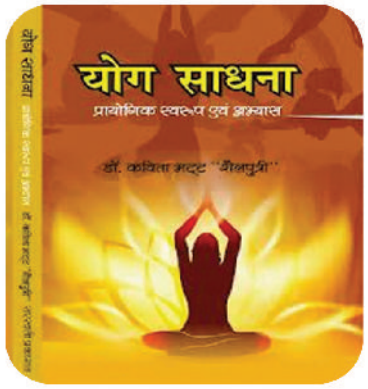

योग-साधना
सरस्वती प्रकाशन4760-61/63,अंसारी रोड,
दरियागंज, नई दिल्ली-110002,पृष्ठ : 264,
मूल्य : 225 रुपये, वर्ष : 2019

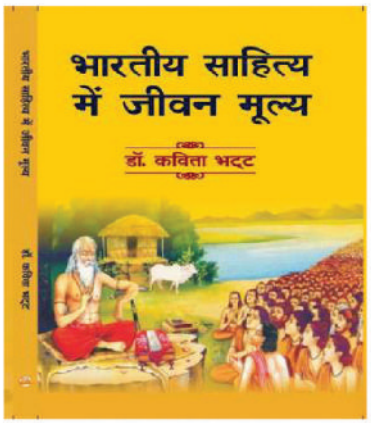

भारतीय साहित्य में जीवन मूल्य
डॉ. कविता भट्ट,
पृष्ठ:128, मूल्य:350 रुपये;
संस्करण:2019, राघव पब्लिकोंस,
नई दिल्ली-110083

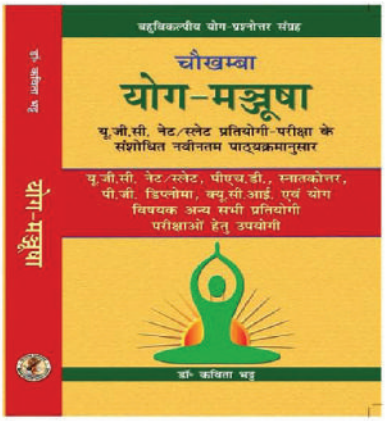

चौखम्बा योग मञ्जूषा
चौखम्बा सुरभारती प्रकाशन,
वाराणसी-221001, संस्करण:
2019, पृष्ठ:458 मूल्य: 400 रुपये
ISBN 978-93-85679-68-1

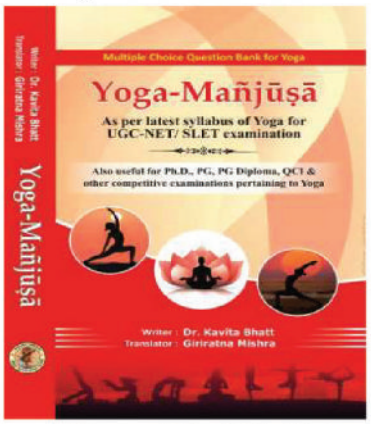

Yoga-Mañūjṣhā (English)
Chaukhambha Surbharti prakashan, Varanasi-221001
Pages 458, Price ₹495, Year 2020
ISBN 978-93-86554-89-5